1998 से निरंतर प्रकाशित

RNI. No. MPHIN/2017/73838

ISSN 2581-446X

वर्ष-5, अंक-4, फरवरी-मार्च 2022, ₹50/-

आज़ादी का अमृत महोत्सव

सांस्कृतिक यात्रा के 25 वर्ष...

# कला समय

कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

## कला समय का रजत वर्ष विशेषांक

संपादक : भँवरलाल श्रीवास

# प्रकृति की सेवा का संकल्प

## वृक्षा रोपण- स्मार्ट पार्क भोपाल 25 फरवरी 2022

**ध्रुपद संस्थान, कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा समिति, काकली संगीत संस्था द्वारा पौधा रोपण**

पद्मश्री सम्मान से सम्मानित वरिष्ठ ध्रुपद गायक श्री उमाकान्त गुन्देचा, श्रीमती भूरी बाई, आदिवासी कलाकार, शिखर सम्मान से सम्मानित पं. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग' अध्यक्ष कला समय संस्था, कला समय पत्रिका के संपादक तथा संस्था कला समय संस्थापक सचिव श्री भँवरलाल श्रीवास द्वारा पौधारोपण करते हुए।

कला समय पत्रिका का अवलोकन करते हुए श्री शिवराज सिंह चौहान मुख्यमंत्री मध्य प्रदेश शासन

कला समय पत्रिका के संपादक
भँवरलाल श्रीवास एवं
पं. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'
अध्यक्ष, संस्था कला समय
स्मार्ट पार्क, भोपाल में
पौधारोपण करते हुए

कला समय पत्रिका के संपादक भँवरलाल श्रीवास एवं संस्थापक सचिव कला समय संस्था, पद्मश्री उमाकान्त गुंदेचा, पद्मश्री भूरीबाई, पं. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग' अध्यक्ष, संस्था कला समय पौधारोपण करते हुए

**1998 से निरंतर प्रकाशित**
RNI NO. MPHIN/2017/73838

कला समय पत्रिका अब वेबसाइट पर उपलब्ध
**www.kalasamaymagazine.com**

ISSN 2581-446X
(पंजीयन पूर्व प्रकाशित अंक, वर्ष सम्मिलित)
**(वर्ष : 20+05=25) पूर्णांक-115**
**वर्ष-5, अंक-4, फरवरी 2022-मार्च-2022, मूल्य : ₹50/-**

माधवराव सप्रे समाचार पत्र संग्रहालय एवं शोध संस्थान, भोपाल म.प्र. द्वारा 'रामेश्वर गुरू सम्मान' से पुरस्कृत
श्री भारतेन्दु समिति कोटा (राज.) द्वारा 'साहित्यश्री' सम्मान एवं
साहित्य मण्डल श्री नाथद्वारा (राज.) द्वारा 'सम्पादक रत्न' सम्मान से सम्मानित
म.प्र. हिन्दी साहित्य सम्मेलन भोपाल (म.प्र.) द्वारा उर्मिला तिवारी स्मृति 'सप्तपर्णी सम्मान' से पुरस्कृत
इन्टरनेशनल ध्रुवपद-धाम ट्रस्ट, जयपुर (राज.) द्वारा 'लाइफ टाइम अचीवमेंट' सम्मान

# कला समय

## कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका

**संरक्षक**
नर्मदा प्रसाद उपाध्याय
डॉ. महेन्द्र भानावत
पं. विजय शंकर मिश्र
श्यामसुंदर दुबे
पं. सुरेश तातेड़
कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय

**परामर्श**
लक्ष्मीनारायण पयोधि
डॉ. नारायण व्यास
ललित शर्मा
प्रो. सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट 'रसरंग'
प्रो. सुधा अग्रवाल

**सांस्कृतिक प्रतिनिधि**
चेतना श्रीवास

**वेबसाइट प्रबंधन**
मयंक अग्रवाल

**कानूनी सलाहकार**
जयंत कुमार मेढ़े (एडवोकेट)

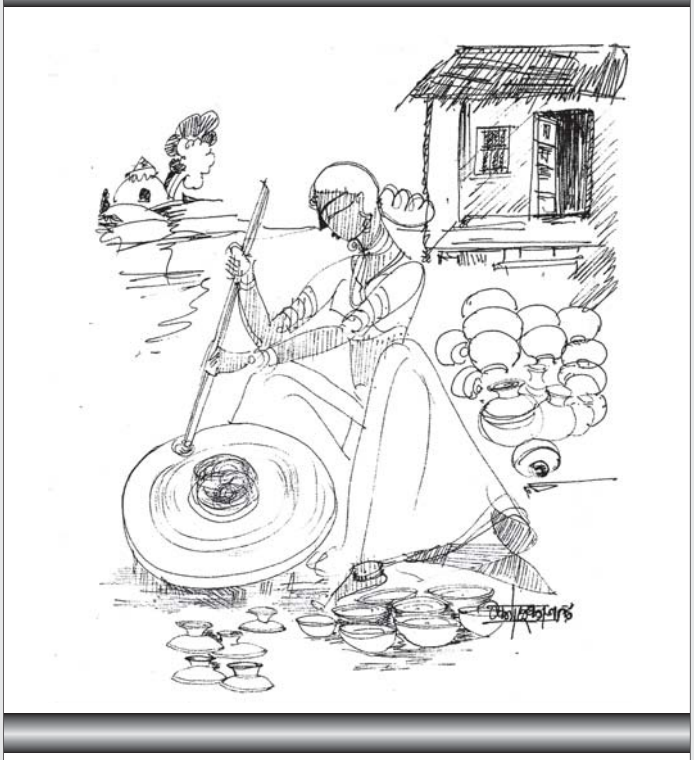



**रेखांकन : मनोहर काजल**

**संपादक**
भँवरलाल श्रीवास

**सलाहकार संपादक**
डॉ. मुकेश कुमार मिश्रा

**सह संपादक**
डॉ. मधु भट्ट तैलंग

**उप संपादक**
राहुल श्रीवास

**संपादक मंडल**
डॉ. बिनय षड़गी राजाराम
**साहित्य**

अरुण तिवारी
**समसामयिक**

हरीश श्रीवास
**कला, संस्कृति**

नरिन्दर कौर
**प्रबंध**

**सदस्यता सहयोग राशि:**

| | | | |
|---|---|---|---|
| **वार्षिक** | : | 300 (व्यक्तिगत) | 350 (संस्थागत) |
| **द्वैवार्षिक** | : | 600 (व्यक्तिगत) | 700 (संस्थागत) |
| **चार वर्ष** | : | 1000 (व्यक्तिगत) | 1200 (संस्थागत) |
| **आजीवन** | : | 10,000 (व्यक्तिगत) | 12000 (संस्थागत) |

(15 वर्ष के लिए)
(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें)
विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

**कार्यालय सम्पर्क :**
**संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग**
जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016
फोन : 0755-2562294, मो.- 94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
bhanwarlalshrivas@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

**ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :**
**'कला समय' का बैंक खाता विवरण**
पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

कला समय पत्रिका में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं, यह जरूरी नहीं कि संपादक, प्रकाशक, मुद्रक उनसे सहमत हों। पत्रिका से सम्बन्धित समस्त विवाद, भोपाल न्यायालय के अधीन ही रहेंगे।
सम्पादन, संचालन, प्रबंधन एवं प्रकाशन- अवैतनिक/अव्यवसायिक

विशेष नोट : © सर्वाधिकार सुरक्षित 'कला समय' प्रबंधन यह स्पष्ट करना आवश्यक समझता है कि 'कला समय' में प्रवेशांक फरवरी-मार्च 1998 से लेकर अब तक प्रकाशित होने वाली समस्त सामग्री या सामग्री के अंश के पुनर्प्रकाशन तथा पुनरुत्पादन के सर्वाधिकार कॉपीराइट अधिनियम के अंतर्गत 'कला समय' के पास सुरक्षित हैं। अत: कोई भी व्यक्ति या संस्था 'कला समय' की इस सामग्री या इस सामग्री के अंश का उपयोग प्रबंधन की पूर्वानुमति के बिना न करें।

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्पलेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016 से प्रकाशित। संपादक - भँवरलाल श्रीवास

## इस अंक के प्रमुख हस्ताक्षर...

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

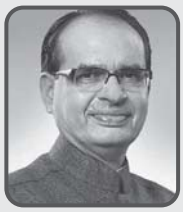
शिवराज सिंह चौहान

गोविन्द गुंजन

पंडित विजय शंकर मिश्र

मणि मोहन

अश्विनी कुमार दुबे

माधवी नानल

डॉ. रेखा गुंजन

डॉ. विभा सिंह

डॉ. पुष्पारानी गर्ग

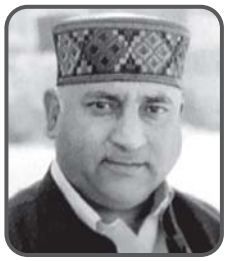

**विजय शर्मा**
**( पद्मश्री से सम्मानित )**
**इस अंक के आवरण चित्रकार**

**शब्द संयोजन एवं आकल्पन - गणेश ग्राफिक्स,** भोपाल, 9981984888 |
**आवरण चित्र** - विजय शर्मा| **छायाचित्र** -मनीष सराठे, सुनील सेन,
गूगल से साभार | **रेखांकन** - मनोहर काजल | **सहयोग** - धन सिंह, लता श्रीवास
**आवरण सज्जा** - मनोज माकोड़े, गणेश ग्राफिक्स

## इस बार


- संपादकीय 05
- **अद्वैत-विमर्श**
  आचार्य शंकर व महर्षि अरविन्द का दर्शन / नर्मदा प्रसाद उपाध्याय 07
  सौन्दर्यलहरी में बिंबात्मकता एवं चित्रात्मकता / गोविन्द गुंजन 10
- **आलेख**
  रामानुजाचार्य : भक्ति और मुक्ति.../ शिवराज सिंह चौहान 16
- **साक्षात्कार**
  उस्ताद ज़िया फ़रीदुद्दीन डागर सहाब से गुन्देचा बन्धुओं की बातचीत 18
  श्री लक्ष्मीनारायण पयोधि जी से डॉ. लता अग्रवाल की बातचीत 21
- **पुण्य-स्मरण**
  कथक पुरुष पंडित बिरजू महाराज ... ।/पं. विजय शंकर मिश्र 24
  अनंत लय में लीन : पंडित बिरजू महाराज /अश्विनी कुमार दुबे 30
- **संस्मरण**
  कोई ताजी हवा चली है अभी / अश्विनी कुमार दुबे 31
- **आलेख**
  कांगड़ा कलम : उद्‌भव एवं विकास / विजय शर्मा 34
- **परिचय**
  पद्मश्री श्री विजय शर्मा 44
- **चित्रावली**
  कांगड़ा कलम की चित्रावली 45
- **पुण्य-स्मरण**
  मंगेशकर परिवार का स्वर प्रासाद !/ माधवी नानल 57
  लता मंगेशकर : तुम भूल न जाओ .... / पं. विजय शंकर मिश्र 64
- **आलेख**
  पूर्वी निमाड़ अंचल के ज्ञात ... / डॉ. रेखा गुंजन 69
  स्वतंत्रता आंदोलन की सहयोगी : मुजरेवालियाँ / डॉ. विभा सिंह 73
- **संस्मरण**
  स्वतंत्रता सेनानी सेठ मुरलीधर जी पोद्दार / डॉ. पुष्पारानी गर्ग 75
- **मध्यांतर**
  विश्व कविता / मणि मोहन 77
  डॉ. राधेश्याम बन्धु के नवगीत 79
  नारायण श्रीवास्तव की कविताएँ 80
  विज्ञान व्रत की ग़ज़लें 81
- **पुस्तक समीक्षा**
  अशोक अंजुम की अनूठी मुक्तक-कृति 'ज़रा-सी बात पर' 82
  चिकित्सक का लोकधर्म 'सुषेण पर्व' काव्य-नाटक 84
  मानवतावाद की मशाल जलाने वाले जुझारू नवगीत 90
- **समवेत** 92
  स्व. प्रो. राजाराम के जन्मदिवस पर साहित्य व कला का अद्‌भुत संगम / लता मंगेशकर को ध्रुवपदधाम जयपुर द्वारा दी गई स्वरांजलि
- **समय की धरोहर**
  कथक सम्राट पंडित बिरजू महाराज / जगदीश कौशल 93
- **पुण्य-स्मरण**
  शान्त घुंघरूओं की भावपूर्ण श्रृद्धांजलि / जगदीश कौशल 94
- **सम्मान...**
  मध्यप्रदेश शासन के सम्मान 95
- **कला समय आयोजन**
  संस्कृति पर्व - 5 : आजादी के अमृत महोत्सव का उत्सव 97

संपादकीय

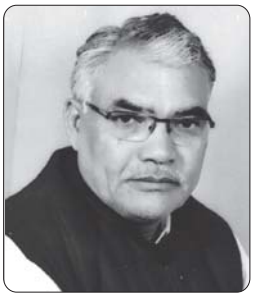

# अलविदा लता दी...! भारत रत्न लता मंगेशकर इस धरती पर ईश्वर का वरदान थी!!

**''सुर सब खामोश हो गए**
**ताल सभी ठिठक गई**
**नम आँखें पूछ रही**
**स्वर साम्राज्ञी कहाँ गई!''**

–रघुवीर शर्मा

6 फरवरी 2022 (रविवार) मुम्बई का शिवाजी पार्क में पूरे राजकीय सम्मान के साथ सुरों की देवी को देश ने अंतिम विदाई दी। लगभग शाम 7 बजे का समय रहा होगा जब देश के प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी की उपस्थिति में मिट्टी का शरीर मिट्टी में विलीन हो गया लेकिन अपने पीछे छोड़ जायेगा एक अमर संगीत...। और वही हुआ लता जी अपने पीछे एक युग का अंत कर गई। वसंत पंचमी का प्रस्थान ईश्वर ने वापस ले लिया सुरों का वरदान! सुरों की यात्रा सुरों में विलीन संघर्ष जिनका जीवन था और अनुशासन इतना उतना ही सादा जीवन जवाबदारी और कर्त्तव्य में पूरा परिवार संगीत को समर्पित और खुद परिवार की मुखिया की भूमिका में हमेशा सादा लिबाज और अपने काम के प्रति समर्पित व्यक्तित्व लताजी ने कभी परिस्थितियों से हार नहीं मानी। लता जी के बारे में अखबार लिखने लगे तो अखबार छोटे पड़ गये। लाखों यादें, हजारों-हजार संस्मरण सबके प्रिय सबकी लिये उपलब्ध सबकी माँ जैसी लताजी! वे सचमुच भारत माता थीं। वे देह रूप में हमें छोड़कर गई है पर स्वरों में वे हमेशा अमर रहेंगी। पिता पं. दीनानाथ मंगेशकर की पहली सीख लताजी को ''जिस तरह कविता में शब्दों का अर्थ होता है, वैसे ही गीत में सुरों का अर्थ होता है। गाते समय दोनों अर्थ उभरने चाहिए। लताजी ने इस सीख को सुर-संसार में आजीवन पूज्य पिता का गुरुमन्त्र पाकर भारत रत्न तक पहुँची। फिल्म संगीत को जो गरिमा लता मंगेशकर ने दी है वैसा ''भूतो न भविष्यति'' शायद और दूसरा संभव नहीं है। कल भी सूरज निकलेगा कल भी पंछी गाएंगे... तुमकों दिखाई देंगे... पर हम न नजर आएंगे। सारी दुनिया, न जाति, न धर्म न पंथ सबसे परे सबकी पसंद सबकी प्रिय लताजी अपने हजारों गानों और अनेक भाषाओं में वे हमेशा अमर हैं और अमर रहेगी। लता जी कुदरत का ऐसा करिश्मा थी, जिसे कुदरत भी नहीं दोहरा सकी। उनकी आवाज पीढ़ियों और दशकों तक लोगों के दिलों में राज करती रही। वे भाईचारा और अमन का पैगाम देती रही और अपने स्नेह का अमृत घोलती रही।

लताजी में सहजता, सुरीलापन, माधुर्य, झंकार, गहराई, गरिमा, ताजगी हमेशा मौजूद रही। स्वयं सिद्धा लता जी स्त्री के रूप में सरस्वती थीं। ब्रह्मांड में वे हमेशा सूर्य की तरह चमकती रहेगी। उस्ताद बिस्मिल्लाह खाँ सहाब ने कहा था – ''सुर में जो बेहतरीन से बेहतरीन है, वही लता है। वह गाली भी देगी तो सुर में देंगी। स्वर कोकिला का यादगार सफर में वे एक अच्छी फोटोग्राफर भी थी। उनकी खींची तस्वीरें प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में छपती थीं। वे कहती थी– ''कुदरत का नियम है कि बीते हुए लम्हों को बाँधा नहीं जा सकता परन्तु कैमरा इस नियम का अपवाद है। कृतज्ञ राष्ट्र ने दो दिन का राष्ट्रीय शोध मनाया। लता मंगेशकर होना और जाना एक युग का फसला है...। ऐसी आवाज जिसे सुनकर पीढ़ियाँ जवान हुई, जीवन के हर शह उनके गीतों से ढली लेकिन आज सुर मौन है। साज़ खामौश है। अल्पआयु में कला के क्षेत्र में कदम कदम रखा अनगिनत पड़ाव देखे लोकप्रियता के शीर्ष पर पहुंची उनका व्यक्तिगत जीवन त्याग और समर्पण की मिशाल है। परिवार की जिम्मेदारी में खुद का जीवन कहाँ छूट गया। पता ही नहीं चला इन्हीं संघर्षों में निखरकर वे कुँदन बन गई। अभिनेत्रियों की पीढ़ियाँ बदलती रही, लेकिन लता जी की आवाज नहीं बदली इसीलिए वे स्वर कोकिला कही जाने लगी। जब तक उन्होंने गीतों से विराम लिया तब तक माँ सरस्वती की

कृपा उन पर बनी रही। और संयोग देती सरस्वती की उपासना के दिन वसंत पंचमी से अगले दिन माँ की विदाई के साथ दुनियां को अलविदा कहा। उन्होंने मंच पर कभी भी जूते-चप्पल नहीं पहने। ''मैं मंच पर सरस्वती की आराधना करने जा रही हूँ। मैं जूते-चप्पल पहनकर ऐसा नहीं कर सकती। वे अपने पैशन को पूजा आराधना, देश सेवा मानती थी। मध्यप्रदेश के मुख्यमंत्री श्री शिवराज सिंह चौहान ने लता मंगेशकर की जन्म स्थली इंदौर में भारत रत्न स्वर कोकिला के नाम से संगीत अकादमी स्थापित करने की घोषणा की है। साथ ही संगीत महाविद्यालय और संग्रहालय भी स्थापित किया जायेगा तथा लताजी के जन्मदिन पर हर वर्ष लता मंगेशकर पुरस्कार दिया जायेगा तथा लता मंगेशकर की प्रतिमा भी स्थापित की जायेगी। संग्रहालय में लताजी का संगीत को दिया योगदान सम्पूर्ण रूप से उपलब्ध रहेगा। उक्त घोषणा मुख्यमंत्री ने स्मार्ट उद्यान भोपाल में लता मंगेशकर के चित्र पर माल्यार्पण कर श्रद्धा सुमन अर्पित करते हुए कही। लता जी हर भारतवासी की व्यक्तिगत क्षति है। जिसकी पूर्ति के लिए एक युग भी कम दिखता है।

मन भारी है फिर भी बहुत खूबसूरत जिंदगी जी लता जी ने। वे अपने पीछे गहरा सन्नाटा जो रिक्त, वो छोड़कर गई हैं। उसे कोई पूरा नहीं कर पायेगा। जीवन के तमाम आयाम में वे तह तक जाना चाहती थी। तभी तो - तुम मुझे यूं भुला ना पाओगे... लता जी ने समय को जिया वे समय के साथ थी। उनकी अंतिम यात्रा उनके घर ''प्रभु कुंज'' से शिवाजी पार्क के लिए शुरु हुई, तीन किलोमीटर तक हजारों लोगों की मौजूदगी में उनका अंतिम दर्शन हुआ। वे सफलता का श्रेय अपने सहयोगियों को देती थीं। कवि प्रदीप और लता मंगेशकर का यह दिन भी संयोग ही रहा कि प्रदीप जी का जन्म 6 फरवरी और लताजी की विदाई भी 6 फरवरी प्रदीप जी का वह गीत जो लता जी ने गाया था ''ऐ मेरे वतन के लोगो....'' जैसे गीत पर नेहरू जी भी रो दिये थे। ने पूरा जीवन अविवाहित रहकर भी उन्होंने दुनिया को सदाबहार गीत दिये। दुश्मन ने भी लता जी की बुराई नहीं की। भारत का गौरव महाराष्ट्र की आन, बान, शान थी लताजी ''रहे न रहे हम महका करेंगे...''। लता जी की विशेषता थी जैसा जिस उम्र का गाना हो उसी में वे समा जातीं थी। भारत जैसे-जैसे बड़ा होता गया लता जी भी स्वर से स्वर मिलाकर देश और जवानों का हौसला बढ़ाती रही। गांव-गांव, गली-गली में हर जगह में, हर जाति में दो दिन का राष्ट्रीय शोक रहा जो अपने आप में रिकार्ड है। हर दिल अज़ीज थी लता जी। सारे खिताब चार चाँद नहीं लगा पाये पर लता जी ने अपने स्वर से चार चाँद लगाये। यह संघर्ष, श्रम, रियाज के साथ यह मुकाम हासिल किया था। वे कहती थी यह मेरे माता-पिता और सुनने वालों का आशीर्वाद है। उन्होंने प्रधानमंत्री मोदी जी के लिए भी उनसे कहा- ''आपके आने से भारत का चित्र बदल रहा है यही मुझे खुशी होती है।''

वे कुंदनलाल सहगल को अपना गुरु मानती थी और किशोर कुमार का सुन्दर साक्षात्कार भी किया था। उनकी तालीम स्कूल में नहीं संघर्षों के बीच हुई। समय और परिस्थितियाँ उनकी शिक्षा बनी। वह स्कूली शिक्षा से कहीं ऊपर है। लता जी को देश दुनिया के वे सारे सम्मान, उपलब्धियाँ मिली उन्हें सम्मानित होने पर अवार्ड भी धन्य हो जाता था। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी जी और अटल बिहारी वाजपेयी की कविता को भी लता जी का स्वर मिला, वे माइकल जैक्शन की बड़ी फैन थी पर यह इच्छा मिलने की उनसे अधूरी ही रही।

इतना सुन्दर और धार्मिक जीवन विरलों को ही प्राप्त होता है। लताजी का शरीर पूरा हो गया। कल सरस्वती पूजा थी आज माँ बिदा हो रही है। लगता है, जैसे माँ सरस्वती इस बार अपनी सबसे प्रिय पुत्री को ले जाने ही स्वयं एक दिन पहले धरती पर आ गई थी। मृत्यु सदैव शोक का विषय नहीं होती। मृत्यु जीवन की पूर्णता है। लता जी का जीवन जितना सुन्दर रहा है उनकी मृत्यु भी उतनी ही सुन्दर हुई है। भारत पिछले अस्सी वर्षों से लता जी के गीतों के साथ जी रहा है। हर्ष में विषाद में, ईश्वर भक्ति में, राष्ट भक्ति में, प्रेम में परिहास में हर भाव में लताजी का स्वर हमारा स्वर, देश का स्वर बना रहा बना रहेगा। मिले सुर मेरा तुम्हारा तो....।

**''खुश रहना देश के प्यारे। अब हम तो सफर करते हैं..''**

**आज देश नत मस्तक है!**

**कृतज्ञ राष्ट्र का नमन!!**

**- भँवरलाल श्रीवास**

# आचार्य शंकर व महर्षि अरविन्द का दर्शन

नर्मदा प्रसाद उपाध्याय

वेदांत ज्ञान योग का वह स्रोत है जो ज्ञान प्राप्ति की दिशा में उत्प्रेरित करता है तथा इसका उत्स वे उपनिषद हैं जो वेद ग्रंथों और वैदिक साहित्य का सार समझे जाते हैं। उपनिषद वैदिक साहित्य का अंतिम भाग है इसलिए इसको वेदांत कहते हैं। कर्मकाण्ड और उपासना का मुख्य वर्णन मंत्र और ब्राम्हणों में है जबकि ज्ञान का विवेचन उपनिषदों में। वेदांत का शाब्दिक अर्थ है – वेदों का अंत अथवा सार।

आरंभ में उपनिषदों के लिए वेदांत शब्द का प्रयोग हुआ लेकिन बाद में उपनिषदों के सिद्धांतों को आधार मानकर जिन विचारों का विकास हुआ उनके लिए भी वेदांत शब्द का प्रयोग होने लगा। उपनिषदों को वेदांत इसलिए भी कहते हैं कि वेद के अंदर पहले ऋग्, यजुः, साम तथा अथर्व जैसी संहिताएं आती हैं और उसके पश्चात ब्राम्हण, आरण्यक तथा उपनिषद आते हैं। चूंकि ये साहित्य के अंत में आते हैं इसलिए उपनिषद वेदांत कहते जाते हैं।

दूसरा कारण यह है कि अध्ययन की दृष्टि से भी उपनिषदों के अध्ययन की बारी चूंकि संहिताओं के बाद आती थी इसलिए भी इन्हें वेदांत कहा जाता है।

आचार्य उदयवीर शास्त्री के अनुसार वेदांत का आशय है, वेदादि में विधिपूर्वक अध्ययन, मनन तथा उपासना आदि के अंत में जो तत्व जाना जाए तथा उस तत्व का विशेष रूप से जहां निरुपण किया गया हो उस शास्त्र को वेदांत कहते हैं।

जैसा कि उल्लेख किया गया है प्रमुख उपनिषद हैं – ईश, केन, कठ, मुण्डक, माण्डूक्य, तैत्तिरीय, ऐतरेय, छान्दोग्य तथा बृहदारण्यक। इन उपनिषदों में साम्य भी है और अनेक स्थानों पर विरोध भी। इसलिए यह अनुभव किया गया कि विरोधी प्रतीत होने वाले विचारों में समन्वय स्थापित कर सर्वसम्मत उपदेशों का संकलन किया जाए और इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए बादरायण व्यास ने ब्रम्ह सूत्र की रचना की जिसे वेदांत सूत्र, शारीरकसूत्र, शारीरकमीमांसा या उत्तरमीमांसा भी कहा जाता है। इसमें उपनिषदों के सिद्धांतों को अत्यंत संक्षेप रूप में संकलित किया गया है। इसके कारण सूत्रों में अस्पष्टता है तथा उन्हें बिना भाष्य या टीका के समझना संभव नहीं है इसलिए विभिन्न भाष्यों के द्वारा इन्हें समझने का प्रयास किया गया लेकिन इस स्पष्टीकरण में भी भाष्यकारों के दृष्टिकोणों में भिन्नता थी इसलिए सभी भाष्यकार एक-एक वेदांत सम्प्रदाय के प्रवर्तक बन गए इनमें शंकर अद्वैतवाद, रामानुज विशिष्टाद्वैतवाद, मध्व द्वैतवाद, निम्बार्क द्वैताद्वैतवाद तथा वल्लभ शुद्धाद्वैतवाद के प्रवर्तक बने। फिर इन भाष्यों की टीकाएं हुईं और टीकाओं की भी टीकाएं बनीं। अपने-अपने सम्प्रदाय के मत की पुष्टि के लिए स्वतंत्र ग्रंथ भी रचे गए जिसके कारण वेदांत साहित्य का स्वरूप बहुत बड़ा हो गया।

ऐतिहासिक रूप से किसी गुरु के आचार्य बनने या समझे जाने के लिए वेदांत की पुस्तकों पर टीकाएं या भाष्य लिखने पड़ते हैं। इनमें तीन महत्वपूर्ण ग्रंथ शामिल हैं। ये हैं, उपनिषद, भगवद्गीता और ब्रम्हसूत्र जिन्हें प्रस्थानत्रयी कहते हैं। तदानुसार आचार्य शंकर, रामानुज और मध्वाचार्य तीनों ने इन तीन महत्वपूर्ण पुस्तकों पर रचनाऐं कीं व ब्रम्ह, जीव तथा जगत के संबंध में अनेक मत उपस्थित किए गए। इस तरह वेदांत के अनेक रूप निर्मित हुए।

वेदांतियों में उक्त तीन प्रवर्तक आचार्यों के अतिरिक्त भास्कर, चैतन्य, वाचस्पति मिश्र, सुरेश्वर और विज्ञानभिक्षु जैसे वेदांती हुए जिन्होंने अपनी-अपनी शाखाएं निर्मित कीं। आधुनिक काल में जो वेदांती हुए वे हैं, रामकृष्ण परमहंस, स्वामी विवेकानंद, महर्षि अरविंद घोष, स्वामी शिवानंद, स्वामी करपात्री और रमण महर्षि। इनके अतिरिक्त ज्ञानेश्वर व तुकाराम महाराज जैसे संतों ने भी वेदांतों पर अनेक ग्रंथ लिखे।

शंकर अद्वैत वेदांती हैं। गौडपाद (600 ई.पू.) तथा उनके अनुवर्ती आदि शंकराचार्य ब्रम्ह को प्रधान मानकर जीव और जगत को उससे अभिन्न मानते हैं। उनके अनुसार तत्व को उत्पत्ति और विनाश से रहित होना चाहिए। चूंकि जगत नाशवान है इसलिए वह तत्वशून्य है। जीव जैसा भी दिखाई देता है वैसा वह तत्वपूर्ण नहीं है।

जागृत और स्वप्न की अवस्था में जीव जगत में रहता है लेकिन सुषुप्ति में जीव प्रपंच ज्ञानशून्य चेतनावस्था में रहता है। इससे यह सिद्ध होता है कि जीव का शुद्ध रूप सुषुप्ति जैसा होना चाहिए। यह अवस्था अनित्य है। इसलिए इससे परे तुरीयावस्था को जीव का शुद्ध रूप माना जाता है। इस अवस्था में नश्वर जगत से कोई संबंध नहीं होता और जीव को पुन: नश्वर जगत में प्रवेश भी नहीं करना पड़ता। यह तुरीयावस्था अभ्यास से प्राप्त होती है। ब्रम्ह-जीव-जगत में अभेद का ज्ञान उत्पन्न होने पर जगत जीव में और जीव ब्रम्ह में लीन हो जाता है। तीनों में वास्तविक अभेद होने पर भी अज्ञान के कारण जीव जगत को अपने से पृथक समझता है लेकिन सपनों के संसार की तरह जागृत संसार भी जीव की कल्पना है। अंतर सिर्फ इतना ही है कि स्वप्न व्यक्तिगत कल्पना का परिणाम है जबकि जागृत अनुभव समष्टिगत महाकल्पना का। स्वप्न जगत का ज्ञान होने पर दोनों में मिथ्या तत्व सिद्ध हो जाता है।

**लेकिन बौद्धों की तरह वेदांत में जीव को जगत का अंग होने के कारण मिथ्या नहीं माना जाता।**

मिथ्या तत्व को मानने वाला जीव परम सत्य है यदि उसे मिथ्या माना गया तो सभी ज्ञान को मिथ्या मानना होगा परंतु जिस रूप में जीव संसार में व्यवहार करता है उसका वह रूप मिथ्या ही है। जीव की तुरीयावस्था भेदज्ञान शून्य शुद्धावस्था है। ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान का संबंध मिथ्या संबंध है। इनसे परे होकर जीव अपनी शुद्ध चेतन अवस्था को प्राप्त कर लेता है तथा इस अवस्था में कोई भेद भी नहीं होता क्योंकि भेद तो द्वैत में होता है और इसी अद्वैत अवस्था को ब्रम्ह कहते हैं।

तत्व असीम होता है, यदि दूसरा तत्व भी हो तो पहला तत्व सीमित हो जाएगा और इसके कारण वह तत्व बुद्धिगम्य होगा जिसमें ज्ञाता-ज्ञेय-ज्ञान का भेद प्रतिभासित होने लगेगा। हमारा अनुभव है कि सभी ज्ञेय वस्तुऐं नश्वर होती हैं इसलिए यदि हम तत्व को अनश्वर मानते हैं तो हमें उसे अज्ञेय, शुद्ध चैतन्य मानना ही होगा।

आचार्य शंकर के अद्वैतवाद (Non Dualism) की सर्वाधिक महत्वपूर्ण अवधारणा ब्रह्म है। ब्रह्म शंकर की तत्व मीमांसा (metaphysics) में एकमात्र सत्ता है जिसे पारमार्थिक दृष्टि से (Transcendental) सत् (Real) माना गया है। अद्वैतवाद का मुख्य उद्देश्य यही स्थापित करना है कि वास्तविक सत्ता (Real Existance) सिर्फ ब्रह्म ही है। शंकर कहते हैं, ''ब्रह्म सत्यम, जगत मिथ्या, जीवौ ब्रम्हैव नापर: (Brahman is the only reality, the world is ultimately false; and the individual soul is not different from Brahman)''

शंकर ने सत्ता के तीन स्तरों को स्वीकार किया -

- ❖ प्रतिभासिक (Illusory) - भ्रमकारक जैसे रस्सी के स्थान पर सांप दिखाई देना।
- ❖ व्यावहारिक (Practical) - जगत की वस्तुऐं सत् प्रतीत होती हैं जैसे रस्सी, रस्सी ही दिखाई देती है।
- ❖ पारमार्थिक (Transcedental) - यह सिर्फएक सत्ता है जो ब्रम्ह है।

शंकर के अनुसार सत् का लक्षण है त्रिकाल अबाधित (Irrefutable in all times) होना। जबकि असत् (UnReal) का लक्षण है त्रिकाल बाधित (Refuted in all times) होना।

आकाश कुसुम जैसी वस्तुऐं असत् हैं जबकि एकमात्र सत्य ब्रम्ह है।

शंकराचार्य के अनुसार ब्रम्ह एक ही है किन्तु उसके दो रूप हैं - निर्गुण (Impersonal) व सगुण (Personal)। ब्रम्ह मूलत: गुणातीत (Beyond Attributes) है। गुणों के माध्यम से उसकी व्याख्या नहीं की जा सकती। इस अर्थ में वह स्पिनोज़ा के द्रव्य या ईश्वर के समान है और उपनिषदों में वर्णित परब्रम्ह के समतुल्य है। यही ब्रम्ह जब माया की उपाधि से प्रभावित होता है तो ईश्वर या सगुण (Personal or Determinate) ब्रम्ह बन जाता है। ईश्वर या सगुण ब्रम्ह की सत्ता व्यावहारिक दृष्टि से ही है। पारमार्थिक दृष्टि से नहीं और यह उपनिषदों के अपर क्रम के समान है।

संसार असत्य है अथवा जो कुछ हम देखते हैं 'वह कुछ नहीं में कुछ' का आभास है। 'शंकर भारतीय चिंतनधारा में आकस्मिक घटना की तरह नहीं आए। उनकी परम्परा की लकीर उपनिषदों से आगे ऋग्वेद के नासदीय सूक्त तक पहुंचती है। नासदीय सूक्त ने जीवन और सृष्टि के विषय में जो मौलिक प्रश्न उठाए थे उन्हीं प्रश्नों का समाधान खोजते खोजते पहले उपनिषद, फिर बौद्ध दर्शन और सबके अंत में शंकर का सिद्धांत प्रकट हुआ। शंकर के निकटतम पूर्वज बौद्ध दार्शनिक थे। जिन्होंने शून्यवाद की स्थापना की थी। शून्यवाद के प्रवर्तक के रूप में नागार्जुन को माना जाता है जिनका यह कहना है कि हर चीज़ शून्य है। सत्य के दो रूप हैं। **एक संवृत्ति सत्य और दूसरा परमार्थ सत्य।** संवृत्ति सत्य वह है जो दिखाई पड़ता है किन्तु जो सत्य का असली रूप नहीं है। परमार्थ सत्य वह है जो दिखाई नहीं पड़ता है किन्तु जो सत्य का असली रूप है। संवृत्ति सत्य दिखाई तो पड़ता है मगर उसका यह दिखाई पड़ना ही असत्य है। हम जो कुछ देखते हैं वह शून्य है, स्वप्न है, कुछ नहीं में

कुछ का मिथ्याभास है। तब भी व्यापार में हमें सत्य मान लेना पड़ता है। हर चीज़ शून्य है यह सुनने में विचित्र चाहे जितना लगे लेकिन यही एकमात्र सत्य है।

इस प्रकार बौद्धों का जो यह शून्यवाद था वही शंकर मत का मायावाद हुआ। हाँ, बौद्धों से आगे बढ़कर शंकर ने एक तटस्थ ब्रम्ह को अवश्य स्थान दिया। किन्तु यह तटस्थ ब्रम्ह भी नया नहीं था। प्रत्युत वह उपनिषदों के युग से ही आ रहा था। शून्यवाद को मायावाद के नाम से अपनाने के कारण ही शंकर को लोग प्रच्छन्न बौद्ध कहते थे। (संस्कृति के चार अध्याय)

**महर्षि अरविन्द**

महर्षि अरविन्द नव्य वेदांत (Neo-Vedanta) के दार्शनिक हैं जिन्होंने सन् 1910 से 1950 के बीच अपने दार्शनिक विचार प्रस्तुत किए। इनका दर्शन पूर्ण अद्वैतवाद (Integral Non Dualism) के नाम से प्रसिद्ध है। उन्होंने भारतीय दर्शन की धाराओं का तथा प्लेटो, अरस्तु, बर्गसां और व्हाइटहैड के पश्चिमी दर्शन पर भी विचार किया। इनके चिंतन पर भारत के अद्वैत वेदांत और दर्शन का स्पष्ट प्रभाव है।

अरविन्द के अनुसार जगत की प्रक्रिया दो रूपों में व्यक्त होती है, अवरोहण (Involation) तथा आरोहण (Evolution)। पहले चरण में आरोहण की प्रक्रिया होती है जिसमें परम सत् स्वयं निम्नतर रूपों में व्यक्त होता है। इसके पश्चात आरोहण की प्रक्रिया होती है जिसमें जगत के निम्नतर रूप परम सत् की ओर बढ़ते हैं।

महर्षि अरविन्द शंकर से पूर्णत: सहमत नहीं हैं। भले वे वेदांती हों लेकिन ब्रम्ह और जगत की शंकर की व्याख्या से वे इस बिन्दु पर असहमत हैं कि जगत ब्रम्ह का विवर्त (Appearance of Brahman) तथा मिथ्या है।

वे नव्य वेदांत के इस विचार से प्रभावित हैं कि जगत और ब्रम्ह में तात्विक रूप से कोई भेद नहीं है। (Metaphysical Difference)

अरविन्द के अनुसार परम सत् (Absolute Real) पूर्ण (Perfect) है किन्तु आल्हाद (Delight) के कारण स्वयं को जगत के रूप में अभिव्यक्त करता है, **जगत ब्रम्ह की ही लीलामय अभिव्यक्ति है।**

अरविन्द के अनुसार परम सत् और जगत के स्वरूप में किसी प्रकार का तात्विक या कोटिगत अंतर नहीं है।

-लेखक प्रख्यात ललित निबंधकार तथा कलाविद् है।
85, इंदिरा गांधी नगर, पुराने आर.टी.ओ. के पास,
केसरबाग रोड, इन्दौर (म.प्र.) 452009

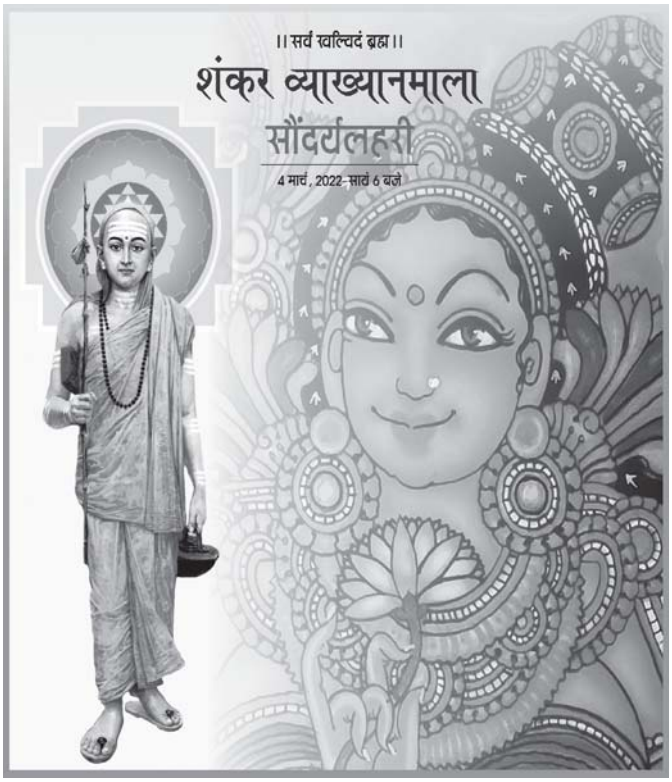


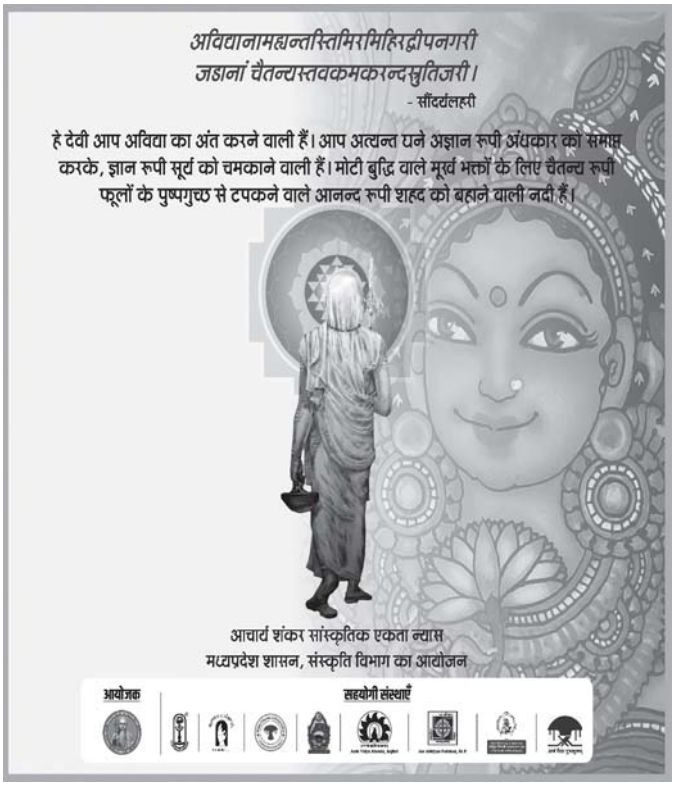

# शून्यभीति पर चित्र
# सौन्दर्यलहरी में बिंबात्मकता एवं चित्रात्मकता

गोविन्द गुंजन

आदिगुरु शंकराचार्य ने सौन्दर्यलहरी में प्रत्यभिज्ञा दर्शन का कुशलतापूर्वक उपयोग करते हुए काव्यसिद्धि का शिखर स्पर्श किया है किन्तु साधनापक्ष के आचार्यों एवं तंत्राचार्यों ने इसे श्रीविद्या की साधना के आधार ग्रन्थ के रूप में विशेष मान्यता दी है, इस कारण इसके काव्य सौन्दर्य, इसके बिंब विधान एवं इसकी चित्रात्मक भाषा पर कम ध्यान दिया गया है।

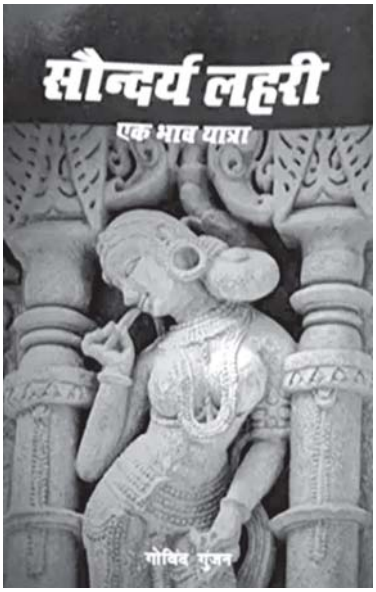


भारतीय सौंदर्य दृष्टि की अपनी विशिष्ट परम्परा है तथा यह सौंदर्य दृष्टि निजस्व के विरोध में है। इसका सारा ज़ोर समग्रता पर है। भारतीय कला दृष्टि वही है जो भारतीय लोक दृष्टि है। इसलिए भारतीय चितेरों, शिल्पियों तथा स्थापत्यकारों ने अपनी कला में निजस्व को स्थान नहीं दिया है। वैदिक ऋषि का स्वर है, 'यो वो वृताभ्यो अकृनोद लोकम्' अर्थात वह घेरे से परे होने की कामना करता है और यही बंधनजयी स्वर निरंतर भारतीय कला के कंठ में गूंजता रहता है। भारतीय चित्रांकन और शिल्पांकन की अपनी समृद्ध परम्परा है तथा इस परम्परा में रामायण और महाभारत के प्रसंगों से लेकर कालिदास के काव्यों तथा नाटकों के आधार पर तथा केशव, बिहारी, मतिराम और पुहकर के काव्य के प्रसंगों के आधार पर चित्रांकन हुए हैं। भागवत पुराण के दशम स्कंध की लीला विशेष रूप से भारतीय चित्रांकन परम्परा में रुपायित हुई तथा कृष्णलीला के अगणित प्रसंग तथा राधा का अद्भुत रूप मध्यकाल में भारतीय चितेरे की तूलिका से निरंतर जन्मता रहा। किन्तु यह इतनी समृद्ध चित्रांकन परंपरा के रहते कलाकारों का ध्यान चित्रांकन के लिए शंकराचार्य की सौन्दर्यलहरी की ओर क्यों नहीं गया ?

प्रत्यक्ष कारण तो यह है कि इसे दर्शन एवं साधना का ग्रंथ ही मान कर ही आचार्यों ने अपने अध्ययन एवं अपनी साधना का साधन बना लिया।

दूसरे इस पर काव्य की दृष्टि से उतना विचार नहीं हुआ, जितना होना चाहिए था। यदि इसकी काव्यात्मक बिम्बात्मकता पर यथेष्ठ चर्चा हुई होती तो संभव था कि कलाकारों का ध्यान भी इसकी तरफ गया होता।

इन कारणों से यह अद्भुत काव्य कलाकारों व उनके संरक्षकों के दृष्टिपथ में आ पाया।

सच तो यह है कि आचार्य शंकर एक स्वयंभू कवि मनीषी भी थे। जिन अर्थों में प्रजापति बह्मा को कवि कहा गया है उन्हीं अर्थों में शंकर की वाणी में भी काव्य का दिव्यावतार हुआ था। इस सृष्टि में उन्होंने सृष्टा को देख लिया था, उसका शब्दातीत आनंदस्वरूपा सौन्दर्य उनकी आँखों में उसी तरह उतर आया था, जैसे चन्द्रमा किसी प्रशांत स्वच्छ जलाशय में उतर आया हो। परंतु शंकराचार्य जल में उतरे उस चन्द्रमा की छाया के संकेत को देख लेते हैं कि जिसकी छाया और प्रतिछायाओं में इतना सौन्दर्य है तो उसका वास्तविक सौन्दर्य क्या होगा ? उनकी दृष्टि चन्द्रमा की छाया से ऊपर उठ कर वास्तविक राकापति तक पहुँच जाती है। इसीलिये उनका काव्य इस लोक का होते हुए भी पारलौकिक है। भाषा में वह उतना ही है जितना जलाशय में दीख रहा चन्द्रमा, वह भाषा के धुर दक्षिणी ध्रुव पर स्थिति प्रतिभाषा में प्रसूत हुआ काव्य है, जिस प्रतिभाषा में वेद की ऋचाएं जन्मती हैं।

उनका काव्य सौन्दर्य के पथ से यात्रा करता हुआ हमें ब्रह्म सत्य तक की मानस यात्रा करवाता है। **तुलसी ने प्रत्यभिज्ञा दर्शन से – 'शून्य भीती पर चित्र, रंग नहिं, तन बिन लिखा चितेरे' के माध्यम से संसार रूपी चित्र की जिस वास्तविकता की ओर संकेत किया है, उससे बहुत पहले ही शंकराचार्य ने इस संसार के समग्र सौन्दर्य के परम स्त्रोत की खोज के रूप में अपनी**

**काव्य साधना को आधार बनाया था। जैसे सृष्टा ने शून्य की दीवार पर बिना रंगों के ही और बिना हाथों के ही इस सुन्दर संसार को एक चित्र की भाँति उकेरा है, और हमें यह संसार, यह प्रकृति इतनी सुन्दर दिखाई देती है, पर शंकराचार्य हमें दिखाते हैं कि इसके सौन्दर्य का मूल स्त्रोत वास्तव में देवी त्रिपुर सुन्दरी ही हैं। उन्हीं के तेज से यहाँ प्रकाश है, उन्हीं की दिव्य केशराशि से घटाओं में सौन्दर्य उतरा है, उन्हीं की मांग का सिंदूर सूर्य को लालिमा प्रदान करता है और उन्हीं के मुख मंडल की आभा से नक्षत्रों में उज्जवल आभा दिखायी देती है। सृष्टि के परम सौन्दर्य के मूल स्त्रोत उस सौन्दर्य गंगा के गोमुख तक की मानसिक काव्यात्मक यात्रा ही सौन्दर्यलहरी का रहस्य है।**

देवी त्रिपुर सुन्दरी इसमें केंद्र हैं। केंद्र का शास्त्रीय अर्थ है – 'शक्तिपीठ या ऐसे स्थल जहां शक्ति का वास हो। शक्ति देवी का रूप है, और सौन्दर्य की शक्ति सबसे बड़ी शक्ति है, वह अजेय है, शक्ति के विदा होते ही सारा सौन्दर्य भी विदा हो जाता है, और आनंद जो उस शक्ति का स्वभाव है, शक्ति के बिना शेष नहीं रहता। वह शक्ति भाषा में मात्रा रूप में होती है, जिसके ना रहने से शिव भी शव हो जाता है। आनंद लहरी जो सौन्दर्य लहरी का पूर्वार्ध है, उसके पहले ही छंद में शंकराचार्य मात्रा रूपी मातृशक्ति की महिमा इस तरह व्यक्त करते हैं – 'शिवः शक्त्या युक्तो यदि भवति शक्तः प्रभवितुं/न देवो खलु कुशलः स्पन्दितुमपि'

**सौन्दर्यलहरी चित्रशाला है अनन्त ललित बिंबों की:**

सौन्दर्यलहरी के छंदों की चित्रात्मक बिंब शैली पर विचार करने से पूर्व हमें आचार्य कुंतक के चित्रतुरग सिद्धांत को दृष्टिगत रखना होगा। कुंतक के अनुसार जैसे दीवार पर रंग एवं हरताल आदि से बनाया हुआ अश्व दिखने में हमें अश्व ही दीखता है, पर वह वास्तव में अश्व नहीं है। यह एक प्रतीति है जिसे शंकर माया कहते हैं। इस माया के आवरण को जान लेने से सत्य का साक्षात्कार होता है। सौन्दर्यलहरी के पहले ही शिखरिणी छंद में शंकर हमें आकाश का एक विराट चित्र दिखाते हैं जिसमें बारह सूर्यादित्य मणियों की तरह जड़े हुए हैं। इसमें चँद्रमा भी है, जो किसी ज्योति कलश की तरह अपनी रजत किरणों से छोटी छोटी असंख्य चिड़ियों का निर्माण कर रहा है। यह आकाश देवी के एक स्वर्ण मुकुट की तरह है जिसमें आकाश की मणियाँ जड़ी हुई है। इन आकाश मणियों की झिलमिल किरणों से इन्द्रधनुष का निर्माण हो रहा है। इस मुकुट को इन चन्द्र किरणों से निर्मित पखेरुओं का सुखद नीड़ कहा गया है।

इस बिंब में जो सबसे महत्वपूर्ण बात है वह यह कि इस चित्र में कोई विशेष चित्रकाल (चित्र में अभिव्यक्त समय का कोई कालखंड) नहीं है। यह दिवस या रात्रि में विभाजित कालखंड नहीं, अखंडित महाकाल है। इस ब्रह्माण्ड में वास्तव में रात्रि है ही नहीं, क्योंकि यहाँ कभी सूर्य अस्त होता ही नहीं है। शंकर अद्वैत वादी हैं, अतः उनके यहाँ समय भी दिन रात के द्वैत में विभाजित नहीं है। यदि इस चित्र में चित्रकाल दिन या रात में विभाजित होता तो इसमें चन्द्र सूर्य, इन्द्रधनुष, चाँदनी से बन रही चिड़ियाएँ एक साथ नहीं हो सकती थीं और आकाश में इस तरह देवी के दिव्य किरीट का निर्माण होना भी एक ऐसी घटना है जिसे हम फ्रांस के पोस्ट इम्प्रेशनिज़्म चित्रांकन के जनक 'पॉल सेजां के उस सिद्धांत से समझ सकते हैं जिसके अनुसार ज्यामिति भी अबूझ पहेली बन जाती है। प्रकृति में हमें जो दृश्य दिखाई देते हैं वह शंकु रूप या वृत्ताकार दिखते हैं, जैसे सेजां के चित्रों में प्रकाश का चमत्कार है, और उनके चित्रों में क्षैतिज विस्तार और गंभीरता समाहित हो जाती है, वैसे ही शंकर के शब्द चित्र केवल समतल, उदग्र, और क्षैतिज कैनवास पर निर्भर नहीं हैं। इस दृष्टि से अद्वैतवादी चित्रकला का भी विकास हो सकता था, किन्तु दुर्भाग्य से हमारी कला में यह आयाम उपेक्षित ही रह गया। सौन्दर्यलहरी का यह अनुपम शब्द चित्र वाला छंद और उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है–

**गतैर्माणिक्यत्वं गगनमणिभिः सान्द्रघटित**
**किरीटं ते हैमं हिमगिरिसुते कीर्तयति यः।**
**स नीडेयच्छायाच्छुरणशबलं चन्द्रशकलं**
**धनुः शौनासीरं किमिति न निबध्नाति धिषणाम्।।(1)**

काव्यानुवाद –

**हेमकिरीट हे शैलसुता यह, गगन मणि कृत सुंदर**
**इंद्रधनुष की अनुपम छवि सा, ध्यानी मन के अंदर**
**ऊषा की झिलमिल किरणों से जगमग सा यूं लगता**
**नीड़ हो जैसे चँद्रकिरण की, रजत चिरैया का।(1)**

(गोविन्द गुंजन)

**सूर्योदय का सिन्दूर और देवी के केशों की सीमांत रेखा:**

सौन्दर्यलहरी के तीसरे छंद में शंकर हमें एक विलक्षण प्रकृति चित्र दिखाते है। यहाँ काली मेघमालाओं की फ़ैली हुई वल्लियों के बीच प्रातःकालीन उदित होता हुआ सिंदूरी आभा वाला सूर्य हमें दिखायी देता है। हमें यह काली मेघमालाएँ देवी त्रिपुरसुन्दरी की अलकावालियों की तरह नभ में फ़ैली हुई मालूम होती हैं और इन अभिराम केशों की सीमांत रेखा पर उदित होता हुआ सूर्य ऐसे दिखता है जैसे वह देवी की मांग में सिन्दूर सा सुशोभित हो रहा हो।

यह शब्द चित्र का बहुत सुंदर और बहुअर्थी उदाहरण है।

सूर्य देवी की मांग का सिन्दूर है जो उदित हो कर सारे अंधकार को हर लेता है। सिन्दूर मांगल्य सूचक है अत: देवी की मांग के इस सिन्दूर का दर्शन भी सब प्रकार के मांगल्य का आधार है। कई बार आकाश के बीच फ़ैली मेघमालाएँ स्त्री के केशों की तरह दिखायी देती हैं, पर यह हमारी भावना पर निर्भर करता है कि इन केशों की छवि से हम उस सुकेशी देवी के मुख कमल के दर्शन करते हैं या कुछ और। सौन्दर्यलहरी का यह मूल श्लोक एवं इसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**वहन्ती सिन्दूरं प्रबलकबरीभारतिमिर-**
**द्विषां बृन्दैर्बन्दीकृतमिव नवीनार्ककिरणम्**
**तनोतु क्षेमं नस्तव वदनसौन्दर्यलहरी-**
**परीवाहस्त्रोत:सरणिरिव सीमन्तसरणि: ।( 3 )**

काव्यानुवाद –

**आनन छवि सौंदर्य लहर में, बहती रेख सिंदुरी,**
**केश राशि के मध्य सुहाती, डगर शिवम पथ पूरी।**
**तिमिर बंदी सा बाल हँस हो, ललित मांग सरणि में,**
**घने तिमिर में अपना भी हो, यही शिवम पथ सुंदर।( 3 )**

(गोविन्द गुंजन)

**कर्णफूलों के रथ पर आरूढ़ कामदेव का चित्र:**

सौन्दर्यलहरी के अठारहवें शिखरिणी छंद में एक और दर्पण छवि का चमत्कार दिखाई देता है। देवी के कानों में कर्णफूल सुशोभित हैं एवं इन कर्णफूलों की छाया देवी के मुख रूपी दर्पण पर पड़ रही है। इस तरह दो कर्णफूल और उनके दो बिंब मिलकर चार पहियों वाले रथ का निर्माण कर रहे है। इस रथ पर आरूढ़ हो कामदेव निर्भय होकर शिवजी पर आक्रमण करने के लिए तत्पर हैं, देवी का आश्रय पाकर अब कामदेव को अपनी पराजय का बदला शिव से लेने को सुअवसर भी मिल गया है, अत: वह निर्भय भी है। प्रत्यक्ष रूप में यह श्रृंगार का पद है एवं इसमें यह संकेत भी है कि कामजयी शिव पर भी देवी के सौन्दर्य से कामाकर्षण संभव है। इस छंद में देवी के मुख रूपी दर्पण में प्रतिबिंबित कर्णफूलों की छवि से निर्मित चार पहिये वाले रथ की संकल्पना और उस पर आरूढ़ कामदेव का चित्रण चित्रकला की दृष्टि से भी अपूर्व है। छाया और प्रकाश के विलक्षण संयोग से देवी की अपूर्व सौन्दर्य छवि का दर्शन मन को रससिक्त भी करता है और आनंदपूरित भी। सौन्दर्यलहरी का यह मूल छंद एवं इसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**स्फुरद्गण्डाभोगप्रतिफलिततटङ्कयुगलं**
**चतुश्चक्रं मन्ये तव मुखमिदं मन्मथरथम्।**
**यमारुह्य द्रुह्यत्यवनिरथमर्केन्दुचरणं**
**महावीरो मार: प्रमथपतये सज्जितवते।।( 18 )**

काव्यानुवाद –

**ललित कपोल मुकुर पर बिबिंत, कर्णफूल की छाया,**
**चतुश्चक्र रतिपतिरथ सा मुख:, अनुपम छवि को पाया।**
**मुखरथ रूढ़ तुम्हारे देवि, वह प्रतीत यूं होता,**
**महावीर मन्मथ निकला हो, शिव से रण करने को।।( 18 )**

(गोविन्द गुंजन)

**दर्पण छवि का बिम्बात्मक चित्रण:**

सौन्दर्यलहरी के 26वें छंद में एक अनूठा चित्र मिलता है। छंद का प्रसंग यह है कि जब शिव ने श्रीदेवी के अधरामृत का पान करने के लिए उनका चिबुक अपने हाथों में उठाया तो शिव को देवी का मुख उस दर्पण की तरह दिखायी पड़ा, जिसमें वह अपनी ही छवि देखने लगे। इस छंद में शंकराचार्य जहां एक तरफ देवी त्रिपुर सुन्दरी के मुख के निर्मल एवं उज्जवल सौन्दर्य का चित्र उकेर रहें है, वहीं शिवानी के मुख रूपी दर्पण में शिव की छवि को अंकित करते हुए शिव शिवानी के भी अद्वैत को भी व्यक्त कर देते हैं। दर्पण की छवि का यह अनूठा चित्रण अपनी तरह का एक विशेष प्रयोग है। इस चित्रण में प्रणय, श्रृंगार और प्रेम का अनूठा चित्रण तो है ही साथ ही शंकराचार्य बड़ी कुशलता के साथ शिव एवं शिवा के अभेद को भी अभिव्यक्त कर देते हैं। यहाँ यह प्रश्न उठ सकता है कि दर्पण की छवि तो वास्तविक का प्रतिबिंब है, वास्तविक नहीं, फिर उस छवि को शंकर शिव शिवा के अभेद दिखाने के लिए कैसे प्रयोग कर लेते हैं ? यहाँ इसलिए यह स्पष्ट कर देना आवश्यक है कि दर्पण एक तरह से मन का प्रतीक तो है ही, साथ ही वह अपनी उज्ज्वलता एवं निर्मलता का भी प्रतीक है। शिव देवी के मुख को देखते हैं तो उन्हें लगता है कि जैसे वह उस मुख रूपी दर्पण में स्वयं की ही छवि देख रहे हों।

यह मूल श्लोक एवं इसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**कराग्रेण स्पृष्टं तुहिनगिरिणा वत्सलतया**
**गिरीशेनोदस्तं मुहुरधरपानाकुलतया।**
**करग्राह्यं शम्भोर्मुखमुकुरवृन्तं गिरिसुते**
**कथङ्कारं ब्रूमस्तव चिबुकमौपम्यरहितम्।।( 26 )**

काव्यानुवाद –

**जो चिबुक तुम्हारा वत्सलता से, छूते थे गिरिनाथ,**
**वह अधर पान की आकुलता में, उठा शंभु के हाथ।**
**उस ठोड़ी की सुंदरता का, कैसे संभव मुझे बखान,**
**आनन छवि लखने को जो, हर के हाथों मुकुर समान।( 26 )**

(गोविन्द गुंजन)

**गजमुक्ता मोती के हार पर बनता देवी के अधरों का प्रतिबिंब:**

सौन्दर्यलहरी के तैतीसवें छंद में एक शब्दचित्र ध्यान खींचता है। छंद का प्रसंग यह है कि गजासुर दैत्य का वध करने के बाद शिवजी ने गजासुर के मस्तक को चीर कर उसमें स्थित गजमुक्ता निकाल लिए थे। उन मोतियों का हार उन्होंने देवी को भेंट किया था। देवी ने जब उस गजमुक्ता मोतियों के हार को अपने कंठ में धारण किया तो उन श्वेत मोतियों पर उनके अरुण अधरों का प्रतिबिंब बन गया जो शिवजी की गजासुर पर पायी विजय की पताका लगने लगा। छाया प्रकाश के चमत्कार को चित्रकला में कुशलतापूर्वक दिखाने के बहुत उदाहरण हैं, किन्तु शब्दचित्रों में उन्हें साकार करने के प्रचुर उदाहरण कालिदास, वाल्मीकि, बाणभट्ट आदि के संस्कृत काव्य में मिलते है, उनमें भी आचार्य शंकर के प्रयोग विरल एवं मुग्ध करने वाले हैं। उपरोक्त मूल श्लोक एवं उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**वहत्यम्ब स्तम्बेरमदनुजकुम्भप्रकृतिभि:**
**समारब्धां मुक्तामणिभिरमलां हारलतिकाम्।**
**कुचाभोगो बिम्बाधररुचिभिरन्त: शबलितां**
**प्रतापव्यामिश्रां पुरदमयितु: कीर्तिमिव ते।।( 33 )**

काव्यानुवाद –

**गजसुर की यह मौक्तिक माला, देवि तुम्हारे उर पर,**
**बिम्बा सम अधरों की छाया, पड़ती जिसके ऊपर!**
**लगती है यह शिव प्रताप की, निर्मल विमल पताका,**
**जिस पर जगमग करती तेरे, आनन श्री की राका!( 33 )**

(गोविन्द गुंजन)

**देवी का द्रविड़ शिशु शंकराचार्य को अपना दुग्धपान कराने का शब्द चित्र:**

यह मान्यता है कि बचपन में माँ पार्वती ने बालक शंकर को अपने स्तनों से दूध पिलाया था। शंकराचार्य ने उस जन विश्वास को जो उनके जीवन काल में ही लोकमान्य हो गया था, उसे एक अनूठी अर्थवत्ता प्रदान की है। सौन्दर्यलहरी के चौतीसवें शिखरिणी में वह देवी का एक चित्र साकार करते हैं। वह दिखाते हैं कि देवी पर्वतराज हिमालय की पुत्री हैं, इसलिए वह भी पर्वत रूपा हैं। जैसे हिमालय से गंगा की अजस्र धारा प्रवाहित हो रही है, वैसे ही देवी पर्वत से सरस्वती रूपी दूध की नदी बह रही है।

हिमालय से प्रवाहित होती हुई गंगा की तरह देवी के देह पर्वत से सरस्वती के प्रवाहित होने का यह तुलनात्मक बिंब अपनी तरह का अकेला उदाहरण है तथा काव्य की चित्रात्मक शक्ति के उत्कर्ष का द्योतक है। **देवी स्वरूपा इस पर्वत के मध्य शिखरों को देवी माँ के स्तनों के रूप में भावित कर तथा उनसे बह रही गौर उज्ज्वला सरस्वती को माँ का दूध बताते हुए शंकर श्रीविद्या का वह गूढ़ रहस्य भी उद्घाटित कर देते हैं कि इस विद्या को पाने की पात्रता तब ही मिलती है, जब हम देवी के शिशु बन सकें।**

यह मूल छंद और उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**तव स्तन्यं मन्ये धरणिधरकन्ये हृदयत:**
**पय:पारावार: परिवहति सारस्वतमिव।**
**दयावत्या दत्तं द्रविडशिशुरास्वाद्य तव यत्**
**कवीनां प्रौढानामजनि कमनीय: कवयिता।।( 34 )**

काव्यानुवाद –

**नगपति सुता! हृदय पर्वत से, निकसित वेगवति,**
**दुग्धधार सी सदा प्रवाहित, होती रहती सरस्वती!**
**द्रविड़शिशु को करूणा से भर, तुमने जिसका पान कराया,**
**तभी प्रौढ़ कवियों सा वह, अब, रचता छंद नये।( 34 )**

(गोविन्द गुंजन)

**माँ से भक्त की कातर प्रार्थना का वह रुपायन जिसमें भक्त की प्रार्थना साकार हो रही है:**

सौन्दर्यलहरी के तिरतालीसवें छंद में भक्त की कातर प्रार्थना देवी से है। माता की स्तुति करते हुए शंकराचार्य कहते हैं कि हे माता! श्रुतियां अपनी मुर्धा पर जिन चरणों को धारण करती हैं उन चरण कमलों को आप मेरे मस्तक पर भी रखने की अनुकंपा करें। वास्तव में गंगा आपका ही ऐसा चरणोदक है जिसे भगवान शंकर अपने मस्तक पर धारण किए हुए हैं और आपके चरणों में शीश झुकाने से विष्णु के मस्तक पर लगने वाली आपके चरणों की लाक्षा ऐसी प्रतीत होती है जैसे उनके मुकुट में एक सुंदर लाल मणि जड़ दी गई हो।

इस अद्भुत श्लोक में भगवत्पाद यह रहस्य उद्घाटित करते हैं कि सारी श्रुतियां सार रूप में देवी के चरणकमलों के आश्रय को ही अपने परम कल्याण का केन्द्र बताती हैं। देवी महा सरस्वती ब्रम्ह विद्या का ही स्वरूप हैं और वही ब्रम्ह विद्या आत्म ज्ञान को प्रदान करने वाली श्रुतियों का सार हैं।

यद्यपि इन चरणों का आश्रय लेने की शक्ति जीव में नहीं है किन्तु यदि देवी स्वयं अनुकम्पा कर इस चरणाश्रय को हमें उपलब्ध करा दें तो इससे हमारा कल्याण हो जाएगा। भगवत्पाद शंकर इसीलिए देवी से यही प्रार्थना करते हैं कि माँ आप इन चरणों को मेरे मस्तक पर रख दीजिए।

आचार्य शंकर गंगा को भी देवी का चरणोदक कहकर पौराणिक मत से अपना भिन्न मत व्यक्त करते हैं। पौराणिक मत में

गंगा विष्णु के चरणों से उत्पन्न हैं परन्तु यहां वे उसे विष्णु का चरणोदक नहीं कहते बल्कि एक नवीन अभिव्यंजना व्यक्त करते हैं। वे गंगा को देवी का चरणोदक कहते हैं इसका रहस्य यह है कि प्रणव रूप में ब्रम्हा, विष्णु और रुद्र ये तीनों शक्तियां एक हो जाती हैं तथा शक्ति व शक्तिमान में सदैव अभेद रहता है। इसलिए देवी स्वयं ही विष्णु की भी शक्ति हैं। उसी प्रकार जैसे कि वह शिव या ब्रम्ह की शक्ति हैं इसलिए गंगा को देवी का ही चरणोदक कहकर शब्दातीत प्रणव केन्द्र में देवी की शक्ति का परिचय दिया गया है। यह देवी के सर्वव्यापी शक्तिस्वरूप का दिग्दर्शन है।

इस श्लोक का यह भी आशय है कि माया जनित विकारों के कारण जो अंधकार हमारी आत्मा पर छाया है व जिसके कारण हम देवी के चरणों तक नहीं पहुंच सकते अत: जीव यह प्रार्थना करता है कि वे अपने शक्ति चरण हमारे मस्तक पर रख दें जिससे हमारे भीतर व्याप्त मायाजनित विकार नष्ट हो जाएं तथा हम परम श्रेयस को प्राप्त कर आत्म विद्या को प्राप्त कर सकें। यह सम्पूर्ण श्लोक अपने आपमें अद्भुत रूप से बिंबात्मक है तथा भक्त के समूचे अकिंचन भाव को जहां एक ओर व्यक्त करता है वहीं दूसरी ओर वह भगवत्पाद के अकिंचन दर्शन का सार भी प्रस्तुत करता है। देवी और भक्त के भावमय रूपायन का यह अद्भुत शब्दचित्र है।

यह मूल छंद और उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**श्रुतीनां मूर्धानो दधति तव यौ शेखरतया**
**ममाप्येतौ मात: शिरसि दयया धेहि चरणौ।**
**ययो: पाद्यं पाथ: पशुपति जटाजूट तटिनी**
**ययोर्लाक्षा लक्ष्मीररुण हरिचूडामणिरुचि।।( 43 )**

काव्यानुवाद –

**श्रुतियों की मुर्धा पर रहने वाले, अपने चरण कमल,**
**मेरे मस्तक पर भी रख दो, माता इनको परम विलम।**
**गंगा जिनका चरणोदक है, शिव मस्तक पर धारे,**
**जिनकी लाक्षा विष्णु की भी, मुकुट मणि बनती।।( 43 )**

(गोविन्द गुंजन)

**विवाह के समय देवी के चरण कमल अपने हाथों से प्रस्तर पीठ पर स्थापित करते हुए शिव:**

सौन्दर्यलहरी के सैतालीसवें छंद में शिव पार्वती के विवाह प्रसंग का चित्रण है। देवगुरु बृहस्पति शिव पार्वती के विवाह की विधि संपन्न करा रहे हैं। पाणिग्रहण के समय कुल रीति के अनुसार शिव को देवी के चरण अपने हाथों से उठा कर एक प्रस्तर शिला पर स्थापित करने होंगे, जिसका विरोध भूतगण करते हैं, किन्तु बृहस्पति मुस्कुरा कर शिव से कहते हैं कि यह कुल रीति संपन्न करना ही होगी। इसके बाद शिव बहुत आदरपूर्वक देवी के चरण कमलों को अपने हाथ से उठा कर प्रस्तर पीठ (शिला खंड) पर स्थापित कर देते हैं। उल्लेखनीय है कि इस श्लोक से प्रभावित होकर बाणभट्ट ने अपने नाटक पार्वती परिणयम् में भी इस प्रसंग को एक अंक में प्रस्तुत किया है।

विवाह वेदी, पार्वती और शिव का विवाह, पुरोहित बृहस्पति, शिव के बाराती भूतगण और विवाह समारोह में आये देवगण, विवाह मंडप में नववधु पार्वती के चरण कमल उठा कर प्रस्तर पीठिका पर स्थापित करते महादेव, कुल रीति संपन्न होने पर प्रसन्न गिरिराज के परिजन पुरोहित इत्यादि की इस एक श्लोक में सजीव झांकी भगवत्पाद ने उपस्थित की है। यह एक पूरा विराट दृश्य है। यह चार पंक्ति की एक माइक्रो फिल्म में समायी हुई एक पूरी शाश्वत कथा है, जो मन के अंदर जाकर स्मृति का अंग बन जाती है। यह मूल श्लोक और उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**पदं ते कीर्तीनां प्रपदमपदं देवि विपदां**
**कथं नीतं सद्भि: कठिनकमठीकर्परतुलाम्।**
**कथं वा बाहुभ्यामुपयमनकाले पुरभिदा**
**यदादाय न्यस्तं दृषदि दयमानेन मनसा।।( 47 )**

काव्यानुवाद –

**चरण कीर्ति के आलय देवि, विपदा को स्थान नहीं,**
**कच्छप के कठोर मस्तक से, तुलना करते भान नहीं।**
**पाणिग्रहण के समय हथेली पर लेकर ही इनको,**
**शिव ने कोमल जान जतन से, धरे शिला के ऊपर।।( 47 )**

(गोविन्द गुंजन)

**देवी के पदन्यास का अनुसरण करते राजहंस:**

सौन्दर्यलहरी के पचासवें छंद में एक और मनोहारी चित्र मिलता है। यहाँ देवी के राजहंस उनके पदन्यास या चलने की सुललित गति का अनुसरण करते हुए दिखाए गये हैं। हंस की चाल को बहुत सुन्दर माना जाता है, परंतु यह चाल राजहंसों ने देवी के पदन्यासों का अनुसरण करके सीखी है। चलते समय देवी की मणि जड़ित पायल से जो मधुर ध्वनि निकलती है, उसे ही वे राजहंस अपना पाठ समझ कर सुनते हैं। अच्छी और सुन्दर चाल चलन के माध्यम से अच्छे आचरण को सीखने और अपनाने की शिक्षा भी यहाँ दी गयी है। यह मूल श्लोक एवं इसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**पदन्यासक्रीडापरिचयमिवारब्धुमनस:**
**स्खलन्तस्ते खेलं भवनकलहंसा न जहति।**
**अतस्तेषां शिक्षां सुभगमणिमञ्जीररणित-**
**च्छलादाचक्षाणं चरणकमलं चारुचरिते।।( 50 )**

काव्यानुवाद –

**देवी तुम्हारे अनुगामी बन, पीछे पीछे आते,**
**राजहंस भी पदन्यास की, शिक्षा को हैं पाते।**
**बजते मणि मंजीर तुम्हारे, सुभग सुहाने सुंदर,**
**गमन गति के पाठ सुनाते, चारू चरित्रे माता।।( 50 )**

(गोविन्द गुंजन)

**चँद्रमा के अक्षय श्रृंगारदान का अनूठा बिंबः**

अब सौन्दर्यलहरी के एक अनूठे और दुर्लभ बिंब पर दृष्टि डालते हैं। ऐसा बिंब विश्व साहित्य में भी दुर्लभ है। इसमें देवी त्रिपुरसुन्दरी के ऐसे विशेष श्रृंगारदान का चित्र है, जिसमें से कितनी भी सौन्दर्य सामग्री का उपयोग कर लिया जाए, वह कभी खाली नहीं होता। इसमें सौन्दर्य के अविनाशी स्वरुप के दर्शन होते हैं। इस सृष्टि में सौन्दर्य की अधिष्ठात्री देवी त्रिपुरसुन्दरी जिन उपादानों से अपना श्रृंगार करती हैं, वे उपादान लौकिक उपादानों की तरह क्षणभंगुर नहीं हैं, इसीलिये सौन्दर्य भी अविनाशी है। महाभारत में श्रीकृष्ण ने भी द्रौपदी को एक अक्षय पात्र दिया था, किन्तु यह अक्षय श्रृंगारदान और भी विशिष्ट है।

शंकराचार्य हमें आकाश में चँद्रमा को एक ऐसी श्रृंगारदानी के रूप में दिखाते हैं, जिसमें जल युक्त कर्पूर और कस्तूरी भरी हुई है, यह प्रसाधन पेटिका मरकत मणि से निर्मित है, जिसमें भरा किरणों का कर्पूर उसे यह उजला रंग दे रहा है, इसमें रखी हुई कस्तूरी के कारण इसमें कुछ काले धब्बे दिख रहे हैं। देवी इन उपादानों से स्वयं का और प्रकारांतर से इस ब्रह्मांड का श्रृंगार करती हैं, इसलिए जितनी सामग्री का देवी उपयोग कर लेती हैं, उतनी ही सामग्री ब्रह्मा फिर से श्रृंगारदान में भर देते हैं। अनादिकाल से देवी इस मरकत मणि से बने चँद्रमा रूपी श्रृंगारदान से स्वरूपी सृष्टि का श्रृंगार कर रही हैं और जो सृष्टा हैं, ब्रह्म है, वह इस श्रृंगारदान को सौन्दर्य के उपादानों से अनादिकाल से भरते ही रहते हैं। इसे कभी रिक्त नहीं होने देते। इस अनुपमेय शब्द चित्र का मूल शिखरिणी छंद और उसका काव्यानुवाद इस प्रकार है –

**कलङ्कः कस्तूरी रजनिकरबिम्बं जलमयं**
**कलाभिः कर्पूरैर्मरकतकरण्डं निबिडितम्।**
**अतस्त्वद्भोगेन प्रतिदिनमिदं रिक्तकुहरं,**
**विधिर्भूयो भूयो निबिडयति नूनं तव कृते।।( 54 )**

काव्यानुवाद –

**मरकत मणि श्रृंगार पेटिका, बना हुआ है इन्दु,**
**किरणों का कर्पूर भरा है, कस्तूरी के काले बिन्दु।**
**जल में घुली कर्पुर कस्तूरी जितनी प्रतिदिन लगती,**
**उतनी फिर भर देता है विधि, रिक्त नहीं यह होती।( 54 )**

(गोविन्द गुंजन)

यहाँ चंद्रमा को जिस मरकत मणि से बना हुआ बताया गया है, वह पुराणों के अनुसार केवल शिव के ही पास थी। इस मणि की विशेषता यह है कि यह सभी मनोकामनाओं को पूर्ण कर देती है। महाभारत के अनुसार शिव ने प्रसन्न हो कर यह मणि युधिष्ठिर को दी थी जो बाद में उन्होंने मतंग मुनि को दे दी थी। शिव ने इसी मणि से चँद्रमा को बनाया है, देवी के श्रृंगारदान के लिए। उसमें शिव की कर्पूर गौरं रूपाभा झलकती है, इसीलिये यह देवी का प्रिय श्रृंगारदान बना। यह सभी मनोकामनाओं को पूर्ण करने वाला अक्षयपात्र हैं सौन्दर्य एवं कलाओं के समस्त उपादानों का।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सौन्दर्यलहरी एक साधना का ही नहीं काव्यकला का भी उत्कृष्ट ग्रंथ है। इस ग्रंथ में देवी के साकार स्वरुप के सौन्दर्य वर्णन से यह भ्रम नहीं होना चाहिए कि निराकार ब्रह्म को और उस ब्रह्म के अद्वैत को प्रतिपादित करने वाले शंकराचार्य साकार सौन्दर्य की उपासना का मार्ग कैसे बता सकते हैं? यह ऊपरी सतह पर विरोधाभासी प्रतीत होता है। आदिगुरू ने साकार और निराकार ब्रह्म के विषय में अनेक स्थलों पर कहा है कि सगुण ब्रह्म और निराकार ब्रह्म में वस्तुतः कोई भेद नहीं है। **साकार, ब्रह्म का उपास्य रूप है तथा उसका ज्ञेय रूप निर्गुण है।**

अद्वैत में सगुण तथा निर्गुण में कोई भेद नहीं है। सगुण के माध्यम से निर्गुण में समाहित हो जाना शाक्त मार्ग है। अद्वैत मतानुसार ब्रह्म के दो स्वरुप हैं, नामरूप उपाधियों से युक्त सगुण ब्रह्म और समस्त उपाधियों से रहित निर्गुण ब्रह्म। दोनों में कोई भेद नहीं है। सगुण ब्रह्म माया की उपाधि से संयुक्त होने के कारण सोपाधिक, सविशेष ब्रह्म या ईश्वर कहलाता है। निरुपाधिक ब्रह्म को पर ब्रह्म और सगुण ईश्वर अपर ब्रह्म कहे जाते हैं।

यहाँ केवल सौन्दर्यलहरी के उदाहरणस्वरूप कुछ ऐसे ही छंदों पर विचार किया गया है जिनसे आदिगुरू की काव्यकला और उनमें परिलक्षित हो रही अनूठी बिंब शैली तथा उसकी चित्रात्मकता के संबंध में परिचय प्राप्त हो सके। यहां यह भी उल्लेखनीय है कि इन श्लोकों के आधार पर चित्रांकन व शिल्पांकन दोनों ही किए जा सकते हैं।

–18, सौमित्र नगर, सुभाष स्कूल के पीछे,
खंडवा (म.प्र.) 450001, मोबाइल: 9589673665

■

आलेख

**11वीं शताब्दी में जन्मे भक्ति संत : हिंदू परंपराओं में समता, सहजता और सरलता के भाव का किया समर्थन**

# रामानुजाचार्य : भक्ति और मुक्ति को बनाया सर्वसुलभ

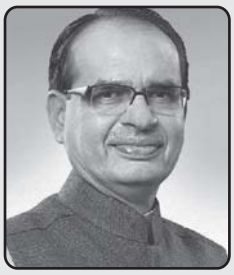

**शिवराज सिंह चौहान**

श्री गीता में योगेश्वर श्रीकृष्ण 'संभवामि युगे युगे' का जब संदेश देते हैं, या जब गोस्वामी तुलसीदास रामचरित मानस में 'जब जब होई धर्म की हानि' चौपाई में 'तब तब प्रभु धरी विविध सरीरा' की घोषणा करते हैं, 'तब-तब वीर प्रसूता, पुण्य प्रसूता, ज्ञान प्रसूता और तप प्रसूता भारतमाता के प्रति विश्वास और भी प्रगाढ़ हो जाता है। चोल साम्राज्य के अंतर्गत संपूर्ण दक्षिण भारत में जब ऊंच-नीच, छुआछूत, अगली-पिछड़ी जाति, वर्ग आदि के नाम पर विभेद चरम पर था, तब रामानुजाचार्य में समस्त संसारी जीवों के कल्याण हेतु शरीर धारण किया था। वेदांत सिद्धांत के समर्थन और दूषित मतों को दूर करे के लिए संकल्पित रामानुजाचार्य ने प्रारंभ में कांचीपुरम के आचार्य यादव प्रकाशजी से विद्या प्राप्त की। असाधारण प्रतिभा संपन्न बालक रामानुज ने कुछ श्रुतियों के अर्थ में अपनी असहमति व्यक्त की, क्योंकि उनका जन्म ही समता, समरसता और प्राणीमात्र में नारायण के दर्शन के लिए हुआ था, तो उनके तर्कों से क्रोधित होकर उनके गुरु यादव प्रकाश ने ही उनकी हत्या की योजना बनाई थी। पर बाद में गुरु ने ही शिष्य का आचार्यत्व स्वीकार किया। यह विश्व इतिहास में अनूठा उदाहरण था। हमारे शास्त्रों में 'शिष्यात् पुत्रात् पराजयम्' की कामना व्यकत की गई है, जिसे रामानुजाचार्य के जीवन में चरितार्थ देखा जा सकता है।

श्रीरंगम के मठाधीश आलवार संत यमुनाचार्य के वेंकटवास के बाद उनके संकेत को समझकर रामानुज ने प्रतिज्ञाएं की थी कि वह वैष्णव मत में रहकर अज्ञानी जनों को पंच संस्कारों से युक्त करेंगे। उन्होंने श्रीभाष्य, ब्रह्मसूत्र, विष्णुसहस्त्र नाम और दिव्यप्रबंधम की टीका लिखकर यमुनाचार्य को दिए हुए वचनों को पूर्ण किया। उनके ये ग्रंथ आज भी ज्ञान, भक्ति और वैराग्य के शीर्ष ग्रंथों में सम्मिलित हैं। अपने गुरु गौष्ठीपूर्ण महाराज से दीक्षा लेने के बाद रामानुज के मन में जनकल्याण की भावना और भी बलवती होती गई। अठारह बार निवेदन करने पर गुरु के रामानुज को अत्यंत गोपनीय बताते हुए 'ऊँ नमो नारायणाय' मंत्र की दीक्षा दी और कहा कि इसे सुनने मात्र से मुक्ति मिल जाती है। रामानुज ने विचार किया कि ऐसा मंत्र सबको बताया जाना चाहिए और मंदिर की छत पर जाकर सैकड़ों नर-नारियों को मंत्र सुनाया। गुरु क्रोधित हुए, तब सर्वहितेषी रामानुज का सहज उत्तर था। कि सैकड़ों नागरिकों की मुक्ति के लिए मुझे नरक भी जाना पड़े तो स्वीकार है। शिष्य के उत्तर से गुरु भी अत्यंत प्रसन्न हुए। उनका यह कार्य भक्ति व मुक्ति को सर्वसुलभ बनाने की दिशा में अत्यंत महत्वपूर्ण था।

रामानुजाचार्य का संपूर्ण दर्शन अपने आप में एक विराट संसार है, जो समता, समानता और बंधुत्व की सुदृढ़ नींव पर स्थापित है। उन्होंने पूरे जीवनकाल में संस्कृत और तमिल परंपरा के मिलन बिंदु के रूप में तो काम किया ही, साथ ही कठोर, धार्मिक क्रियाओं को जनसामान्य के लिए सहज और सरल बनाया तथा समाज में सब प्रकार के वर्ग विभेद के बीच समानता के सेतु बनाए। वे अपने पूरे जीवनकाल में तीन प्रमुख आयामों पर कार्य करते रहे। पहला- परंपराओं और सामूहिक समस्याओं में समन्वय बनाना, दूसरा- वेदांत को जीवन की जटिलता से जोड़ते हुए ब्रह्मसूत्र पर श्रीभाष्य लिखना और तीसरा- भक्ति को जनसामान्य के लिए ईश्वर की प्राप्ति का तरीका बना देना।

राष्ट्र कवि रामधारी सिंह दिनकर भी यह सगर्व लिखते हैं कि सामाजिक समता की दिशा में तत्कालीन ब्राह्मण जहां तक जा

सकता था, आचार्य रामानुज वहां तक गए। उन्होंने ब्राह्मणों के नियंत्रणों की अवहेलना भी नहीं की। नदी में स्नान करके लौटते समय एक शूद्र के कंधे का सहारा लेने पर आपत्ति करने वालों को उन्होंने उत्तर दिया था कि मैं तो शरीर और मन दोनों का स्नान करता हूं। ब्राह्मण का सहारा लेकर नदी तट पर जाता हूं तो शरीर का स्नान होता है पर उच्चता का भाव पानी से नहीं मिटता। जब मैं शूद्र का सहारा लेकर लौटता हूं तो मेरा अहंकार भी धुल जाता है और दिव्य आनंद की अनुभूति होती है। हिंदू परंपराओं में समता के भाव का प्रभावी तरीके से समर्थन करना व इसे व्यावहारिक धरातल पर चरितार्थ करने के रामानुजाचार्य के कार्य की प्रशंसा बाबासाहेब आम्बेडकर ने भी की है। रामानुजाचार्य सब में परमात्मा की समदृष्टि से दर्शन करते थे और अपनी पत्नी में इस दृष्टि का अभाव देखने पर उन्होंने गृहस्थाश्रम का त्याग कर सन्यास ग्रहण कर लिया था। उनकी समदृष्टि के कारण ही तथाकथित निम्न जाति का उद्धार हुआ और उन्हें मंदिरों में प्रवेश तथा समाज में सम्मान का स्थान मिला।

रामानुजाचार्य ने अपने उपदेश और कार्यों में भारतीय परंपरा के शाश्वत मूल्यों को उद्घाटित किया। उनकी सबसे महत्वपूर्ण दार्शनिक स्थापना उनका विशिष्ट अद्वैत का ही दर्शन है। उन्होंने अद्वैतत्व को स्वीकार किया, लेकिन जगत को मिथ्या नहीं माना। उनका मत था कि ब्रह्म सत्य है तो जगत भी सत्य है क्योंकि इसका निर्माण भगवान के ही पंचमहाभूतों के शरीर से हुआ है। रामानुजाचार्य ने श्रीरंगम से अपना समतामूलक अभियान चालू किया था। उनकी भक्ति भगवान के गुणगान और नामस्मरण की भक्ति है। उनकी भक्ति समता, सहजता और सरलता की भक्ति है। यही कारण था कि उनकी भक्ति भावना का प्रसार सहज रूप में उत्तर भारत में भी हुआ। रामानुजाचार्य के संपूर्ण व्यक्तित्व के अध्ययन, मनन, अनुशीलन और अनुसरण के लिए यह जीवन बहुत छोटा है। प्रधानमंत्री ने उकनी अत्यंत भव्य प्रतिमा का अनावरण करके उनके संदेशों को फिर से दोहराने का हमें अवसर प्रदान किया है। रामानुजाचार्य ऐसे महापुरुष थे, जिन्होंने मानव मात्र के लिए ईश्वर की प्राप्ति के द्वार खोल दिए। उन्होंने भक्ति और शरणागति में किसी भी भेद का स्थान नहीं छोड़ा था और यह केवल बौद्धिक तर्क के आधार पर नहीं अपितु शास्त्रीय आधार पर सिद्ध किया था।

-लेखक मध्य प्रदेश के मुख्यमंत्री हैं।

साभार


# कला समय

**आगामी अंक**
**अप्रैल-मई 2022**

**स्वतंत्रता आन्दोलन में मध्यप्रदेश की गौरव गाथा**

**विशेषांक**

**( 1857-1947 )**

**दस संभाग**

**बावन जिले**

**अतिथि सम्पादक - श्री कैलाशचन्द्र घनश्याम पाण्डेय**

# उस्ताद ज़िया फ़रीदुद्दीन डागर

● **उस्ताद, बहुत से लोग तो यह मान रहे हैं कि सन् 2012 में ये दुनिया खत्म हो जाएगी, आप क्या सोचते हैं ?**

●– अच्छा, 2012 में दुनिया खत्म ! भाई, जिसके लिए खत्म होना है उसके लिए हो जाएगी, हम तो बचे रहेंगे। अरे ये सब कहने की बातें हैं। रखने वाला और मारने वाला तो वो ऊपर वाला मालिक है। हम तो उस ऊपर वाले पर भरोसा रखते हैं। वो किसको बचायेगा और किसको मारेगा, वही जानता है। उसे जिसको मारना है उसे तो अभी भी मार रहा है। मगर, हमें भरोसा है कि हम सौ साल तक जिन्दा रहेंगें। मैं इतनी जल्दी मरने वाला नहीं हूँ।

● **जी, उस्ताद। क्या मालूम हम आपके पहले चले जाएँ ?**

– बेटा, सौ साल तक तो मैं तुम लोगों को सुनूँगा।

● **आज जो सांगीतिक परिवेश है, क्या आप उससे खुश हैं ?**

– नहीं, मैं खुश नहीं हूँ। उसमें सुर का वो आनन्द नहीं रहा, बोरियत है। सुर के साथ गहराई से कोई लगाव नहीं है। पहले जो सुर की बातें होती थीं, वह अब होती ही नहीं हैं। हमने नृत्य भी देखा या गाना–बजाना भी सुना तो ऐसा सुना कि जिसका जवाब नहीं। उस्ताद रजब अली खाँ देवास वाले का गाना मैंने ऐसा सुना कि मैं क्या बताऊँ तुम्हें ।

● **उस्ताद, क्या पहले के ज़माने में बुरे गाने.बजाने वाले नहीं होते थे ?**

– थे, जरूर थे।

● **तो उनका भी तो जिक्र होना चाहिए ? पहले भी कुछ लोग बुरे थे तो आज भी कुछ लोग बुरे हैं। पहले कुछ लोग अच्छे थे तो आज भी कुछ लोग अच्छे हैं। इस बारे में आपका क्या ख्याल है ?**

– तुम लोग मुझे बातों के चक्कर में मत उलझाओ। मैं तो कहूँगा कि आज वैसा कोई गाने वाला है नहीं।

● **जी, उस्ताद। लेकिन आप अगर ये कह रहे हैं कि जो पुराना था वो सब ठीक था और जो नया है वो सब खराब है, तो बात समझ में नहीं आती।**

– देखो, एक बात तो पक्की है कि भारतीय संगीत के साथ दूसरा कुछ मिक्सचर हो ही नहीं सकता। दूसरी बात, अब गाने–

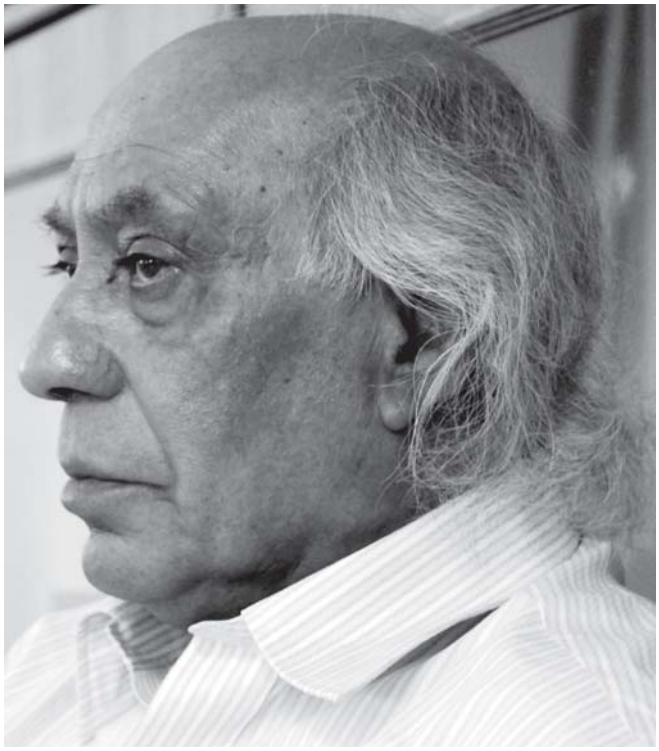

बजाने का स्वरूप भी बदल गया है। अब उसमें दिखावा और नाटकबाजी ज्यादा होने लगी है। भाई मैं तो कहता हूँ कि आधा घण्टे ही गाओ–बजाओ, पर ऐसा गाओ–बजाओ कि दिल को छू जाए। लेकिन ऐसा नहीं हो रहा है। आज दिखावा ज़्यादा और गाना–बजाना कम हो रहा है।

● **उस्ताद, क्या आप नहीं मानते कि आज की युवा पीढ़ी ज्यादा समझदार, किसी बात को जल्दी से समझने वाली और ज़्यादा ऐस्थेटिक सेंस वाली है। किसी चीज़ के प्रस्तुतीकरण में पहले की अपेक्षा ज्यादा सक्षम है ?**

– यार ! तुम बात को किसी भी तरीके से घुमाओ, लेकिन मैं तो यही कहूँगा कि मज़ा नहीं रहा। दो तरह के संगीत होते हैं– एक तो ताली बजवाने वाला और अखबारों में छपने वाला और दूसरा, गाना–बजाना। ऐसा हो कि लिखने वाला ये सोचे कि अब क्या लिखूँ इसके बारे में। जो उसने सुन लिया, उसको बयान करना भूल जाए। आज भी कुछ बुजुर्ग

कलाकार ऐसे हैं जिनका पहले गाना–बजाना बहुत अच्छा था।

- **उन्नीस सौ चौतीस में पण्डित भातखण्डे जी ने अपनी क्रमिक पुस्तकमाला में लिखा है कि आज के ज़माने के गायक बहुत जल्दी में रहते हैं, उनके गाने बजाने में चैन नहीं है। जबकि उन्नीस सौ चौंतीस के आसपास जो संगीतकार थे, उनको आज हम बहुत अच्छा मान रहे हैं। लेकिन उन्होंने तो उस समय के गायकों के बारे में ये कहा कि आज के गायकों में धैर्य की कमी है, गाने में ठहराव नहीं है और उनका गाना सुनते समय ऐसा लगता है कि इन्हें कहीं जाना है। तो उस्ताद, आज भी आप यही बात कह रहे हैं जो उन्होंने अस्सी साल पहले कही थी ?**

– मैं तो आज की बात कह रहा हूँ। जो आज हो रहा है और जो मैं महसूस कर रहा हूँ वो कह रहा हूँ। उस जमाने में तो उस्ताद लोग तानपुरा छीनकर महफिल से भगा देते थे। उस जमाने की तो तुम बात ही छोड़ो। उस जमाने में गवैये सामने बैठते थे और सुनते थे आज कोई गवैया सामने बैठकर नहीं सुनता। अगर सुनता भी है तो वह कुछ कहता नहीं। आज के कलाकार को जल्दी से नाम और ऐसा चाहिए। आज के कलाकारों में वो गहराई है ही नहीं और ऐसे कई कलाकारों को सरकार भी पद्म पुरस्कारों से नवाज़ रही है जो उस स्तर के नहीं है परन्तु राजनीतिज्ञों के आगे.पीछे धूमकर वे पुरस्कार कबाड़ लेते है। आज भी जो अच्छे कलाकार है यो दस.बीस साल पहले जो गाना–बजाना करते थे वो अब वैसा नहीं कर रहे है।

- **आज की युवा पीढ़ी अच्छे समर्पण भाव से अगर रियाज़ करे तो क्या वह पहले से अच्छा गाना बजाना कर सकती है ?**

– बिल्कुल कर सकती है। मेरा एक ही कहना है कि अपनी प्रसिद्धि के चक्कर में संगीत को दबाइये मत। उसे खुलकर लोगों के सामने रखने का फर्ज कलाकार का है। मैं कहता हूँ कि लोग उसे सुनेंगे और पसन्द भी करेंगे। मगर आप उसे जनता के सामने रखेंगे तब न!

- **संगीत सीखने के बारे में कुछ कलाकारों का यह कहना है कि यह बहुत कठिन साधना है। इसमें कई कई वर्ष लग जाते हैं और यह कई जन्मों तक करना पड़ता है। और ऐसी कई बातें जो साधारण लोगों को संगीत सीखने से दूर रखती हैं और उनमें भय पैदा करती हैं। आपका क्या कहना है ?**

– देखो कोई अगर ईमानदारी से करे तो वो इसे चार–पाँच साल में कर सकता है। बाकी रहा सीखने का और करने का, वो ज़िन्दगी भर चलता रहता है। आखिर तुम लोगों ने भी तो चार साल सीखने के बाद गाना शुरू कर दिया था।

- **जी, उस्ताद। हमने भी लाहौर (पाकिस्तान) की आलिया रशीद को चार साल में स्टेज पर गाने लायक बना दिया। जबकि जब वह आयी थीं, तब उसे शास्त्रीय संगीत के बारे में कुछ भी जानकारी नहीं थी।**
- **गायन संगति में हारमोनियम को लेना आप कहाँ तक उचित समझते हैं ?**

●– भारतीय शास्त्रीय संगीत को हारमोनियम पर प्रस्तुत किया ही नहीं जा सकता, इसलिए उसकी संगति लेना ही नहीं चाहिए। श्रुतिभेद का वर्णन हारमोनियम में सम्भव नहीं है।

- **लेकिन आज के और अब से पहले की पीड़ी के सभी गायक हारमोनियम संगति लेते रहे है ?**

●– भाई अब मैं क्या कह सकता है मेरी जो राय है वो मैंने बता दी। सिर्फ तानपूरा पर याना बहुत कठिन काम है क्योंकि उसमे बेसुरापन साफ दिखाई देता है। अरे मैं अब क्या बताऊँ हारमोनियम के चक्कर में लोग तानपुरा मिलाना भूल गये है। लोग आजकल पूरा ऑर्केस्ट्रा साथ में रखकर गाते है स्वरमण्डल हारमोनियम, इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा और कोई एकाध और संगत जैसे सारंगी या वॉयलिन इन सबके साथ गाने बैठते हैं। और अब तो की बोर्ड भी साथ में बजने लगा है। इन सबके साथ आज कलाकार केवल स्केल गा रहा है ? उसमे राग कहाँ है पता ही नहीं चलता। तानपुरे तो आजकल के गवैये पीछे सिर्फ दिखावे के लिए रखते हैं। इतने सारे साज़ों की आवाज़ आपस में भी स्वर में नहीं मिलती।

- **इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा भी आप पसन्द नहीं करते हैं जबकि हम लोग भी इसका उपयोग करते हैं।**

– आप करिये, लेकिन मैं पसन्द नहीं करता।

- **उस्ताद इसमें आपको क्या खराबी लगती है ?**

– देखो तुम लोगों को मैने ही ठोक–पीटकर बनाया है। अब तुम मुझसे तर्क मत करो समझे। तानपुरे की आवाज के साथ जो आवाज़ लगेगी और जो स्वर संवाद उसमें सुनाई देगा, वो इसमें सम्भव नहीं।

- **लेकिन इन्हीं तानपुरों को बजाकर तो इलेक्ट्रॉनिक चिप्स बनी है और यही तानपुरे जब माइक से होकर गुजरते हैं तो फिर वो बात कहाँ रही ?**

– ठीक है, लेकिन उसमें वो बात नहीं आती।

- **उस्ताद, हर जगह तानपुरा साथ ले जाना म्भव नहीं हो पाता। हर जगह अच्छे तानपुरे मिलना भी सम्भव नहीं। ऐसे में ख़राब तानपुरों की अपेक्षा इलेक्ट्रॉनिक तानपुरे कहीं ज्यादा अच्छे बजते हैं। इसमें स्वर उतरने और चढ़ने की समस्या भी नहीं रहती। दो घण्टे के कन्सर्ट में क्या गारण्टी है कि तानपुरे अपने स्वर से कम-ज्यादा नहीं होंगे, चाहे तानपुरे कितने ही अच्छे हों। कई दफा अच्छे तानपुरे छेड़ने वाले भी नहीं मिलते हैं। फिर तानपुरों की आवाज़ जब माइक से होकर स्पीकर्स में जाती है तो वहाँ भी तो उसका स्वरूप बदलकर एक तरह से इलेक्ट्रॉनिक ही हो जाता है। और इलेक्ट्रॉनिक तानपुरा, तानपुरे के उसूलों पर ही आधारित है। इसमें उसूल नहीं बदलते। खरज के तार से गन्धार भी स्पष्ट सुनाई देती है।**

– मन समझाने के लिये गालिब ख्याल अच्छा है। ठीक है तुम लोग इलेक्ट्रॉनिक तानपुरे का उपयोग करो, मैं मना नहीं करता। अपनी-अपनी पसन्द है, लेकिन ये मुझे पसन्द नहीं है। मैं खुश हूँ कि तुम ध्रुपद गा रहे हो और जो मैंने सिखाया है, वही गा रहे हो।

- **उस्ताद, हम तो यही कहते हैं कि डागर घराने के इतिहास में अपने घराने से बाहर सिखाने का काम या तो बाबा बेहराम ख़ाँ साहब ने किया या फिर आपने किया है, इसका इतिहास साक्षी है।**

– हम दोनों भाइयों का तो यही उसूल रहा है कि जितना सिखा सकते हो सिखाओ। कोई ये न कहे कि यार हमने इतनी ख़िदमत की और उसके बाद भी हमें नहीं सिखाया। मैं किसी को निराश नहीं करता। किसी के साथ ये न हो कि बिसाले सनम इधर के भी न रहे और उधर के भी। हमारा काम है। सिखाने का। आगे शागिर्द की मेहनत और उसका भाग्य। जितना करेगा उतना पाएगा।

- **वीणा पर जो त्रिभिन्न स्वर की क्रिया होती है, क्या वह गाने में सम्भव है?**

– वीणा में जब परदों पर तीन भिन्न स्वर एक साथ बजाकर त्रिभिन्न स्वर की क्रिया की जाती है, उसे ही त्रिभिन्न स्वर कहते हैं। वैसा ही गाने में भी सम्भव है। तुम लोग यह कभी-कभी करते हो। लेकिन यह बारीक काम है। कितने लोग तानपुरे के साथ उसका संवाद कर पाते हैं। तुम लोग जो गाने में इसका प्रयास करते हो वह अच्छा लगता है।

- **घराने का मतलब क्या है?**

– घराने का मतलब राजघरानों से नहीं है, संगीत में घराने का मतलब है गाने का एक विचार या तरीका। एक खास और नई तरीके की जब कोई गायकी आती है और उसका अनुसरण आगे की पीढ़ियों में भी होने लगता है तो वह एक घराना बन जाता है।

- **क्या कोई घराना आगे बढ़ सकता है?**

– बिलकुल डागर धराने को ही देखें तो उस्ताद बेहराम ख़ाँ के कितने शिष्य हुए और सबने आगे जाकर अपने.अपने घराने बना लिये।

- **तो फिर वो डागर घराना कहाँ रहा?**

– बेहराम ख़ाँ साहब ने सबको उसूलों की तालीम दी। उन्हीं उसूलों के आधार पर जब नये विचार ने जन्म लिया तो वो आगे जाकर एक नया घराना बन गया। पटियाला, आगरा, किराना आदि घरानों का जन्म इसी प्रकार हुआ।

- **जब कोई शिष्य हूबहू अपने गुरु की नकल करता है, जिसमें आवाज़ और गायकी दोनों ही सम्मिलित हैं, तो क्या इसे आप घराने को आगे बढ़ना मानते हैं?**

– देखो इसमें दो बातें हैं। ये पेचीदा मामला है। जब आप आवाज़ की नकल करते हैं तो वो गलत है, क्योंकि गुरु की आवाज़, गुरु की ही आवाज़ है। वह आपकी नहीं हो सकती। भगवान ने हर एक को अलग आवाज़ दी है। लेकिन स्टाइल अलग चीज़ हो गई। आवाज़ व्यक्तिगत है लेकिन स्टाइल निजी नहीं है। शिष्य जब अपनी आवाज़ रखकर गुरु के गाने की स्टाइल में गायेगा तब भी यह समझ में आ जाता है कि यह पटियाला घराना है या जयपुर या डागर घराना और शिष्य तब ही आगे बढ़ सकता है, कुछ कर सकता है। हम आज फिल्मों में भी देख रहे हैं कि लता, आशा, मोहम्मद रफी और किशोर कुमार की नकल करके जो नये बच्चे गा रहे हैं, उनको कुछ समय के लिये तो वाहवाही मिल जाती है, लेकिन वो ज्यादा दूर तक नहीं जा सकते हैं। और जब उनको यह बात समझ में आती है कि नकल करके गलत किया, तब तक समय निकल चुका होता है। इसलिए मैं यही कहूँगा कि गुरु की आवाज़ की और गायकी की हूबहू नकल करके गाने से घराना या परम्परा आगे नहीं चढती। आप अपने घराने की गायकी अपनी आवाज़ में अपने विचार से प्रस्तुत करिये तो वह अपने आप अलग हो जायेगी। नकल, नकल ही कहलायेगी वो कभी असल हो ही नहीं सकती।

- **नये गायक की अपनी आवाज़ निकलकर सामने आये, इसके लिए क्या करना चाहिये?**

●– नया गायक जब सही मार्गदर्शन में आकार-इकार रखकर रियाज़ करेगा तो उसकी आवाज़ खुद-ब-खुद बनती चली जायेगी। गुरु का मार्गदर्शन इसमें बहुत ज़रूरी है, क्योंकि जैसे आवाज़ चुराकर गाना, नाक से गाना आदि इस पर गुरु ज़रूर नज़र रखेगा। तब ही सही आवाज़ निकलकर सामने आयेगी। स्त्रोत: पुस्तक सुनता है गुरु ज्ञानी ■

साक्षात्कार

वरिष्ठ साहित्यकार, समीक्षक श्री लक्ष्मीनारायण पयोधि जी से डॉ. लता अग्रवाल की बातचीत

# 'लैंगिक भिन्नता का रचना पर प्रभाव तो पड़ता है'

**नि:संदेह लेखन आंतरिक भावना का कर्म है। किसी घटना या अनुभव का प्रत्येक व्यक्ति के अंतर्मन पर अलग-अलग प्रभाव पड़ता है। जब बात लेखन के क्षेत्र की आती है तो यही भाव शब्दों के माध्यम से साहित्य का आकार ले लेते हैं। यही वजह है कि कहीं न कहीं चुप चुप सी ही सही एक आवाज है स्त्री और पुरुष लेखन के बीच के अन्तर को लेकर। शारीरिक बनावट के साथ-साथ दोनों की सोच, सम्वेदना, किसी स्थिति को देखने का नजरिया, किसी घटना पर प्रतिक्रिया.... आदि सभी में भेद है इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता। स्त्री को सदैव कांता सम्मत भाव से परिपूर्ण देखा जाता है, वहीं पुरुष में पौरुष भाव प्रमुखता से दिखाई देता है। दोनों ही समाज का महत्वपूर्ण अंग हैं, चाहे वह लेखक/कवि हो या लेखिका/कवयित्री। इस दृष्टि से दोनों की सोच साहित्य के लिए महत्वपूर्ण है। क्या है यह भेद.... ?सभी के मन में जिज्ञासा रहती है। इसी से सोचा क्यों न वरिष्ठ साहित्यकार, समीक्षक और अध्येता आदरणीय लक्ष्मीनारायन पयोधि जी से इस सम्बन्ध में चर्चा की। उसी के कुछ अंश आपके समक्ष प्रस्तुत है।**
**( लक्ष्मीनारायण पयोधि जी म.प्र. शासन आदिम जाति कल्याण विभाग में सेवारत रहे हैं )**

- **लेखन के क्षेत्र में स्त्री और पुरुष दोनों ही सक्रिय हैं। क्या आप दोनों के लेखन में अंतर पाते हैं ?**

– अंतर तो महसूस होता है। यद्यपि इस प्रश्न को अक्सर यह कहकर टाल दिया जाता है कि 'लेखन तो लेखन होता है, वह चाहे पुरुष द्वारा लिखा गया हो या स्त्री द्वारा। उसे वर्गीकृत या उसमें विभेद किया जाना उचित नहीं है।' परंतु मेरा उत्तर इससे भिन्न है।

पुरुष और स्त्री में केवल शारीरिक संरचनागत भेद ही नहीं होता, उनके मस्तिष्क की ग्रंथियों में भी भिन्नता होती है । उनमें उत्पन्न होने वाले रसायनों की सांद्रता में भी संभवत: अंतर होता है। संवेदन-तंत्र भी कुछ अलग ही होता होगा, तभी तो स्त्री और पुरुष की संवेदना के स्तर में फर्क होता है। इसी फर्क के कारण चीज़ों को देखने, महसूस करने और उनके बारे में सोचने के तरीक़े में अंतर आता है। यही अंतर नज़रिये में और प्रकारांतर से स्त्री और पुरुष के लेखन में दिखायी देता है। आप कह सकती हैं कि अंतर तो हर लिखने वाले की रचनाओं में होता है, यहाँ तक कि एक रचना से दूसरी रचना में भी होता है..... हाँ ! मगर स्त्री और पुरुष के लेखन में बड़ा अंतर उनके भिन्न मनोविज्ञान का होता है।

- **जी बिल्कुल यही मनोविज्ञान ही लेखक की सोच को दर्शाता है। क्या इस लैंगिक भिन्नता का पाठक के मन पर भी प्रभाव कम या ज्यादा पड़ता है ?**

– नहीं ! मैं यह नहीं मानता कि पाठक के मन पर पुरुष लेखक और स्त्री लेखक की रचना का प्रभाव उनकी लैंगिक भिन्नता के अनुसार अलग-अलग पड़ता है। कोई भी पाठक जब किसी रचना को पढ़ता है तो उसके ध्यान में प्राय: यह बात नहीं रहती कि वह किसी पुरुष की है अथवा स्त्री की। वह तो रचना की संवेदना के कलात्मक शिल्प का सहचर बनकर उस अंतर्यात्रा में शामिल हो जाता है और उससे गुज़रते हुए वह उसमें निहित रसानुभूति से आनंदित होता जाता है। उसके मन पर प्रभाव तो समग्रता में उस रचना की संवेदना और उसके स्थापत्य-कौशल का पड़ता है। पाठक को इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वह रचना पुरुष की है अथवा स्त्री की।

- **पाठक सिर्फ पाठक होता है, यथार्थ। क्या आपको ऐसा नहीं लगता कि पुरुषों के लेखन में अपेक्षाकृत बौद्धिक पक्ष की प्रधानता रहती है ?**

– नहीं ! मुझे ऐसा नहीं लगता। किसी भी काव्य, कथा और नाट्य साहित्य के केन्द्र में तो भाव–संवेदना का पक्ष ही प्रमुख होता है, वह चाहे स्त्री द्वारा रचित हो या पुरुष द्वारा। संवेदना का स्तर और प्रकार अलग हो सकता है जैसा कि पहले हम चर्चा कर चुके हैं, यह व्यक्ति–दर–व्यक्ति उसकी विधागत समझ, योग्यता और सृजन–क्षमता पर भी निर्भर करता है। बुद्धि का उपयोग तो स्त्री और पुरुष दोनों ही बराबर करते हैं।

- **आज महिलाओं ने भी अपनी परिभाषा को नवीन आकर दिया है। अमूमन महिलाओं का लेखन परिवार, परम्परा और संस्कारों के घेरे में अधिक रहता है। आपकी दृष्टि में पुरुषों के लेखन की क्या विशेषता है ?**

– दरअसल लेखन किसी का भी हो, वह लेखक के अनुभव–संसार से उपजता है। अनुभव का दायरा जिसका जितना बड़ा होगा, उसके लेखन में चीज़ें उतनी ही बहुलता से आयेंगी। स्त्रियों की सक्रियता आज़ादी के पूर्व और बाद में भी लम्बे समय तक घर–परिवार तक ही सीमित रही है, इसलिए उनकी रचनाओं में वही परिवेश, सुख–दुख और समस्याएँ जगह बनाती रही हैं। पुरुषों का कार्यक्षेत्र और उसके हिसाब से अनुभव का क्षेत्र भी स्त्रियों की तुलना में अधिक विस्तृत रहा है, इसलिये उनकी रचनाओं में कुछ अलग प्रकार के अनुभव दिखायी देते हैं। चूँकि अनुभूति की गहराई संवेदना के स्तर से निर्धारित होती है, इसलिये यह अंतर भी व्यक्तिश: दिखायी देता है। इसी को हम विशेषता की तरह देख सकते हैं।

- **सहमत हूँ, अगर साहित्य में स्वयं को स्थापित करने की बात हो तो भी क्या यही कहेंगे कि पुरुषों और स्त्रियों के सृजन की संघर्ष–यात्रा समान होती है ?**

– मुझे लगता है, लेखन के स्तर पर दोनों के संघर्ष और पीड़ा से गुज़रने की स्थिति में कोई बड़ा अंतर नहीं होता। साहित्य के क्षेत्र में स्थापित होने के प्रयासों और तौर–तरीकों में ज़रूर अंतर हो सकता है यह अंतर तो व्यक्तिश: भी होता है, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री।

- **अमूमन माना जाता है स्त्री को दोहरे दायित्व के साथ लेखन में संघर्ष करना होता है। कहते हैं स्त्री का लेखन अधिकतर स्व की अनुभूति पर आधारित होता है, जिसे अक्सर रोतला साहित्य कहकर उसकी गंभीरता को कम करने का प्रयास किया जाता रहा है। क्या पुरुष के लेखन में स्वानुभूति नहीं होती ?**

– लेखन स्त्री का हो, या पुरुष का, मेरी समझ से स्वानुभूति पर ही आधारित होता है। उसे ही प्रामाणिक अनुभूति माना जाता है। साहित्य में अक्सर अनुभूति की प्रामाणिकता की चर्चा होती है। किसी रचना की आलोचना में ख़ासतौर पर इस पद का प्रयोग और कृति के परिप्रेक्ष्य में उस पर गहराई से विचार किया जाता है। किसी दूसरे की अर्थात् परानुभूति को अनुभव के स्तर पर जिये बिना अभिव्यक्ति में वह प्रमाणिक गहराई नहीं आ पाती है। इसलिए ऐसी रचनाएँ आलोचना में तो ख़ारिज़ हो ही जाती हैं, पाठक भी उन्हें स्वीकार नहीं कर पाता है। जहाँ तक स्त्रियों के लेखन को 'रोतला साहित्य' कहने की बात है, इसे हम किसी अगंभीर या शिगूफ़ेबाज़ व्यक्ति का 'जुमला' ही मान सकते है। यह जुमला हर स्त्री के लेखन पर 'फिट' नहीं किया जा सकता।

- **डॉ. लता अग्रवाल – स्त्रियों के लेखन में पुरुषों की पीड़ा को अभिव्यक्ति मिलती रही है। क्या पुरुषों के लेखन में भी स्त्रियों की पीड़ा को उतना ही स्थान मिल पाया है ?**

– पुरुषों का ऐसा साहित्य भरा पड़ा है, जो स्त्रियों के दुख–दर्द उनकी सामाजिक स्थिति, शोषण–उत्पीड़न और अन्य समस्याओं पर केन्द्रित है।

- **कोई उदाहरण स्वरूप कुछ उद्धरण देना चाहेंगे ?**

– पुरुषों का ऐसा साहित्य भरा पड़ा है, जो स्त्रियों के दुख–दर्द उनकी सामाजिक स्थिति, शोषण–उत्पीड़न और अन्य समस्याओं पर केन्द्रित है। महान कथाकार प्रेमचंद के 'गोदान' की धनिया, कहानी 'बूढ़ी काकी' की काकी जैसे चरित्र इसके उदाहरण हैं। अमृतलाल नागर के उपन्यास 'सुहाग के नूपुर', 'ये कोठे वालियाँ' आचार्य चतुरसेन शास्त्री के उपन्यास 'वैशाली की नगरवधू' और फणीश्वरनाथ रेणु के उपन्यास 'मैला आँचल' में ऐसे नारी चरित्रों के प्रतिबिम्ब देखे जा सकते हैं। मेरी कहानियों– 'मुखौटे', 'महूफूल', 'यातना शिविर' 'साहूकार' आदि भी इसके उदाहरण हैं।

- **स्त्री के प्रति रतिभाव कवियों का मूल विषय रहा है, किन्तु आज नारी के सामाजिक स्वरूप और दायित्वों का विस्तार हुआ है। क्या नारी की यह विस्तारित भूमिका पुरुषों के लेखन में ठीक–ठीक प्रतिबिम्बित हो रही है ?**

– क्यों नहीं! बहुत प्रभावी ढंग से हो रही है। रतिभाव में रमे रहने वाले कवियों की आज भी कमी नहीं है। उस जमात में शामिल होकर उनके सुर में सुर और स्वर में स्वर मिलाने वाली कवयित्रियाँ भी बहुत हैं। विषयवस्तु का चयन तो किसी भी रचनाकार की सामाजिक सरोकारों की समझ और दायित्वबोध पर निर्भर करता है। पाठक या श्रोता की पसंद भी कवियों की इस मनोवृत्ति को प्रेरित-प्रोत्साहित करती है।

- **अप्रत्यक्ष यह लेखक/लेखिका का साहित्य बताता है कि वह समाज के प्रति कितना गम्भीर है। क्या कोई कवि अपनी पत्नी और प्रेमिका को एक ही भाव से प्रस्तुत करता है?**

– प्राय: देखने-पढ़ने में तो यह आता है कि जब तक कोई स्त्री प्रेमिका की भूमिका में रहती है, वह किसी कवि के लिये श्रृंगार का विषय रहती है और प्रेमी कवि उसके रूप-गुण का बखान करते नहीं थकता, परंतु जैसे ही वह स्त्री उसकी पत्नी की भूमिका में आ जाती है, हास्य-व्यंग्य का विषय बन जाती है। मगर वरेण्य कवि केदारनाथ अग्रवाल जैसे सृजनधर्मी भी हुए हैं, जिन्होंने पत्नी के लिये 'हे मेरी तुम' जैसी कविताएँ रचकर जीवन संगिनी का वास्तविक प्रेयसी के रूप में बखान किया है।

- **डॉ. लता अग्रवाल - कहते हैं एक स्त्री ही स्त्री को बेहतर समझ सकती है। क्या पुरुष स्त्री मनोविज्ञान को उतनी गम्भीरता से रेखांकित कर पाते हैं?**

– यह पुरुष की अवलोकन – क्षमता और अनुभूति की गहराई पर निर्भर करता है। ऐसे बहुत से उदाहरण मिलेंगे, जिसमें किसी लेखक ने लेखिकाओं से अधिक प्रामाणिकता के साथ स्त्री के मनोविज्ञान को रेखांकित किया है। प्रेमचंद के उपन्यास 'गबन' की नायिका के मनोविज्ञान को देखिए।

- **जी बिलकुल जालपा हो, रत्न हों या फिर जोहरा प्रेमचन्द के सभी स्त्री पात्र अपनी सम्पूर्णता के साथ रचना में मौजूद है। आप लेखक हैं। लिखने के लिये विषयों का चयन कैसे करते हैं?**

– मुझे लगता है, लेखक पुरुष हो अथवा स्त्री-लेखन के लिये विषयवस्तु चुनने की प्रक्रिया लगभग एक जैसी रहती है। आप जो दैनंदिन जीवन में भोग रहे हैं, यानी जो आपके अनुभव का हिस्सा है, उसमें से ही कहीं आप अभिव्यक्ति के लिये विषयवस्तु उठाते हैं। इसके अलावा जो आप देखते हैं, या फिर विभिन्न स्रोतों से सुनते हैं, उसे भी अपने अनुभव में शामिलकर अनुभूति की तीव्रता के आधार पर उसमें सृजन की संभावना ढूँढ़ लेते हैं। यही मेरी पद्धति है।

- **किसी समस्या पर दोनों के दृष्टिकोण में क्या अंतर आप महसूस करते हैं?**

– वही अंतर जो दो व्यक्तियों के दृष्टिकोण में होता है। अनुभव-क्षेत्र के आधार पर अनेक मामलों में स्त्रियों का दृष्टिकोण पुरुषों से भिन्न हो सकता है।

धन्यवाद आदरणीय आपने महत्वपूर्ण जानकारी हमारे पाठकों से साझा की।

डॉ. लता अग्रवाल,
73 यश विला, भवानी धाम फेस-1, नरेला शंकरी, भोपाल

## कला समय का बैंक खाता विवरण

| | | | |
|---|---|---|---|
| 1. | **खाता का नाम** | : | कला समय |
| 2. | **खाता संख्या** | : | 09321011000775 (चालू खाता) |
| 3. | **बैंक शाखा** | : | पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.) |
| 4. | **आईएफएस कोड** | : | PUNB0093210 |

**प्रबंध संपादक**

# कथक पुरुष पंडित बिरजू महाराज : कुछ बातें, कुछ यादें।

-पं. विजय शंकर मिश्र

पंडित बिरजू महाराज का निधन कथक नृत्य जगत की एक अपूरणीय क्षति है ..यह यथार्थ है, रस्म अदायगी मात्र नहीं। आज से लगभग 15 वर्ष पहले कथक केंद्र (दिल्ली) द्वारा आयोजित एक परिसंवाद में मैंने जब कहा था कि 'अगर हम बिरजू महाराज को प्रथम स्थान पर रखते हैं तो निचले 10 अंकों तक हमें कोई कथक कलाकार ऐसा नहीं दृष्टिगोचर होता है जिसे हम दूसरे स्थान पर रख सके। उस समय मेरे इस कथन की प्रत्यक्ष तौर पर तो नहीं, लेकिन दबी जुबान से कुछ लोगों ने आलोचना की थी। लेकिन दुर्भाग्यवश स्थिति आज भी वही है। दूर-दूर तक ऐसा कोई कथक कलाकार नहीं दिख रहा है जिनके विषय में विश्वासपूर्वक कहा जा सके कि 'यह महाराज द्वारा रिक्त किए गए स्थान की पूर्ति कर पाएंगे।' महाराज का आभामंडल घरानों की सीमा से परे असीम था। मुझे अच्छी तरह से याद है। एक बार मैंने जयपुर घराने के प्रतिनिधि नर्तक गुरु चरण गिरधर चांद से जब उनके प्रिय नर्तक के विषय में पूछा था तो उन्होंने एक भी पल सोचे बिना कहा था 'पंडित बिरजू महाराज' पंडित राजेंद्र गंगानी भी स्वीकारते हैं कि मेरे पिता को दिल्ली बुलाने वाले महाराज जी ही थे और पिता के निधन के बाद कथक केंद्र में मुझे नौकरी दिलवाने वाले भी महाराज जी थे। तो आइए पंडित बिरजू महाराज के व्यक्तित्व और कृतित्व पर एक संक्षिप्त दृष्टि डालते हैं....

बिरजू महाराज का जन्म 4 फरवरी 1938 को वसंत पंचमी के दिन अच्छन महाराज और महादेवी देवी के पुत्र रत्न के रुप में लखनऊ में हुआ था। उनकी तीन बड़ी बहनें थीं। अस्पताल के जिस वार्ड में जिस दिन बिरजू महाराज का जन्म हुआ था उस दिन उस वार्ड में चूंकि सारी लड़कियां पैदा हुई थीं, अत: उन लड़कियों के बीच एकमात्र लड़के बिरजू महाराज के पैदा होने के कारण कहा गया कि सारी ब्रज गोपियों के बीच एक ब्रजमोहन पैदा हुआ है। अत: उनका नाम ब्रजमोहन नाथ मिश्र रख दिया गया। घर में बुलाने का नाम बिरजू रखा गया और यही बिरजू संगीत नृत्य के इतिहास में एक सूरज की तरह चमकते हुए, सोने की स्याही से अपना नाम लिख गया। बिरजू महाराज अपनी काव्य रचनाएं बृज श्याम नाम से लिखते थे। बिरजू महाराज बचपन से ही तीव्र बुद्धि के अत्यंत प्रतिभा संपन्न थे। उन्हीं के शब्दों में वह नृत्य सीखने के पहले ही नाचने लगे थे। वे कहते थे 'तब बाबू यानी अच्छन महाराज रामपुर दरबार में थे। कई बार आधी रात को नवाब साहब का आदमी बुलाने के लिए आ जाता

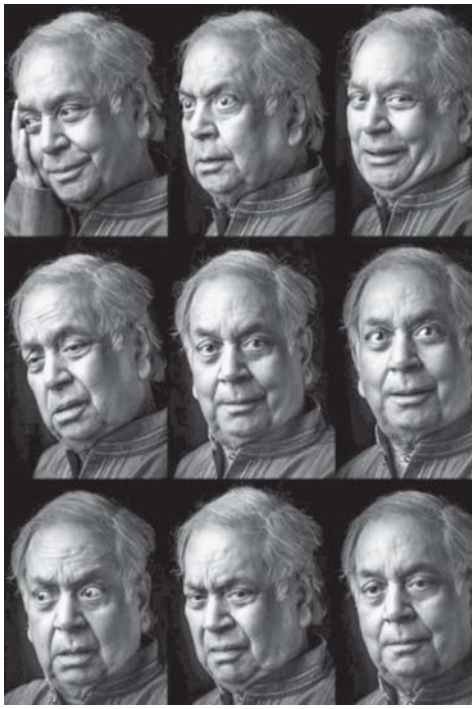

था। बाबू मधुमेह के रोगी थे लेकिन विवशतावश जाना हीं पड़ता था। मेरी अम्मा मुझे भी नींद से जगाकर,साबुन से मुंह धुलाती, काजल लगाती, टीका लगाती और कपड़े बदलकर बाबू के साथ नाचने के लिए भेज देती थीं। शुरू में तो नींद से जगाने पर मैं रोता था, मना करता था, लेकिन बाद में गुस्से में दरबार के तबला वादको को कठिन कठिन बोल नाचकर परेशान भी खूब करता था। तब मैं लगभग 5 वर्ष का था। लेकिन बाबू बाद में रामपुर दरबार की नौकरी छोड़कर हम लोगों के साथ लखनऊ आ गए। वह 1943 का साल था। तभी दिल्ली से निर्मला जोशी का भेजा हुआ एक खत मिला। वह बाबू की शिष्या उमा जोशी की बहन थीं और दिल्ली को देश की सांस्कृतिक राजधानी बनाने का प्रयास कर रही थीं। देश की स्वतंत्रता बहुत नजदीक दिख रही थी। हम लोग दिल्ली पहुंच गए। निर्मलाजी ने हिंदुस्तानी म्यूजिक एंड डांस अकैडमी में नृत्य सिखाने के लिए बाबू से अनुरोध किया। यह संस्था आज संगीत भारती के नाम से जानी जाती है। बाबूजी से सीखने वालों

में कपिला मालिक जो बाद में कपिला वात्सायन बनीं, निर्मला जैन, रेवा विद्यार्थी और सोहनलाल आदि प्रमुख थे। मैं हर समय के साथ साए की तरह बाबू के साथ रहता था। वे उन लोगों को जो कुछ सिखाते थे मैं बैठे-बैठे सीख जाता था। बाबू भी कहते थे कि मछली के बच्चे को तैरना नहीं सिखाया जाता है। मैं घर आकर अम्मा को नाच नाच कर दिखाता और कहता कि ये सारे बोल मुझे याद हैं। मैं भी उन लोगों को सिखा सकता हूं। तब अम्मा मुझे प्यार से गले लगाती हुई कहती थीं 'हां मेरा बेटा क्यों नहीं? लेकिन, पहले तुम थोड़े बड़े तो हो जाओ। अभी तुम बहुत छोटे हो।' इस तरह लगभग ढाई साल का समय बीत गया। 1946 में कुछ दिनों की छुट्टी लेकर हम लोग लखनऊ आए थे। वहीं उन्हें लू लगी और वे चल बसे। उन्हें उनकी मृत्यु से कुछ दिन पहले जब वे बहुत बीमार थे, एक पड़ोसी देखने आए थे। उन्होंने मेरी ओर इशारा करते हुए जब बाबू से पूछा था कि इस बच्चे की तालीम का क्या होगा? तो बाबू धीरे से बोले थे ''इतना सिखा दिया है कि इज्जत से खा लेगा'' तब मेरी उम्र सिर्फ8 वर्ष की थी।

पंडित बिरजू महराज के परिजन

पंडित अच्छन महाराज की मृत्यु के बाद बिरजू महाराज के संघर्ष का एक नया दौर शुरू हुआ। नृत्य की शिक्षा तो थी लेकिन 8 वर्षीय बालक को कोई भी किसी भी प्रकार की नौकरी,कार्यक्रम या ट्यूशन देने के लिए तैयार नहीं था। पर्दा में रहने वाली उनकी मां ने इस समय अपनी बहादुरी का परिचय दिया और उन्हें अपने साथ लेकर छोटे-मोटे कार्यक्रमों में, मंदिरों में, शादी ब्याह में ले जाने लगीं और इस तरह बिरजू महाराज एक नया अनुभव प्राप्त करने लगे। यद्यपि 7 वर्ष की उम्र में जुबली टॉकीज दिल्ली में पहली बार सार्वजनिक प्रदर्शन कर चुके थे वे। घर में खाने पीने की व्यवस्था नहीं थी। रोज कमाओ रोज खाओ वाली व्यवस्था थी। ऐसे ही समय में उनके पिता पंडित अच्छन महाराज के अनुज सम मित्र बनारस घराने के तबला शिरोमणि पंडित गामा महाराज..जो नेपाल दरबार में राजकीय कलाकार थे उन्होंने बिरजू महाराज को अपने साथ नेपाल की यात्रा कराई और एक तरह से कहा जा सकता है कि यह बिरजू महाराज की पहली विदेश यात्रा थी। महाराज जी परिस्थितियों से लड़ते हुए तरह-तरह के अनुभव प्राप्त कर रहे थे। झांसी के एक कार्यक्रम को वह अक्सर याद करते थे। वहां वे अपने चाचा पंडित शंभू महाराज के साथ गए थे। मेले का माहौल था। शास्त्रीय संगीत नृत्य के हर कलाकार को लोग तालियां पीट पीटकर मंच से भगा देते थे। महाराज ने शंभू महाराज से कहा कि मैं नहीं नाचूंगा यहां। लेकिन शंभू महाराज ने उन्हें समझाया कि नहीं नाचने पर पैसे भी नहीं मिलेंगे। टिकट के पैसे जो हमने खुद खर्च किए हैं वह भी नहीं मिलेंगे। उसके बाद चाचा-भतीजे पंडित शंभू महाराज और पंडित बिरजू महाराज ने मिलकर तय किया कि क्या और कैसे करना है। अपनी बारी आने पर बिरजू महाराज मंच पर जाकर सबको नमस्कार करके बोले कि- 'यह मेरा सौभाग्य है कि आज मैं झांसी की भूमि पर नाचने के लिए उपस्थित हुआ हूँ। यह वीरांगना झांसी की रानी की धरती है। इसलिए मैं आज उनसे जुड़ी कुछ विशेष रचनाएं प्रस्तुत करना चाहता हूं। आपका आशीर्वाद और प्रोत्साहन चाहिए। उसके बाद उन्होंने बंदिशे तो वही लखनऊ घराने की पुरानी नाची लेकिन मुद्राएं और हाव-भाव तलवार चलाने, सैनिकों से लड़ने तथा घोड़े दौड़ाने आदि का प्रदर्शित किया। लोगों ने उनके उस कार्यक्रम को खूब पसंद किया। मानदेय के अलावा इनाम भी खूब मिले थे।

1952 में 14 वर्षीय बिरजू महाराज अपनी किस्मत आजमाने के लिए एक बार फिर दिल्ली आए। दिल्ली में निर्मला जोशी ने उन्हें उसे हिंदुस्तानी म्यूजिक एंड डांस अकैडमी में शिक्षक नियुक्त करा दिया जहां उनके पिता अच्छन महाराज पहले सिखा चुके थे। 1955 में बिरजू महाराज भारतीय कला केंद्र में अध्यापक हो गए,

जहां उनके चाचा पंडित शंभू महाराज भी सिखा रहे थे। उसके बाद कथक केंद्र की स्थापना होने पर वह कथक केंद्र में अध्यापक हुए। वहां उन्होंने कुछ समय तक निर्देशक की भी जिम्मेदारी संभाली, और वहां से अवकाश ग्रहण करने के बाद अपने सपनों का संसार उन्होंने कला आश्रम के नाम से सजाया। जहां देश-विदेश के सैकड़ों नृत्य अनुरागी कथक नृत्य की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। हम कह सकते हैं कि 14 वर्ष की उम्र में उन्होंने जो नृत्य सिखाना शुरू किया था, वह 83 वर्ष की उम्र तक अनवरत चलता रहा। अपनी मृत्यु से कुछ देर पहले तक वह अपनी दोनों पौत्रियों रागिनी और यशस्विनी को नृत्य ही सिखा रहे थे। उसके बाद उन्हें सांस लेने में तकलीफ हुई। उन्हें अस्पताल ले जाया गया लेकिन बचाया नहीं जा सका। लेकिन नहीं, अभी हम शोक गीत का गायन क्यों करें? अभी तो हम सृजन के संगीत की बातें करेंगे। बिरजू महाराज का संघर्ष अपनी जगह चल रहा था लेकिन कई मामलों में वे बहुत सौभाग्यशाली भी थे। उन्हें अपने पिता पंडित अच्छन महाराज के साथ-साथ अपने दोनों महान चाचाओ पंडित लच्छू महाराज और पंडित शंभू महाराज से भी सीखने का सुयोग प्राप्त हुआ था। तीनों महाराज महाराज- अच्छन महाराज लच्छू महाराज और शंभू महाराज के नृत्य की धाराये अलग-अलग थीं और इन तीनों धाराओं ने मिलकर बिरजू महाराज के नृत्य को एक संपूर्णता प्रदान की। एक और अच्छी बात यह रही कि भारत का बहुत बड़ा कत्थक संसार अच्छन महाराज, लच्छू महाराज और शंभू महाराज का शिष्य था, इसलिए बिरजू महाराज को यथासंभव यथासमय सहायता भी मिलती रही। पूरे जीवन में उनके सामने चुनौती बनकर कोई कलाकार खड़ा नहीं हुआ। जहां भी बिरजू महाराज का नाम आया, जहाँ भी बिरजू महाराज की बातें हुई वहां कई कलाकार यह कहकर अलग हो गए कि वह हमारे गुरु के बेटे हैं या गुरु के भतीजे हैं। इस तरह उन्हें अपनी प्रस्तुतियों के लिए, अपनी कला की दौड़ लगाने के लिए खुला रास्ता लगातार मिलता रहा। जिसमें अपनी स्वप्निल परिकल्पनाओं का स्पर्श देकर उन्होंने उस ऊंचाई को छुआ जिसे उनके पहले किसी ने भी नहीं स्पर्श किया था। उन्होंने हजारों बंदिशों की रचना तो की ही, तोड़े, टुकड़े, परने और तिहाइयां, परमेलू तो बनाई हीं, कई तरह की कवित्त, गीत, कविताएं आदि भी रची और इस तरह से वह अपने दादा पंडित बिंदादीन महाराज के सच्चे प्रतिनिधि कहलाने के भी अधिकारी सिद्ध हुए। उन्होंने देश विदेश के हजारों लोगों को कथक नृत्य में पारंगत किया और यह कहना गलत नहीं होगा कि आज उनके सौजन्य से कथक नृत्य लगभग पूरी दुनिया में नाचा जा रहा है।


**कला समय के संबंध में स्वामित्व तथा अन्य विवरण विषयक घोषणा पत्र**
**फार्म-IV**

| | | |
|---|---|---|
| 1. प्रकाशन का स्थान | – | जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 |
| 2. प्रकाशन की अवधि | – | द्वैमासिक |
| 3. मुद्रक का नाम | – | भँवरलाल श्रीवास |
| राष्ट्रीयता | – | भारतीय। |
| पता | – | जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 |
| 4. प्रकाशक का नाम | – | भँवरलाल श्रीवास |
| राष्ट्रीयता | – | भारतीय। |
| पता | – | जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 |
| 5. संपादक का नाम | – | भँवरलाल श्रीवास |
| राष्ट्रीयता | – | भारतीय। |
| पता | – | जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 |
| 6. उन व्यक्तियों के नाम व पते जो समाचार पत्र के स्वामी हों तथा जो समस्त पूंजी के एक प्रतिशत से अधिक के साझेदार या हिस्सेदार हों। | – | भँवरलाल श्रीवास |
| राष्ट्रीयता | – | भारतीय। |
| पता | – | जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)-462016 |

मैं भँवरलाल श्रीवास घोषणा करता हूँ कि ऊपर दी गई विशिष्टयाँ मेरे सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के साथ सही हैं।

तारीख- 1 मार्च 2022

**भँवरलाल श्रीवास**
प्रकाशक के हस्ताक्षर

अपनी युवा अवस्था में मालती माधव, कुमार संभव और नवाब वाजिद अली शाह जैसी नृत्य नाटिकाओं में प्रमुख भूमिकाएं निभा चुके महाराजजी ने बाद में कई नृत्य संरचनाओं और नृत्य नाटिकाओं का न संगीत और नृत्य निर्देशन भी किया। उनमें कुछ प्रमुख के नाम इस प्रकार हैं.. कृष्णायन, कथा रघुनाथ की, तीर तरंग, नवग्रह, वंदे मातरम, तिहाई, प्रहार, माधुर्य लीला, पंचतत्व, अष्टनायिका, दिल्ली नामा, चलो मन गंगा जमुना तीर, डालिया, गीतोपदेश, मालविकाग्निमित्रम्, होली धूम मचाई, गीत गोविंद, हब्बा खातून, लय परिक्रमा, अष्ट नायिका, कृष्ण के लिए मौन साक्षी, नृत्य अर्चना, अंग तरंग, ध्रुव पतिका, ठुमरी मालिका, अतिथि, नृत्यांजलि, आलोक मुक्ति, यति दर्शन, समन्वय, अभिलाषा, रस रमया तथा कई अन्य। जिन फ़िल्मों में उन्होंने नृत्य निर्देशन किया था उनमें प्रमुख हैं... शतरंज के खिलाड़ी, देवदास, माचिस, दिल तो पागल है, प्रणाली- द ट्रेडीशन, डेढ़ इश्किया, बाजीराव मस्तानी, विश्वरूपम और गदर आदि।

पंडित बिरजू महाराज समय के साथ चलने वाले संगीतकार थे। नृत्य के साथ-साथ गायन और तबला वादन के लिए भी वे आकाशवाणी और दूरदर्शन के अनुमोदित संगीतकार थे। उन्होंने कई पीढ़ी के तबला वादको के साथ नृत्य किया था, जैसे उस्ताद अहमद जान थिरकवा, पंडित गामा महाराज, पंडित गुदई महाराज, पंडित किशन महाराज, उस्ताद अल्ला रखा, पंडित रंगनाथ मिश्र, पंडित शारदा सहाय, उस्ताद जाकिर हुसैन, पंडित अनिंदो चटर्जी, पंडित कुमार बोस, पंडित शीतल प्रसाद मिश्र, पंडित अरविंद आजाद, उस्ताद अकरम खान, पंडित गोविंद चक्रवर्ती, पंडित अंबिका प्रसाद मिश्र, पंडित शुभंकर बनर्जी, पंडित सपन सिन्हा और पंडित उत्पल घोषाल सहित नई पीढ़ी के कई ताबलिकों के साथ भी वे आराम से अपनी मंचीय की प्रस्तुतियां करते रहे। उनके साथ उनकी युवावस्था में कई मंचों पर तबला वादन कर चुके बनारस घराने के प्रतिष्ठित ताबलिक पंडित शीतल प्रसाद मिश्र ने एक घटना का वर्णन करते हुए बताया कि '1970 और 80 के दशक में मैंने बिरजू महाराज के साथ खूब बजाया। उसके बाद उनकी व्यस्तता बढ़ती गई और उनके आसपास लोगों का जमघट और भीड़ भी। मैं भी अपने भातखंडे कालेज की नौकरी में व्यस्त हो गया था। 1980 के दशक की ही बात है, जब उनका एक कार्यक्रम मुंबई में था और उसमें उस्ताद जाकिर हुसैन को उनके साथ बजाना था। कार्यक्रम काफी पहले तय हो गया था लेकिन, जब कार्यक्रम का समय आया तो उस्ताद जाकिर हुसैन से उनका संपर्क नहीं हो पा रहा था। अत: उन्होंने मुझे फोन किया। मैं लखनऊ से दिल्ली पहुंचा। दिल्ली में उनके और उनके साथियों के साथ 1 दिन का रिहर्सल हुआ और फिर हम लोग फ्लाइट से मुंबई पहुंच गए। दिन के समय ऑडिटोरियम में हम लोग रिहर्सल कर रहे थे और जब रिहर्सल समाप्त करके हम कार्यक्रम के लिए तैयार होने वाले थे तब हमने देखा कि उस्ताद जाकिर हुसैन अपना तबले का बैग लिए हुए सभागार में प्रवेश कर रहे हैं। उन्हें देखकर हम सब चकित रह गए। जाकिर भाई आए, हम लोगों से मिले। महाराजजी ने कहा भी कि हमने तो सोचा आप भूल गए। हमने आपसे संपर्क साधने की काफी कोशिश की थी लेकिन बात ही नहीं हो पाई। जाकिर भाई ने कहा कि महाराजजी आपके कार्यक्रम को कैसे भूल सकता हूं? महाराजजी ने मेरे साथ उनका परिचय कराया और पूरी वस्तुस्थिति बताई। मैंने कहा कि जनता उस्ताद जाकिर हुसैन को ज्यादा सुनना पसंद करेगी इसलिए जाकिर भाई को ही बजाना चाहिए। क्योंकि पहले से ही उनका कार्यक्रम तय भी था। जाकिर भाई ने हंसकर कहा कि ''मुंबई वालों के लिए तो मैं लोकल हूं। इसलिए उन्हें बाहर के कलाकार को सुनने का मौका मिलना चाहिए।'' हम लोगों के बीच यह बहस चल ही रही थी कि महाराज जी हम दोनों को चुप कराते हुए बोले कि ''मैं आप दोनों से बड़ा हूं, इसलिए आप दोनों मेरी बात सुनिए। उसके बाद महाराजजी ने कहा कि शाश्वती सेन और बाकी कलाकारों के साथ जाकिर भाई तबला बजाएंगेए और शीतलजी पखावज। और, मध्यांतर के बाद जब मेरा नृत्य होगा तब शीतल प्रसाद मिश्र तबला बजाएंगे। इस पर हम सबने अपनी सहमति दे दी। कार्यक्रम शुरू हुआ। जाकिर भाई ने खूब जमकर तबला बजाया। मैं भी पखावज बजाता रहा। इसके बाद 15 मिनट का मध्यांतर हुआ, और मध्यांतर के बाद पंडित बिरजू महाराज का नृत्य था जिनके साथ मुझे तबला बजाना था। जब मैंने बैग से अपना तबला निकालना चाहा तो जाकिर भाई मुझे रोकते हुए बोले कि 'पंडितजी क्यों न आप मेरा तबला ही बजा लें! मिला हुआ भी है, ठीक बोल भी रहा है और आपका हाथ इस पर पड़ जाएगा, आपके हाथों का स्पर्श इसे मिल जाएगा तो इसके नसीब भी खुल जाएंगे।' मेरी आंखों में आंसू आ गए। इतना महान और बड़ा कलाकार अपना तबला मुझे बजाने के लिए दे रहा है! जबकि कई कलाकार तो अपना तबला दूसरों को छूने ही नहीं देते हैं। मैंने उनका हाथ पकड़कर कहा ''जाकिर भाई ! आप यूं ही महान नहीं हैं। उस दिन वह कार्यक्रम हुआ और ईश्वर के आशीर्वाद, गुरुओं की कृपा और पंडित बिरजू महाराज के सहयोग के कारण बहुत सफल भी

पंडित शीतल प्रसाद मिश्र

पंडित बिरजू महाराज के साथ अभय शंकर मिश्र, काकोली मिश्र और अभिनव शंकर मिश्र

पंडित बिरजू महाराज के साथ अभय शंकर मिश्र, काकोली मिश्र और अभिनव शंकर मिश्र

गुरु रक्षा सिंह

रहा। इस कार्यक्रम की सफलता का श्रेय उस्ताद जाकिर हुसैन और उनके तबले को भी जाता है। क्योंकि वह सामने बैठकर हम लोगों को सुन रहे थे, देख रहे थे।' पंडित बिरजू महाराज पिछले लगभग 1 वर्ष से अस्वस्थ चल रहे थे। 2021 में उन्हें कोरोनावायरस हो गया था और वह मधुमेह आदि जैसी बीमारियों से पहले से थी ग्रस्त थे, फिर बढ़ती उम्र स्वयं में एक बड़ी बीमारी होती है। उसके बाद नृत्य के प्रति उनका समर्पण और अपने स्वास्थ्य के प्रति उनकी लापरवाही। अपनी मृत्यु के लगभग डेढ़ महीने पहले तक वे मंचीय प्रस्तुतियां करते रहे। इधर 2022 में भी उनकी तबीयत बिगड़ती और सुधरती रही, और फिर 16 जनवरी की देर रात यानी 17 जनवरी के बिल्कुल सुबह उषाकाल में उनका निधन हो गया। यानी सूर्योदय के समय सूर्यास्त। महाराजजी एक महान कलाकार थे। बहुत अच्छे नर्तक तो थे बहुत अच्छे सर्जक भी थे, और अभी उनकी रचनाओं पर शोध होना शेष है। मुझे लगता है के आने वाले 100..50 वर्षों में हम अच्छी तरह समझ पाएंगे कि महाराजजी कितने बड़े कलाकार थे। तब तक प्रतीक्षा करते हैं और स्मृतियों को नमन करते हैं।

उनके एक प्रमुख शिष्य और रिश्तेदार अभय शंकर मिश्र कहते हैं– 'अपने पहले गुरु बनारस घराने के पंडित पांडे महाराज से सीखकर उनकी उनकी आज्ञा लेकर 1988 में जब मैं दिल्ली आया था तो यहां एक तरह से गर्मजोशी से मुझे कथक केंद्र में प्रवेश मिल गया था। हॉस्टल भी मिल गया था और छात्रवृत्ति का वायदा भी। लेकिन क्लास मुझे पंडित दुर्गा लाल जी की मिली थी। दुर्गा लाल जी उस समय छाए हुए थे चारों ओर। लेकिन मैंने तत्कालीन निदेशक जीवन पाणि जी से दृढ़ स्वर में कहा था कि मेरे गुरु ने यहां मुझे पंडित बिरजू महाराज से सीखने के लिए भेजा है। इसलिए या तो मैं महाराजजी से सीखूंगा और या तो बनारस लौट जाऊंगा। तब मुझे महाराज जी से सीखने का सौभाग्य मिला था। और हम आजीवन एक दूसरे के साथ जुड़े रहे। यह मेरा सौभाग्य है कि मुझे कई बार महाराजजी के साथ मंच साझा करने का सौभाग्य मिला। उन्होंने अपने एक आयोजन में दिल्ली में मुझे लंदन से आमंत्रित किया था। यह मेरे लिए बहुत बड़ी बात है। 'अभय बात बढ़ाते हुए कहते हैं ..' मैं बनारस से जब दिल्ली आया तो मेरे पदाघात वगैरह बहुत तैयार थे, किंतु अंग विन्यास अभिनय पक्ष कमजोर था। मेरा अपना विचार यह था कि कथक नृत्य में पैरों की भूमिका अधिक महत्वपूर्ण होती है, क्योंकि पूरा शरीर उसी के सहारे खड़ा होता है। इसलिए मूल तो वही है। तब महाराजजी ने मेरे भ्रम को तोड़ते हुए कहा था कि वृक्ष में सिर्फमूल या जड़ का नहीं टहनियों का भी बहुत महत्व होता है जो उसे विस्तार देते हैं, पत्तियों का भी महत्व होता है और फूल तथा फल का भी बहुत महत्व होता है। उसके बाद मैंने अंग विन्यास और अभिनय पर ध्यान देना शुरू किया।' डॉ भावना ग्रोवर दुआ कहती हैं कि .. ''कितने विराट व्यक्तित्व के स्वामी थे महाराजजी। जितने अच्छे नर्तक उतने ही अच्छे नृत्य संरचनाकार और विभिन्न वाद्यों के वादक, गायक, कवि, चिंतक, चित्रकार और गुरु भी थे वे। उनसे शिक्षा और उनका सान्निध्य पाकर मैं तो खुद को धन्य समझती हूं।'' उनकी कई महत्वपूर्ण प्रस्तुतियों में भाग ले चुकीं नृत्यांगना रक्षा सिंह के अनुसार. ''महाराजजी पौराणिक, ऐतिहासिक और सामाजिक विषयों के अलावा कई बार बिल्कुल नए और अछूते विषयों को भी अपनी प्रस्तुतियों के लिए उठाते थे। जैसे नाद गुंजन में उन्होंने विभिन्न वाद्यों से निकलने वाली ध्वनियों के प्रभाव को रेखांकित किया तो फाइल में

नंदिनी शर्मा

बिरजू महराज से कथक नृत्य की कथा को समझते हुए श्री बक्शी विकास

पंडित विजय शंकर मिश्र और पंडित बिरजू महाराज

पंडित बिरजू महराज कलाकारों के बीच में

दफ्तरों की लालफीताशाही और लेटलतीफी को। इसी तरह की उनकी एक अन्य नृत्य संरचना न्यूज़पेपर है। महाराज जी की नृत्य संरचना एडिटिंग जितनी रोचक रोमांचक और मनोरंजक है उतनी ही कठिन भी। वह कैसेट का जमाना था और उसके चरित्र तथा उसकी गति को हमें नृत्य के माध्यम से प्रस्तुत करना होता था। कैसेट जब-जब सामान्य गति में चलती है तो उसके मुद्राएं सामान्य और गीत के अनुरूप होती है, लेकिन उसे तेज चलाया जाता है तब मुद्राओं के गति भी बढ़ जाती है, और जब उसे रिवर्स किया जाता है तब उन्हें मुद्राओं को तेज गति में उल्टा नाचना कितना मुश्किल होता है यह समझना बहुत कठिन नहीं है। लोग उसे देख कर खुश होकर तालियां बजाते थे लेकिन उसे करना हम लोगों के लिए बहुत चुनौतीपूर्ण होता था। इसी तरह होता है शबे रोज तमाशा मेरे आगे में उन्होंने गालिब को चित्रित किया, रोमियो जूलियट में रोमियो जूलियट की प्रेम कहानी को तो अनम में एक ऐसे लोहे की कहानी को जिसका एक भाग घंटा बनकर मंदिर में पहुंच जाता है तो दूसरा भाग छुरी बनकर कसाई की दुकान पर। इसी तरह सिंहासन के माध्यम से उन्होंने यह संदेश दिया था कि सिंह देवी दुर्गा का वाहन है, इसलिए सिंहासन पर बैठने वाला व्यक्ति जनता का शासक नहीं सेवक होता है।''श्री बक्शी विकास कहते हैं – ''आज बिरजू महाराज और कथक नृत्य दोनों एक दूसरे के पर्याय बन चुके हैं। एक के अभाव में दूसरे की कल्पना तक बेमानी है, तो नंदिनी शर्मा के शब्दों में ''यह हम लोगों का सौभाग्य है कि हम महाराजजी के युग में जन्में, उनसे मिले, उनसे सिखे और उनके दिखाए रास्ते पर आगे चल रहे हैं।'' काकोली मिश्रा कहती हैं .. ''दिल्ली में काम करते हुए महाराजजी ने कथक नृत्य का नया इतिहास रचा है, सौंदर्यीकरण किया है। भले ही इसे लखनऊ घराना ही कहा जा रहा है, लेकिन सच तो यही है कि महाराज जी की यह अपनी विशिष्ट शैली है।''

पंडित बिरजू महाराज को कई मान सम्मान मिले थे। उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी सम्मान और उसके रत्न सदस्यता, लता मंगेशकर सम्मान, लक्ष्मीनारायण ग्लोबल सम्मान, केंद्रीय संगीत नाटक अकादमी सम्मान तो उन्हें सिर्फ28 वर्ष की उम्र में मिल गई थी और फिर उसकी रत्न सदस्यता। सीधे पद्म विभूषण का अलंकरण सहित इंदिरा कला संगीत विश्वविद्यालय खैरागढ़ और काशी हिंदू विश्वविद्यालय वाराणसी से उन्हें डी लिट की मानद उपाधि भी मिली थी। लेकिन महाराज जी के निधन के उपरांत दिल्ली और केंद्र सरकार की ओर से उन्हें किसी भी प्रकार का राजकीय सम्मान न दिया जाना चौंकाता भी है और दुखी भी करता है। पता नहीं इसके पीछे क्या राजनीति थी। लेकिन यह तय है कि वे लोग अपने नसीब पर जरूर गर्व करेंगे जिन्हें महाराज जी के साथ कुछ भी समय गुजारने का अवसर मिला है।

जब हम अच्छा खाने, अच्छा पहनने और अच्छा दिखने में खर्च करते हैं
तो अच्छा पढ़ने-लिखने और सोचने-समझने की खुराक में खर्च क्यों न करें !

कलासमय

प्रबंध संपादक

सम्पर्क- जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com / bhanwarlalshrivas@gmail.com

# अनंत लय में लीन : पंडित बिरजू महाराज

अश्विनी कुमार दुबे

सुबह-सुबह ही दुखद समाचार आया कि कत्थक के पर्याय पद्मविभूषण पंडित बिरजू महाराज अनंत लय में लीन हो गए। 4 फरवरी 1938 में जन्मे बिरजू महाराज 83 वर्ष की उर्म में इस संसार की लय से ऊपर उठ गए।

वह जमाना ही और था। अंग्रेजों का शासन काल। आम भारतीय नागरिकों की हालत बहुत खराब। अधिकांश लोग गरीब, ऐसे में एक मध्यमवर्गीय कला प्रेमी परिवार में बिरजू महाराज ने जन्म लिया। पिता अच्छन महाराज कुशल नर्तक। माँ नृत्य के प्रति समर्पित। बालक बिरजू को अपने पिता से कुछ सीखने का अवसर नहीं मिला जब वे बहुत छोटे थे, पिता का देहांत हो गया। घर में बहुत गरीबी एक उल्लेख के अनुसार अपने पिता का दसवां संपन्न करने के लिए बिरजू को उधार लेकर पांच सौ रूपए इकट्ठे करने पड़े, तब जाकर पिता के मृत्यु संबंधी शेष संस्कार पूरे हुए। ऐसे में घर चलाने के लिए बच्चों को काम में झोंक दिया जाता है। बिरजू के साथ भी ऐसा हो सकता था परंतु उनकी माँ ने ऐसा नहीं होने दिया। वे चाहती थीं बेटा पिता की तरह कुशल नर्तक बने। इसके लिए उन्होंने बिरजू के चाचाओं से बातचीत की। सबका यह कहना था कि घर का खर्च तो किसी प्रकार चला लेंगे परंतु बिरजू को जरूर नर्तक ही बनाएंगे।

बिरजू का खानदान कलाकारों का खानदान। बिरजू के चाचा क्रमश: शंभू महाराज और लच्छू महाराज ने बिरजू को शिक्षित करना प्रारंभ किया। कहा भी गया है, पूत के पांव पालने में दिखने लगते हैं। बिरजू के पांव स्वर और ताल पर थिरकने लगे। दस वर्ष की उम्र में उन्होंने दिल्ली में अपना पहला कार्यक्रम प्रस्तुत किया। दर्शक मंत्रमुग्ध हो गए। चौदह वर्ष की उम्र में अखिल बंगाल संगीत सम्मेलन में बिरजू ने अपना नृत्य प्रस्तुत कर तहलका मचा दिया। पन्द्रह वर्ष की उम्र में तो वे दिल्ली संगीत भारती नामक संस्था में नृत्य शिक्षक के रूप में नियुक्त हो गए।

अब तो उनके पैर ऐसे थिरके, ऐसे थिरके कि रुकने का नाम ही न लिया। देश का ऐसा कौन-सा महानगर है, जहां उनके कार्यक्रम न हुए हों। देश में ऐसा कौन-सा कला प्रेमी है, जो उनका नृत्य देखते हुए मुग्ध न हुआ हो। लोग उनकी कला के दीवाने हैं। उन्हें कला जगत में ऋषि तुल्य सम्मान प्राप्त है। वैसे तो उन्हें पद्मश्री, पद्मविभूषण, नृत्य चूड़ामणी, आंध्ररत्न, कालीदास सम्मान सहित अनेक सम्मान प्राप्त हुए, परंतु कला प्रेमियों के हृदय में उनका आदर, प्रेम और मान-सम्मान अद्वितीय है।

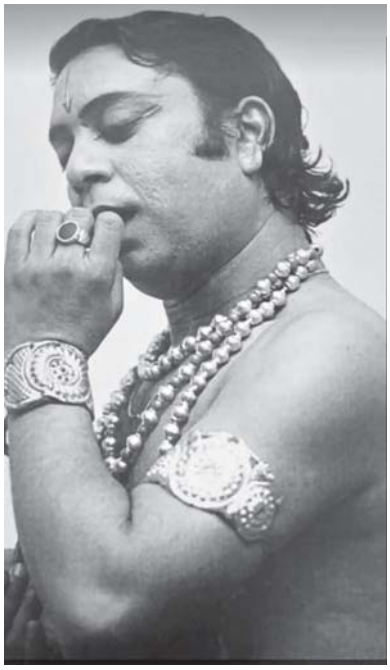

बिरजू महाराज लखनऊ के प्रसिद्ध विंदादीन महाराज के घराने से माने जाते हैं। पिता अच्छन महाराज, चाचा : शंभू महाराज एवं लच्छू महाराज के पश्चात आप अपने घराने के प्रतिनिधि कलाकार थे। आपने पारंपरिक शैलियों से आगे जाकर कत्थक में नए प्रयोग किए। आपने आधुनिक रंगमंच की शैली के अनुरूप अनेक नृत्य नाटिकाओं की रचना की। इनमें कुमार संभव, गीतोपदेश, होरी कथा रघुनाथ की, हब्बा खातून, गीत गोविंद आदि प्रमुख हैं।

हिंदी फिल्मों में उनके अप्रतिम योगदान को भला कौन नहीं जानता। सत्यजीत राय की प्रसिद्ध फ़िल्म 'शतरंज के खिलाड़ी' को याद करिए। इसमें उनकी दो नृत्य नाटिकाएं बहुत सराही गईं। 'उमराव जान', 'देवदास' और 'बाजीराव-मस्तानी' फ़िल्मों में आपने कत्थक के साथ अद्भुत प्रयोग किए, जो बहुत पसंद किए गए।

अब वे हमारे बीच नहीं रहे। कला जगत की यह अपूर्णीय क्षति है। हमारी विनम्र श्रद्धांजलि।

■

संस्मरण

# कोई ताजी हवा चली है अभी

अश्विनी कुमार दुबे

मैं सन् 2013 में आ गया था इंदौर। लिखने-पढ़ने में रुचि थी इसलिए सबसे पहले इंदौर के साहित्यकारों से परिचय हुआ। सूर्यकांत नागर और प्रभु जोशी को पहले से जानता था। यहां आकर उनसे मुलाकातें बढ़ने लगीं। यहां रहते हुए मैंने देखा कि इंदौर में शास्त्रीय संगीत के बहुत अच्छे कार्यक्रम होते हैं। बचपन मेरा मैहर में बीता इसलिए शास्त्रीय संगीत में मेरी विशेष अभिरुचि है। इंदौर के प्रसिद्ध संगीतकारों से मेरा परिचय हुआ। संगीत कार्यक्रमों में और विशेष अवसरों पर उनसे मुलाकातें होती रहतीं। इस संगत का सुपरिणाम हुआ कि मैंने इंदौर घराने में पांच दिग्गज कलाकारों पर एक किताब लिखी: 'पंचामृत' जो पिछले दिनों रज़ा फाउंडेशन द्वारा प्रकाशित हुई।

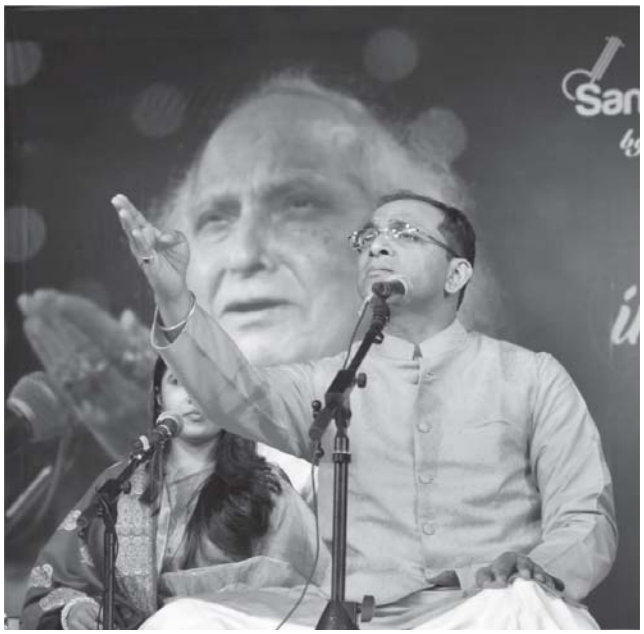

उन्हीं दिनों मेरा परिचय हुआ युवा कलाकार गौतम काले से। एक बार उन्होंने मुझे बताया- 'सागर में एक राष्ट्रीय संगीत प्रतियोगिता आयोजित हुई, जिसमें मैंने पं. जसराज की एक बंदिश जो शुद्ध सारंग में है, जिसके बोल- जाओ-जाओ जी श्याम छलिया (छोटा ख्याल) और सकल बन लाग रही (बड़ा ख्याल) इसे पंडित जी ने शुद्ध धैवत में गाया था। मैंने इसे वैसा ही तैयार किया। कल्पना झोकरकर जी को जब सुनाया तो उन्होंने स्पष्ट कहा- 'तुम अपनी शैली विकसित करो' मैंने कल्पना जी की बात पर गंभीरता पूर्वक विचार किया और इस बंदिश में शुद्ध धैवत की जगह तीव्र माध्यम का उपयोग किया। अब यह एक मौलिक रचना हुई, जिसके बल पर मैंने वह प्रतियोगिता जीत ली। तब से अब तक मैं अपनी मौलिकता के प्रति सजग हूं।'

फिर गौतम काले के विषय में और बातें मालूम हुईं, उनके पिता श्री किशोर काले, वेटनरी डॉक्टर हैं (अब सेवा निवृत्त) वे मध्य प्रदेश पुलिस विभाग में अश्वारोही दल के प्रभारी रहे। फिल्मों के शास्त्रीय संगीत आधारित गाने वे पूरे उल्लास से गाते थे। बचपन से गौतम अपने पिता के गाने सुनते आए। परंतु उनका शौक घुड़सवारी की ओर हुआ। पिता पुलिस में अश्वारोही दल की देखभाल करते इसलिए गौतम की भी घोड़ों से दोस्ती हो गई। वे पांच साल की उम्र से ही घुड़सवारी कर रहे हैं। दस साल की उम्र में तो उन्होंने घुड़सवारी की कई प्रतियोगिताएं जीत ली थीं। वे घुड़सवारी में ही अपना कैरियर बनाना चाहते थे। पिता चाहते कि लड़का पढ़-लिखकर किसी बड़ी सरकारी नौकरी में आ जाए।

उन्हीं दिनों पंडित जसराज इंदौर आए। वे अपनी शिष्या बुलबुल गढ़ा के यहां रुके। गौतम के पिता उनके प्रशंसक ठहरे। उन्होंने बेटे से कहा- 'चलो आज तुम्हें शास्त्रीय गायन की दुनिया के एक सितारे से मिलवाऊँ।' गौतम को इतना तो मालूम था कि शास्त्रीय गायन देर रात तक चलता है। वे छूटते ही बोले - 'रात देर तक जागने से मैं सुबह जल्दी नहीं उठ पाऊँगी। मुझे सुबह-सुबह घुड़सवारी के अभ्यास में जाना होता है।'

'उनका तुम्हें आशीर्वाद प्राप्त हो, इसलिए ले जाना चाहता हूँ उनसे मिलकर चले आना।' पिता ने बेटे को समझाया। इस प्रकार पंडित जसराज से गौतम का पहला परिचय हुआ। पंडित जसराज

बहुत पारखी नजर रखते थे। वे बालक की मन:स्थिति भांप गए। गौतम के पिता ने जब पंडित जी से बेटे को अपना शिष्य बना लेने का आग्रह किया, तब उन्होंने स्पष्ट मना कर दिया। भले ही पहली मुलाकात में पंडित जी ने गौतम को शिष्य बनाने से इंकार कर दिया हो परंतु यह उनकी अत्यंत आत्मीय मुलाकात रही।

घर आकर गौतम के पिता ने बेटे को समझाया– 'तुम उनकी गायकी सुनो तो सही। वे हिंदुस्तानी मौसीकी में बहुत बड़े गायक हैं।' गौतम ने सोचा सुनने में क्या हर्ज है। पिता इतना आग्रह कर रहे हैं तो उनकी गायकी जरूर सुनना चाहिए। कुछ दिनों पश्चात गौतम अपनी बुआ के यहां मुंबई गए। वहां एक म्यूजिक की दुकान से उन्होंने पं. जसराज के उपलब्ध सभी कैसेड (उस समय सी.डी./ पेनड्राइव का जमाना न था) खरीद लिए। इंदौर आकर गौतम ने उन कैसेडों को बजाना शुरू किया। एक–एक राग और बंदिशें दिल में उतरती चली गईं। आलम ये था कि बाहर से आने वाला कोई इन कैसेडों को सुनता और समझ जाता कि गौतम घर पर हैं। अर्थात गौतम घर पर हैं, इसकी पहचान यह हुई कि पंडित जी का कैसेड बज रहा है।

पंडित जी को रात दिन सुनते हुए गौतम ने ठान लिया कि पंडित जी से ही सीखना है। पहली मुलाकात में तो पंडित जी ने सिखाने से मना कर दिया था। अब उनसे दुबारा किस प्रकार कहा जाए, यह बात गौतम की समझ में नहीं आ रही थी। संयोग से उन्हीं दिनों अकोला में पंडित जी का एक कार्यक्रम आयोजित हुआ। अकोला में गौतम के मामा जी रहते हैं। उन्होंने गौतम को संदेश भेजा, अकोला आ जाओ। पंडित जी से मिलना हो जाएगा और कार्यक्रम में उन्हें सुनने का अवसर भी मिलेगा। गौतम बड़े उत्साह से अकोला जा पहुंचे। कार्यक्रम के पूर्व अभ्यास कक्ष में कई लोग पंडित जी से मिलने आए। उनमें गौतम भी थे। पंडित जी ने लोगों से संक्षिप्त–सी बातचीत की। लोग चरण स्पर्श कर जाने लगे। गौतम को रोककर पंडित जी ने कहा– 'आज मंच पर मेरे पीछे बैठकर तुम तानपुरा बजाओ।'

गौतम को अपने कानों पर भरोसा न हुआ। मैं और पंडित जी के साथ तानपुरे पर !! असंभव, जरूर मेरे सुनने में कोई भूल हुई है। कार्यक्रम शुरू होने के पूर्व गौतम श्रोताओं में जाकर बैठ गए। केदार पंडित जो जसराज जी के साथ हमेशा तबला बजाया करते थे, उन्होंने गौतम को बुलाकर कहा – 'गुरु जी ने कहा है, तुम्हें तानपुरा लेकर मंच पर बैठना है। तुम वहां श्रोताओं में क्या कर रहे हो।'

गौतम को फिर अपने कानों पर भरोसा न हुआ। कांपते हुए स्वर में बोल फूटे– 'मैं... भला, पंडित जी के साथ.....।'

'हां... हां... तुम, गुरु जी ने कहा है।' केदार जी ने आदेशात्मक रूप से कहा।

इस तरह पहली बार मंच पर पंडित जी के बहुत निकट बैठने का अवसर मिला। कार्यक्रम के दौरान ही पंडित जी ने पूछा– 'ओम नमो भगवते वासुदेवा.... आता है– 'गौतम ने सकुचाते हुए गाया। बाद में पंडित जी ने पूछा– 'किससे सीखते हो' गौतम ने अपने जेब से उन्हीं की तस्वीर निकालकर दिखा दी। वे बोले– 'मैंने तो तुम्हें कभी नहीं सिखाया!'

'परंतु मैंने इन्हीं से सीखा है।' गौतम ने दृढ़ता पूर्वक कहा।

अब पंडित जी ने मुस्कुराते हुए कहा– 'संगीत का प्रारंभिक ज्ञान तो किसी से लिया होगा?'

'हां, अपने पिताश्री, श्रीमती कुंदा जोशी, श्री वि.जी.रिंगे और आदरणीय कल्पना झोकरकर जी से। अब आपका आशीर्वाद चाहिए' गौतम ने आग्रह पूर्वक कहा।

और सचमुच पंडित जसराज ने गौतम को भरपूर आशीर्वाद दिया। अब गौतम की पंडित जी से मुलाकातें होने लगीं। गौतम मुंबई गए। अपनी बुआ के यहां, जिनका घर चेंबूर में था। वे वहां से बस द्वारा वरसोवा में पंडित जी के घर पहुंच जाते फिर दिन भर उनके सानिध्य में रहकर संगीत साधना करते। पंडित जी समय के इतने पाबंद कि एक दिन गौतम उनके यहां पहुंचने में दस मिनिट लेट हो गए तो पंडित जी ने उन्हें लौटा दिया और कहा– 'कल समय से आना।'

एक संस्मरण बताते हुए गौतम कहते हैं– 'पंडित जी को कहीं जाना था। उनकी धोती में प्रेस न हुआ था। उन्होंने मुझको उसमें इस्त्री करने को कहा। धोती पर प्रेस करने का मेरा यह पहला अनुभव। पंडित जी को जल्दी जाना है इसलिए मैंने फटाफट यह काम कर दिया। पंडित जी ने धोती का एक सिरा उठाकर कहा– 'इसमें ऊपर से प्रेस करने को मैंने नहीं कहा था। परत–दर–परत खोलकर प्रेस करना है।' मैंने पूरी धोती फैलाकर उसमें प्रेस करना प्रारंभ किया। छोटी टेबल पर यह काम करते न बन रहा था। थोड़ी देर के लिए लाइट भी चली गई। कोई घंटे भर बाद उस धोती पर इस्त्री हो पाई। पंडित जी ने फिर धोती का एक सिरा उठाकर कहा–'ऐसी है

संगीत साधना: परत-दर-परत!'

घर में माता-पिता का आग्रह कि पढ़-लिखकर तुम्हें बड़ी सरकारी नौकरी में आना है। गौतम ने वह भी किया। स्नातकोत्तर होकर सरकारी नौकरी में आए। बहुत जल्द ही उन्हें लगने लगा कि नौकरी करते हुए मैं अपनी संगीत साधना को पर्याप्त समय नहीं दे सकता। पिता की आज्ञा लेकर उन्होंने नौकरी छोड़ी और पूरी तरह संगीत साधना में जुट गए। पंडित जी का आशीर्वाद साथ में था ही।

अब तो गौतम के पास बड़े-बड़े कार्यक्रमों के आमंत्रण आने लगे। 2015 में उन्होंने अमीर खाँ समारोह में अपनी प्रस्तुति दी। 2018 में उन्होंने प्रतिष्ठित तानसेन समारोह में भाग लिया। तत्पश्चात सबई गंधर्व संगीत सम्मेलन (दक्षिण भारत) में शिरकत करने का उन्हें अवसर मिला। आगे पं. विश्व मोहन भट्ट ने उन्हें तराना सम्मान से सम्मानित किया। इसके पूर्व 1992 में गौतम काले, भारत सरकार के सांस्कृतिक दल में महीने भर की यात्रा पर जापान गए थे, जहां उन्होंने विभिन्न शहरों में अपने सांगीतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए।

गौतम काले भाव विभोर होकर अपने गुरुदेव पं. जसराज जी के विषय में बताते हैं- 'पंडित जी को जब भी, जहां भी समय मिलता वे वहीं अपने शिष्यों को कुछ-न-कुछ नया सिखाने से न चूकते। उज्जैन में सिंहस्थ कुंभ के अवसर पर उनका आना हुआ। एयरपोर्ट में उन्हें कुछ समय मिला। वी.आई.पी. लाउंज खुलवाया गया। अधिकारियों ने दो लोगों से ज्यादा व्यक्तियों को उसमें जाने की अनुमति न दी। शिष्यों ने गुरुजी से कहा- 'हम लोग एयरपोर्ट मैनेजर से मिलकर आते हैं।'

पंडित जी बोले- 'नहीं, मैं मिलने जाऊँगा।' इतना कहकर वे एयरपोर्ट मैनेजर के कक्ष में दाखिल हुए। एयरपोर्ट मैनेजर उन्हें सामने देखकर हतप्रभ रह गया। उसने खड़े होकर उन्हें प्रणाम किया। पंडित जी ने उससे कहा- 'मैं तुम्हारे लाउंज में अपने शिष्यों सहित कुछ देर रुकना चाहता हूँ।'

'लाउंज मेरा नहीं, आपका है। आप इत्मीनान से शिष्यों सहित वहां रुकें।' मैनेजर ने विनम्रता पूर्वक कहा।

वहीं एयरपोर्ट के लाउंज में उन्हें जितना समय मिलाए उन्होंने अपने शिष्यों को सिखाया। इस प्रकार हम लोग, जहां कहीं भी पंडित जी के कार्यक्रम आयोजित होते, वहां जरूर जाते, इस आशा में कि वहां उन्हें सुनने के अलावा पता नहीं वे कब कौन सी नई चीज हम लोगों को सिखा जाएं।

गौतम ने बताया- 'भारत भवन, भोपाल में पंडित जी एक बार आए। हम लोग उनसे मिलने भोपाल पहुंचे। वे होटल अशोका में ठहरे थे। शाम का समय था। सूर्य अस्ताचल की ओर जा रहा था। पंडित जी ने फ़रमाइश की- 'कुछ सुनाओ।' मैंने राग अडाना में उनकी प्रसिद्ध रचना- 'माता कालिका....' भाव विभोर होकर गाई। गुरुजी बहुत प्रसन्न हुए। उस समय उन्होंने देर तक इस बंदिश की विशेषताएं बताईं।'

भावुक होकर गौतम बताते हैं कि 17 अगस्त 2020 में गुरु जी भौतिक रूप से हम लोगों को छोड़कर चले गए परंतु सूक्ष्म रूप में उनकी उपस्थिति मैं अपने आसपास महसूस करता हूँ। मैं उन्हें रोज सुनता हूं। रोज नई-नई बातें समझ में आती हैं।

गुरु जी की आज्ञा से ही गौतम काले ने सन 2009 से सिखाना प्रारंभ कर दिया था। सन 2015 में 'संगीत गुरुकुल' नामक संस्थान की स्थापना की, जहां आज कई शिष्य संगीत सीखते हुए पंडित जी की परंपरा को आगे बढ़ा रहे हैं। गौतम अपने गुरु जी की स्मृति में हर वर्ष इंदौर में एक बड़ा संगीत कार्यक्रम आयोजित करते हैं।

गौतम अपनी शैली में निरंतर नए प्रयोग करते रहते हैं। वे अलग-अलग रागों में, अलग-अलग तालों के साथ बंदिशें गाने का प्रयास करते हैं, उन्हें नई-नई बंदिशें बनाना और गाना पसंद है। मैंने इंदौर के कई कार्यक्रमों में उन्हें खूब सुना है। प्रायरू गुरुकुल भी जाता रहता हूँ। वे सीधे, सरल और सौम्य व्यक्तित्व के धनी हैं। सुगम संगीत से उन्हें परहेज नहीं है। इंदौर के नामी शायर राहत इंदौरी के जन्मदिवस पर, उनकी उपस्थिति में गौतम ने उनकी ग़ज़लों पर केंद्रित एक कार्यक्रम आनंद मोहन माथुर सभागार में प्रस्तुत किया था, जो एक यादगार कार्यक्रम था।

गौतम को सुनना, अपने आप में एक अनूठा अनुभव है। वे पंडित जसराज को तो गाते ही हैं, साथ ही वे अपनी मौलिकता के प्रति भी बहुत सजग हैं। युवा हैं मात्र 39 साल के। शास्त्रीय गायन में महारत हासिल करने के लिए यह उम्र बहुत कम है। परंतु उन्होंने अपने जीवन को शास्त्रीय संगीत के प्रति पूरी तरह समर्पित कर दिया है। खुद सीखते हैं और 'गुरुकुल' में छात्र-छात्राओं को सिखाते हैं। उन्हें सुनते हुए बस यही महसूस होता है -'कोई ताजी हवा चली है अभी।'

3 एच-बी, सेक्टर आर,
महालक्ष्मी नगर, इंदौर-452010(म.प्र.)
मो. 9425167003

■

आलेख

# कांगड़ा कलम : उद्भव एवं विकास

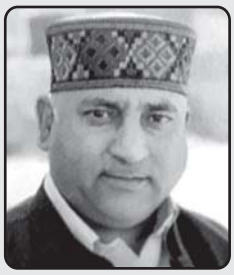

**विजय शर्मा**
**पद्मश्री से सम्मानित**

भारतीय चित्रकला की गौरवमय गाथा अजंता के भित्तिचित्रों से प्रारम्भ होती है और उसका अंतिम परन्तु महत्वपूर्ण पड़ाव संभवत: पहाड़ी कलम है। मुगल शासकों के आश्रय में हिन्दु चित्रकारों ने फारसी उस्तादों के निर्देशन में मुगल चित्रकला की अभिवृद्धि कर उसे चरमोत्कर्ष तक पहुचाया था। सत्रहवीं एवं अठारहवीं शताब्दी में मुगल शैली के उस्ताद चित्रकारों द्वारा पहाड़ी रजवाड़ों हेतु चित्रांकन करने के पर्याप्त साक्ष्य उपलब्ध हुए हैं। पहाड़ी शासक मुगलों के करदाता थे और मनसवदार होने के कारण प्राय: वे मुगल दरबार में आया जाया करते थे और इस प्रकार वे मुगल दरबार की संस्कृति एवं शाही परम्पराओं से भली-भान्ति परिचित थे। मुगल संस्कृति का अनुकरण न केवल वेशभूषा एवं परिधान तक सीमित था बल्कि दरबार की रंगीनियां एवं सामन्ती शौक एवं परम्पराओं का भी वे निर्वाह करते थे। हिमालय की तराई में अवस्थित पहाड़ी रियासतों के रसज्ञ एवं कलाप्रिय शासकों ने मुगल दरबार की परम्पराओं से कुछ हद तक प्रतिस्पर्धा दर्शाते हुए चित्रकारों को राजकीय संरक्षण दिया। फलत: सत्रहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक की कालावधि में एक विराट कला आंदोलन के अन्तर्गत चित्रकारी की इस राजाश्रित कला में अभूतपूर्व अभिवृद्धि हुई जो पहाड़ी चित्रकला के नाम से प्रसिद्ध हुई।

कला मनीषी आनन्द कुमारस्वामी संभवत: प्रथम कलाविद् थे जिन्होनें भारतीय चित्रकला के अन्तर्गत ''राजपूत कलम'' का नामकरण करते हुए इस विशिष्ठ शैली के चित्रों को सराहा तथा पश्चिम देशों के कला प्रेमियों को भारतीय चित्रकला का दिग्दर्शन एवं रसास्वादन कराया। उन्होनें 1916 में प्रकाशित अपनी पुस्तक ''राजपूत पेटिंग'' में राजपमत कलम के चित्रों को विषय-वस्तु एवं चित्रांकन विधान में ''मुगल चित्रकला'' से भिन्नता के आधार पर उनके पृथक स्तित्व का निरूपण किया।

''राजपूत शैली'' के अन्तर्गत उनका अभिप्राय उन चित्रशैलियों से था जिन्हें राजपुताने एवं उत्तर-पश्चिम हिमालय रियासतों के नृपतियों ने पोषित किया था। राजपूत चित्रकला को ''हिन्दु जीवन दर्शन की सीधी अभिव्यक्ति'' मानते हुए उन्होंनें इसे दो मुख्य धाराओं ''राजस्थानी'' एवं ''पहाड़ी'' शैलियों में वर्गीकृत किया। पहाड़ी चित्रकला से अभिप्राय उन चित्रशैलियों से है जो उत्तर-पश्चिमी हिमालय की तराई में अवस्थित पहाड़ी रजवाड़ों में पनपी तथा विकसित हुईं। ऐसी अधिकांश पहाड़ी शैलियां सत्रहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी तक विभिन्न रजवाड़ों में पोषित हुई जो अब हिमाचल प्रदेश राज्य के अन्तर्गत आते हैं। यह पहाड़ी क्षेत्र उस समय कई छोटे-छोटे रजवाड़ों में विभाजित था और अधिकांश पहाड़ी रियासतों ने चित्रकला को पोषित किया। पहाड़ी राजपूत शासकों का कला के प्रति असाधारण अनुराग था, अत: वे अपने राज्यों में मन्दिरों, भवनों और राजप्रसादों को कलापूर्ण चित्रों से सुसज्जित एवं अलंकृत किया करते थे। सत्रहवीं से उन्नीसवीं शताब्दी में उन्होनें लघु-चित्रकला को पोषित करने में असाधारण रूचि दर्शाते हुए ''त्रखाण-चित्रकारों'' को पोषित किया। संभवत: उनके सौंदर्यपरक मनोभावों, संवेगों एवं कामजनित अनुराग की भावाभिव्यक्ति हेतु सुन्दरतम माध्यम थीं। मध्ययुगीन यूरोपीय सामन्तों की भान्ति राजपूत शासकों ने ''युद्ध और प्रेम'' को अपने जीवन में बहुत अधिमान दिया।

बसोहली के कलाप्रेमी राजा-कृपाल पाल हेतु कवि भानुदत्त के काव्यग्रंथ ''रसमंजरी'' पर आधारित चित्रावली नूरपुर के चित्रकार देवीदास ने 1695 ई. में चित्रित की थी। नायिका भेद विषयक ''रसमंजरी'' चित्रावली तत्कालीन प्रचलित पहाड़ी चित्रकला के प्रारम्भिक चरण का दिग्दर्शन कराते हैं। इन चित्रों में इकरंगी सादी पृष्ठभूमि पर मानवाकृतियों, भवनों के वास्तु शिल्प एवं बेलबूटों का सुरूचिपूर्ण अंकन किया गया है परन्तु वस्तुओं को दूर अथवा पास दिखाने (पर्सपेक्टिव) की रीति का नितांत अभाव है। आकाश को चित्र के ऊपरी भाग में एक पट्टिका के रूप में दर्शाये जाने की परम्परा दिखती है जबकि भवनों के वास्तु एवं वनस्पति को अत्यन्त अलंकारिक ढंग से चटख रंगों द्वारा चित्रित किया गया है।

इन चित्रों में मानवकृतियों की सादी परन्तु भावप्रवण अभिव्यक्ति पर अधिक बल दिया गया है और सफेदे से उभारे मोतियों और जगमगाते पन्नों का प्रभाव दर्शाने हेतु चमकीले हरे कीट के पंखों को कुशलता से काट कर आभूषणों में चिपकाया गया है जो इन प्रारम्भिक पहाड़ी शैली के चित्रों की विशेष पहचान है। 1730 ई. में माणकू द्वारा चित्रित ''गीत-गोविन्द'' विषयक चित्रावली इस शैली के क्रमिक विकास की द्योतक है। इसी दौर में कांगड़ा घाटी में कई चित्रकार परिवार विभिन्न पहाड़ी राजाओं के आश्रय में चित्रांकन कार्य में सक्रिय रूप से कार्यरत थे।

कवि उत्तम द्वारा गुलेर के राजा दिलीप सिंह हेतु 1707 ई0 में रचित ''दिलीपरंजनी'' ग्रंथ एक महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेज है जिसमें गुलेर राजवंश के इतिहास को ब्रजभाषा में काव्यमय रूप में लिखा गया है। ''दिलीपरंजनी'' में कवि ने गुलेर राज्य में चित्रकारों के कार्यरत होने का उल्लेख किया है। हाल ही के नवीन शोधकार्यों से गुलेर राज्य में कार्यरत कई चित्रकारों के नामों का पता चला है जो गुलेर दरबार में चित्राकंन करते थे। इन चित्रकारों की कार्य शैली न्यूनाधिक प्रारम्भिक पहाड़ी शैली के तत्वों का समावेश लिए थी जिसमें सपाट रंग की इकरंगी पृष्ठिका पर आकृतियों को अंकित किए जाने की परम्परा थी। दिलीप सिंह की युवावस्था के शबीह चित्र इस तथ्य की पुष्टि करते हैं।

लगभग 1730-40 ई. में गुलेर राज्य में एक नवीन शैली का प्रादुर्भाव हुआ जो उत्तर मुगल कालीन चित्रशैली के गुणों को आत्मसात किये हुई थी और इसके प्रणेता थे पं. सेऊ एवं उनके दो यशस्वी पुत्र ''माणक'' और ''नैनसुख''। पं. सेऊ ''रेणा'' उपजाति के कश्मीरी ब्राह्मण थे तथा उनके दो भाई बिलन्द (बिल्लू) एवं रघु भी गुलेर दरबार हेतु चित्रांकन करते थे। कला प्रेमी राजा दिलीप सिंह और उनके होनहार पुत्र बिशन सिंह ने कलाकारों को असाधारण रूप से पोषित किया और चित्रकला की समृद्ध परम्परा को गुलेर में स्थापित किया। मुगल कलम की मृदु-वर्णिका और महीन आलेखन जैसी तकनीकी विशेषताओं को गुलेर के चितेरों ने निपुणता से आत्मसात करते हुए अपने आश्रयदाताओं की ऐसी सच्ची छवियां (शबीह अर्थात पोट्रेट) बनाई जिसमें चेहरे की भाव भंगिकाओं की सजीव अभिव्यक्ति चित्रण थी और गुलेर कलम का पृथक शैलीगत निजस्व था। पं0 सेऊ के दो पुत्रों माणक व नैनसुख तथा इन दोनों महान चितेरों के वंशधरों ने न केवल कांगड़ा घाटी बल्कि अधिकांश पहाड़ी राजदरबारों में अपनी चमत्कारी तूलिका के बल पर राजाश्रय प्राप्त कर कला की महान सेवा की। 1730-40 ई0 से लेकर 1790 ई0 तक गुलेर राज्य में कला साधना का एक व्यापक दौर रहा जिसमें कलांतों की तूलिका से एक से बढ़कर एक नयनाभिराम चित्रों का सृजन हुआ जिन्हें पहाड़ी चित्रकला के अन्तर्गत गुलेर शैली के नाम से ख्याति प्राप्त हुई। 1790 ई0 से 1830 ई0 तक की कलावधि में गुलेर के चितेरे समग्र पहाड़ी दरबारों हेतु गुलेर कलम के रूप में चित्राकंन करने लगे तो इन चित्रों को कांगड़ा शैली के व्यापक नाम से अधिक प्रसिद्धि मिली।

गुलेर के चित्रकारों के वंशजों से प्राप्त एक ड्राईंग से ज्ञात होता है कि पं. सेऊ के चित्रकार परिवार के वंशधर विभिन्न पहाड़ी रजवाड़ों के लिए चित्रांकन किया करते थे। ड्राईग में दर्शायी देवी की सत्रह भुजाएं विभिन्न पहाड़ी राज्यों एवं आश्रयदाताओं के नामों को इंगित करती हैं।

चित्रकला एक राजाश्रित दरबारी कला थी और चितेरे पारिवारिक चित्रशाला में सामूहिक रूप से चित्रांकन किया करते थे और उनकी मासिक वृतियां बंधी हुई थी। ऐसे भी तथ्य विदित हैं कि उन्हें कृषि योग्य भूमि के रूप में जागीरें पुरस्कार स्वरूप प्रदान की जाती थी। चम्बा के राजा राजसिंह ने गुलेर के चित्रकार निक्का को, बसोहली नरेश अमृतपाल ने रांझा को तथा कांगड़ा को तथा कांगड़ा के महाराजा संसार चन्द ने गौढू तथा सीबा जैसे चित्रकारों को जागीरें प्रदान की हुई थी ऐसे दस्तावेज प्रकाश में आ चुके हैं। उत्कृष्ठा कलाकृतियों के चित्रण पर चित्रकारों को स्वर्णाभूषण आदि पारितोषिक से सम्मानित किये जाने की भी परम्परा थी जिससे चित्रकार निश्चित होकर अपनी कला का उत्कृष्ठतम सृजन करते रहते थे।

कांगड़ा कलम के विकास में पहाड़ी शासकों की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। बिना राजाश्रय के इस कला का उत्थान ससंभव होता। जिस प्रकार बिना किसी आलम्बन के बेल का विकास नहीं होता उसी प्रकार राजकीय संरक्षण के बिना कलाएं भी विकसित नहीं होतीं। यदि पहाड़ी चितेरे नहीं होते तो संभवत: पहाड़ी राज्य व उनके शासकों को लोग भूल गये होते और इसी प्रकार कला पोषक राजाओं के बिना चित्रकार भी शायद भुला दिये जाते। केवल राजा ही कलाओं के पोषक नहीं थे, अपितु राज्य के वजीर एवं अभिजात्य वर्ग के धनी कुलीन रसिक भी कलाओं के गुण ग्राहक थे।

पहाड़ी शासक अपनी शबीह (छवि) बनवाने के बहुत शौकीन थे। वे अपनी शबीहें तो बनवाते ही थे साथ ही पड़ोसी राज्यों के नृपतियों के व्यक्ति चित्र भी बनवाकर अलबम (मुरक्का) में सजाकर रखते थे। बसोहली के राजा कृपाल पाल व अमृतपाल

चम्बा के राजा छत्रसिंह व राजसिंह, गुलेर के राजा दिलीप सिंह, बिशनसिंह व गोवर्धन चन्द जसरोटे के मिंया बलवंत देव व कांगड़ा के नरेश संसार चन्द और कहलूर (बिलासपुर) के राजा देवीचन्द के अनेक शबीह चित्र अंकित किये गये हैं। अधिकांश शबीह चित्रों में इन पहाड़ी शासकों के घोड़े पर आरूढ, दरबार अथवा उद्यान में हुक्का पान करते, शिकारियों के साथ वन्य प्राणियों को आखेट करते, गायन अथवा नृत्य का आनन्द लेते, अपने आराध्य देव की स्तुति करते, अन्त:पुर में रानी एवं बच्चों सहित बैठे या दरबार में दरबारियों के साथ बतियाते दर्शाया गया है।

दरबारी संस्कृति के अन्तर्गत चित्रकला साहित्य एवं संगीत आदि कलाओं के प्रति अभिरूचि अभिजात्य वर्ग की पहचान का पर्याय थीं। जयपुर के सुप्रसिद्ध कलामर्मज्ञ रामगोपाल विजयवर्गीय के अनुसार– ''चित्र, तलवार, घोड़ा, राग और रत्न के पारखियों की गणना सभ्य समाज में आदरणीय समझी जाती थी। यहां तक कि राजसभा में दरबारियों में इन गुणों का होना अनिवार्य था। काव्य शास्त्र और नायिकाओं के सौंदर्य की चर्चा होती थी।'' प्राय: राजा अपने दरबारियों के साथ सभा में चित्र अवलोकन करते और सामूहिक रूप से छककर रसास्वादन करते थे। परन्तु चित्रों का उद्देश्य केवल मनोरंजन ही नहीं था अपितु चित्रकार अपने कला पोषकों की धार्मिक और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति में सर्वदा सहायक थे। तभी तो अनेक मन्दिरों में काष्ठ–फलकों एवम् भित्ति चित्रों में विभिन्न देवी–देवताओं के विविध रूपों का सुन्दर आलेखन देखने को मिलता है। विष्णु के दशावतार, दस महाविद्या, शिव के ध्यान ओर अनेक अन्य देवी–देवताओं की सुरूचि पूर्ण अभिव्यक्तियां कांगड़ा शैली के चित्रों एवं हस्तलिखित ग्रंथों में हुई हैं।

कांड़ा घाटी की चित्रकला के चित्रों का विषय–वस्तु में श्रृंगार का बाहुल्य है। श्रृंगार रस ''रसराज'' हो अथवा न हो, परन्तु निर्विवाद रूप से यह सभी नव –रसों में श्रेष्ठतम अवश्य है और इस मधुर समन्वय की मनोहारी झांकियां महर्षि वेदव्यास प्रणीत ''श्रीमद्भागवतपुराण'' में द्रष्टव्य हैं। यद्यपि महाकवि व्यास कोई श्रृंगार रस के कवि नहीं थे, तथापि उन्होनें ''श्रीमद्भागवतपुराण'' में रासपंचाध्यायी के अन्तर्गत श्रीकृष्ण और गोपियों की श्रृंगारपरक क्रीड़ाओं का सरसतासे वर्णन किया है। भागवत में रूक्मिणी–हरण एवं ऊषा–अनिरूद्ध कथा के प्रसंग में श्रृंगारिक स्थितियों की सरस झलक मिलती है, किन्तु आश्चर्य है कि इस महत्वपूर्ण ग्रंथ में ''राधा'' का कोई उल्लेख नहीं है।

कृष्ण की प्रियतमा ''राधा'' की परिकल्पना और श्रृंगरिक साहित्य के लिए काव्य ग्रंथों में उसका समावेश अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी। भक्ति और श्रृंगार का सुन्दरतम सम्मिश्रण बारहवीं शताब्दी के महाकवि जयदेव के मधुर कोमलकान्त गीतिकाव्य ''गीत–गोविन्द'' में झलकता है जो परवर्ती कविजनों के लिए मुख्य प्रेरणा स्रोत था। गीत–गोविन्द में राधा एवं गोपियों के साथ विहार करते कृष्ण की मौलिक कल्पनाएं हैं। यमुना के तट पर सुरभित, सुवासित कुंजों में राधा एवं गोपियों के साथ कृष्ण द्वारा रास नृत्य में निमग्न होने के ''गीत–गोविन्द'' में श्रृंगारिक प्रसंगों के अनेक उल्लेख हैं। कांगड़ा घाटी के चित्रकारों ने राधा–कृष्ण की इन श्रृंगार परक कल्पनाओं को रंग–रेखाओं द्वारा मूर्त रूप देकर अत्यन्त ही रमणीयता एवं दक्षता से चित्रों में साकार किया है।

कांगड़ा घाटी की चित्रकला में चित्रित विषयवस्तु तत्कालीन समाज की मानसिक प्रवृतियों का द्योतक है। भक्तिकाल की प्रबल धारा के प्रवाह से नि:सृत राधा–कृष्ण की मुग्ध छवियां कलाओं के सृजन हेतु मुख्य प्रेरणा स्रोत बनीं। वैष्णव भक्ति आंदोलन, जो 15वीं–16वीं शती में उत्तर भारत में उदात वेग से प्रवाहित हुआ, पहाड़ी क्षेत्र में भी असाधारण ढंग से प्रभावकारी था, जिसके परिणामस्वरूप 16वीं से 18वीं शती में राम और कृष्ण को समर्पित अनेक मन्दिरों, देवालयों का निर्माण पहाड़ी राज्यों में हुआ। इसी काल में संस्कृत के धार्मिक ग्रंथों बाल्मीकि रामायण, भागवत पुराण, विष्णु के दशावतार तथा जयदेव के अनुपम काव्यग्रंथ गीतगोविन्द पर आधारित चित्रों की वृहद् श्रृंखलाओं का अत्यन्त सुकुमार ढंग से अंकन हुआ। वैष्णव मत के सखी सम्प्रदाय की अवधारणा के अनुसार समस्त जगत स्त्रैण है और पुरूष केवल कृष्ण हैं। कृष्ण ''परमात्मा'' हैं और गोपियां ''आत्माएं''। समस्त गोपी रूपेण आत्माएं कृष्ण रूपी परमात्मा में लीन होने को आतुर हैं। अत: वैष्णव सम्प्रदाय की इस अवधारणा को अभिव्यक्त करते चित्रों का अंकन कांगड़ा शैली के चितेरों ने अद्भुत कुशलता से किया है।

जयदेव और मैथिल कवि विद्यापति द्वारा राधा–कृष्ण की दिव्य छवि का आलम्बन लेकर की काव्य रचनाओं से प्रेरित होकर मध्यकालीन हिन्दी कवियों ने अधिकांश रचनाएं राधा–कृष्ण को लक्षित करके लिखीं है। यद्यपि इस युग में भी सांस्कृतिक वर्ग अभी भक्ति काल के प्रभाव से पूर्णतय मुक्त नहीं हुआ था। हिन्दी साहित्य के भक्ति काल की परिणती ही रीतिकाल में होती है। रीतिकालीन काव्य में यदि राधा और कृष्ण का उपयोग प्रतीकात्मक रूप से किया है तो इसका श्रेय सूरदास एवं नन्ददास सरीखे वैष्णव भक्त कवियों

को जाता है जिन्होनें स्वयं राधा–कृष्ण के प्रेम पर आधारित सरल काव्य रचनाएं कर श्रृंगार के संयोग और वियोग पक्षों की गरिमामय प्रस्तुति की।

रीतिकालीन हिन्दी काव्य में श्रृंगारिक रसिकता होते हुए भी उसका आधार ऐन्द्रिय सुख की प्राप्ति था। यदि कांगड़ा घाटी के चित्रों में श्रृंगार रस की बहुलता मिलती है तो उसकी पृष्ठभूमि में रीतिकालीन काव्य का आधार है। रीतिकाव्य में केवल ''रस'' है – वह भी '' श्रृंगार रस''।

पंद्रहवीं शताब्दी में आचार्य भानुदत्त ने संस्कृत में नायिका भेद विषयक काव्यग्रंथ रसमंजरी की रचना की जिसमें विभिन्न प्रकार की नायिकाओं के भेद–उपभेदों का विस्तृत निरूपण था। उन्होनें रसमंजरी ग्रंथ में नायिकाओं की आयु, गुणों, प्रियतम के प्रति उनके व्यवहार और प्रेम में परिस्थितियों के अनुसार असंख्यसूक्ष्म भेदों का सरसता से वर्णन किया। रसमंजरी को आधार मानते हुए और भानुदत्त का अनुकरण करते हुए आचार्य केशवदास ने हिन्दी में ''रसिकप्रिया'' नामक काव्य ग्रंथ लिखा जिसमें नायिका, नायक के रूप में उन्होनें राधा' कृष्ण युगल की दिव्य छवि का आलम्बन लिया और परवर्ती कवियों का ''नायिका–भेद'' विषय पर श्रृंगारिक काव्य रचनाओं के सृजन हेतु एक नई दिशा देकर उनका मार्ग प्रशस्त किया। फलस्वरूप कविराय सुन्दर, मतिराम, बिहारी, देव, घनानन्द, भूषण, भगवान, कालिदास त्रिपाठी आदि कवियों ने नायिका भेद और उनका ''नखशिख'' सौन्दर्य को उजागर करने वाले काव्य का सृजन किया।

सत्रहवीं–अठारहवीं शताब्दी में तत्कालीन विलासप्रिय नृपतियों में सौंदर्य को उत्तेजक और आकर्षक रूप में देखने की मनोवृति ने काव्य और चित्रकला को प्रभावित किया। शासक वर्ग और सामन्तों की श्रृंगारिक मनोवृति एवं ऐन्द्रिय तृप्ति हेतु कवियों ने अपनी रचनाओं में अंतिरंजित श्रृंगारिकता का आलम्बन लिया। अब कविता ''सवांत:–सुखाय'' ने होकर ''स्वामी–सुखाय'' हों गई थी। भिखारी दास कवि ने तो साफ कह दिया कि ''राधा–कृष्ण'' तो सुमिरन को बहानो है''। नागरी राधा से भवबाधा हरण की स्तुति करने वाले बिहारी जैसे श्रेष्ठ कवि भी रीति–प्रवृतियों की धारा में बहते हुए राधिका और हरि (कृष्ण) का आलम्बन लेकर ऐन्द्रिय सुख के ब्याज से अतिशय वर्ण करने लगे थे:

**''राधा–हरि हरि–राधिका बनि आए संकेत।**
**दम्पति रति विपरित सुख सहज सूरत हूं लेत।।''**

''नायिका–भेद'' एवं नायिकों के ''नख–शिख'' वर्णन में रीतिकालीन कवियों ने श्रेष्ठतम काव्य रचनाएं की तो कांगड़ा कलम के चित्रकारों ने भी कवियों के साथ कंधे से कंधा मिलाते हुए एक से बढ़कर एक सौंदर्यमयी चित्रों का अद्भुत सृजन किया। रीतिकाव्य को मूलाधार मानकर बनाएं कांगड़ा कलम के इन चित्रों में अनिर्वचनीय सौंदर्य प्रकट हुआ है जिनमें श्रृंगार रस का जीवन्त प्रस्फुटन चित्र दर्शक के सम्मुख एक अलौकिक वातावरण की सृष्टि करते हैं। केशव दास की ''रसिकप्रिया'' हो अथवा बिहारी की ''सतसई''। कांगड़ा शैली के इन चित्रों में पीताम्बरधारी नीलवर्णी कृष्ण सदृश आकृति वास्तव में नायक की है। कलम के चितेरों ने नायक की अभिव्यक्ति में सदैव कृष्ण की मनोहारी छवि का चित्रण किया। अष्टनायिका के अन्तर्गत वर्णित स्वाधीनपतिका नायिका की प्रस्तुति में कृष्ण को नायिका रूपी राधा के चरणों में महावर लगाते हुए दर्शाया गया है:–

कवित:–

**केसव जीवन जो ब्रज को पुनि जीवहु तैं अति बापही भावै।**
**जापर देव–अदेव–कुमारि निवारत माइ न बार लगावै।**
**ता हरि पैं तूं गंवार की बेटी महावर पाई ढवांई दिवावै।**
**मैं तौ बची अब हांसि नहीं ऐसे और जो देखै तौ ऊतरू आवै।।**

सखी स्वाधीनपतिका–नायिका (राधिका) को सम्बोधित कर कहती है कि, हे सखी! श्री कृष्ण जो समस्त ब्रजवासियों के प्राण हैं और जिन पर देवताओं और नर–कुमारियों को न्यौछावर कर देने में उनकी माता तनिक भी देर नहीं लगाती, ऐसे में तू साधारण सी ग्राम की छोरी होकर श्रीकृष्ण से अपने चरणों को झांवे से घिसकर महावर (आलता) लगवाती है? तेरा यह दु:साहस देखकर मैं तो केवल हंस कर टाल गई। अगर कोई अन्य देखेगा तो तुम क्या उत्तर दे पाओगी।

इसी प्रकार ''बारामासा'' चित्रों में भी नायिका के साथ नायक को नीलवर्णी कृष्ण के रूप में चित्रित किया गया है, भले ही नायक को पटके युक्त जामा और पगड़ी का परिधान पहनाया गया है। केशव के कवित्त पर आधारित कांगड़ा कलम के एक अन्य चित्र, जिसमें मानिनी नायिका का मार्मिक अभिव्यक्ति है, में कृष्ण नायक के रूप में विराजमान हैं। मानिनी को उसकी सखियों विविध भान्ति से मान–मनावन करके हार जाती हैं परन्तु हठी मानिनी मान भंग नहीं करती:

कांगड़ा कलम में बिहारी सतसई के दोहों पर एक वृहद् चित्रमाला का अंकन हुआ है, जिसके अनेक प्रसंग संपूर्ण चित्रों एवं रेखांकनों के रूप में विभिन्न संग्रहों में संगृहीत हैं। नायक–नायिकाओं की विभिन्न सरस चेष्ठाओं की राधा–कृष्ण की

अलौकिक युगल छवि का आलम्बन लेकर चतुर चितेरों ने अंकित किया है। कविवर बिहारी के एक दोहे पर आधारित चित्र में कांगड़ा के कुशल पुष्प को हथेली से प्रहार करती नायिका की भाव –भंगिमा व त्रिवली पर रीझ कर अपना मन लुटा बैठे नायक की अभिव्यक्ति प्रस्तुत की है। उन्नत वक्ष वाली नायिका पुष्प को हथेली से उछालने की चेष्टा में जब कुछ आगे बढ़ी तो उसके उदर पर उभर आई त्रिवली को सीढी बनाकर नायक का हृदय ऊपर तो चढ़ आया पर नायिका के वक्षस्थल तक ही पंहुचा और वहीं लुटकर रह गया।''

बिहारी सतसई के अन्य प्रसंग में राधा अधिक देर तक बातों का रस लेने के बहाने कृष्ण की मुरली छुपा लेती है, और पूछने पर कभी सौगंध लेती है तो कभी टेढी चितवन से मुस्कुराती है:

**''बतरस लालच लाल की मुरली लई लुकाय।**
**सैंह करे, भैंह हंसे, देन कहे नटि जाय।।''**

राधिका कभी कृष्ण का पीताम्बर और मोरमुकुट स्वयं पहन लेती है और कृष्ण राधिका के वेशभूषा में दिखलाई पड़ते हैं। राधा–कृष्ण की इस चेष्टा को आचार्य केशव ''लीला–हाव'' नाम से वर्णन करते हैं। कवि बिहारी इस अवस्था की सुन्दर परिकल्पना निम्न दोहे में करते हैं:

**राधा–हरि हरि–राधिका बनि आए संकेत।**
**दम्पति रति विपरित सुख सहज सुरत हूं लेत।।**

कृष्ण के प्रेम में पगी राधिका एक क्षण के लिए भी कृष्ण की छवि से वंचित नहीं रहना चाहती। कृष्ण जब राधिका के पीछे खड़े होकर उसकी बेणी का श्रृंगार करने लगते हैं तो वे आरसी में लगे दर्पण में अपने प्रिय की छवि के प्रतिबिम्ब को अपलक निहारती है:

**''कर मुन्दरी की आरसी प्रतिबिम्बित प्रिय पाई।**
**पीठी दियैं निधरक लखै इकटक दीठी लगाई।।''**

बिहारी कमनीय नायिकाओं के उज्जवल मुख की उपमा चन्द्रमा से करते हैं। सतसई के एक दोहे में ऐसी ही एक रमणी का उल्लेख है जिसके चन्द्र समान मुख को देखकर चकोर भ्रमित सा हो बैठा कि दिन में चन्द्रोदय कैसे हो गया ? एक अन्य नायिका के वर्णन में तो कवि बिहारी ने अतिशयोक्ति पूर्ण उपमा की है।

अपनी सखी के साथ चन्द्रमुखी नायिका शुभ्र वस्त्रों को पहनकर अभिसार करने जा रही है। उसका गौरवर्णी शरीर चांदनी में ऐसा विलीन हो गया है कि सखी को नायिका दिखाई देती। वह नायिका के सुरभित शरीर से प्रवाहित सुगंध के सहारे उसका अनुगमन करती है:

**''जुवति जोन्ह मैं मिली गई नैनक न होती लखाई।**
**सैंधे के दोरैं लगी अली चली संग जाई।।''**

अंगराग और आभूषण धारण किये बिना भी नायिका का दैदीप्यमान सौंदर्य किस प्रकार परिवेश को अलौकित करता है इसका उदाहरण बिहारी के निम्न दोहे में अभिाव्यक्त हुआ है, जिसमें श्वेत वस्त्र पहने सद्य:स्नाता नायिका अपनी उज्जवल देह से सारे रसोईघर को प्रदीप्त कर रही है:

**''टटकी धोती धोवती, चटकीली मुख जोति।**
**लसति रसोई कै बगर, जगर मगर द्युति होती।।''**

महाकवि मतिराम की सतसई पर आधारित चित्र भी कांगड़ा कलम में खूब बने। राजा संसार चन्द की चित्रशाला के चितेरे द्वारा बनाया गया चित्र मतिराम के निम्न दोहे पर आधारित है। जिसमें प्रेमवती नायिका निद्रामग्न होने पर भी नायक को बाहुपाश में भींचकर अपने अंक से लगा रखती है:

**''लपटानि अति प्रेम सौं, दे उर उरज उतंग।**
**घरी एक लों छुटेहुं पर, रही लगी सी अंग।।''**

एक प्रसंग में राधा अपने प्रियतम कृष्ण से मिलने पहुंचती है। कौतूहल उत्पन्न करने की दृष्टि से राधिका ने विचित्र ढंग से परिधान धारण किया। उसने अपने वस्त्र पर कंचुकी के बदले चन्दन का आलेपन किया और केसर के रंग से उसके बंद बनाए। प्रेमी युगल जब परस्पर मिले तो रसिक कृष्ण ने राधा की कंचुकी से बंध ढीले करने का प्रयास किया पर वे इस चेष्टा में असफल हो खिसिया कर ही रह गया। क्योंकि राधा ने अत्यन्त चतुराई से कंचुकी के बदले वक्ष पर चंदन का लेप लगा रखा था जिसे चांदनी रात में कृष्ण सचमुच की कंचुकी समझ बैठे। इस प्रसंग में कवि ने अपनी कल्पनाशीलता का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत किया है:

**''भूषण भेद स्वार सभै अंग, और भान्त किया कुछ बाना।**
**चंदन की कंचुकि कुच ऊपर, केसर बंद तेऊ रंग ठाना।।**
**श्री घनश्याम सुजान पिया, रसके चसके कुछ भेद न जाना।**
**हो तिरछी देह ललना तब, कंचुकि खोलत लाल लजाना।।''**

रीतिकालीन श्रृंगारिक काव्य ग्रंथों के अतिरिक्त कांगड़ा कलम में अनेक विषयों का अंकन हुआ है। संस्कृत के काव्यग्रंथों में कालिदास के ''अभिज्ञान शाकुन्तलम्'' और ''मेघदूत'' पर आधारित चित्र भी बने हैं। श्रीहर्ष ''नैषधीयचरित'' पर आधारित ''नल–दमयन्ति'' की चित्र श्रृंखला कांगड़ा कलम के सर्वोत्तम उदाहरणों में से एक है। भानुदत्त की ''रसमंजरी'' पर नायिका भेद विषयक चित्रों के अतिरिक्त धार्मिक एवं तान्त्रिक ग्रंथों पर आधारित

अनेक चित्र कांगड़ा कलम में देखने को मिलते हैं। कामशास्त्रीय ग्रंथों में वर्णित नारी-पुरूषों के भेद, नारी कुंजर तथा यौन सम्बन्धी चित्रों का अंकन भी कांगड़ा कलम के चितेरों ने अद्भुत कुशलता से किया है। शायद ही कोई ऐसा विषय हो जो कांगड़ा के चित्रकारों की जादूई तूलिका से स्पर्शित न हुआ हो।

रागमाला - अर्थात ''रागों की माला'' एक ऐसा विषय है जो पहाड़ी शासकों को सदैव रूचिकर रहा। पहाड़ी चित्रकला की अनेक शैलियों में रागमाला विषयक चित्रों का सुन्दर ढंग से अंकन हुआ है। कांगड़ा कलम की रागमाला चित्र श्रृंखला का एक अनुपम संग्रह दिल्ली स्थित राष्ट्रीय संग्रहालय में है। रागमाला चित्रों में राग - ''भैरव, मालकौंस, हिण्डोल, दीपक, मेघ तथा श्री'' छः मुख्य राग है। इन छः रागों में से प्रत्येक की पांच रागिनियां और आठ रागपुत्र हैं। इस प्रकार रागमाला परिवार में कुल 84 संख्या में राग-रागनियां और रागपुत्र वर्गीकृत हैं। क्षेम कर्ण द्वारा प्रत्येक गेय राग के पृथक ध्यान व निर्धारित स्वरूप पर कांगड़ा रागमाला चित्र आधारित है।

भागवत पुराण के दशम स्कन्ध पर आधारित कृष्ण लीला के अतिरिक्त ''ऊषा-अनिरूद्ध'', ''सुदामा-चरित'' और ''रूक्मिणी-मंगल'' जैसे विषय भी भागवत पुराण से ही लेकर चित्रित हुए हैं। इसी प्रकार ''रामायण'' एवं ''महाभारत'' जैसे महाकाव्यों पर कांगड़ा शैली में चित्रित अनेक चित्र जीवन्त हो उठे हैं। चण्डी पाठ विषय पर तो संपूर्ण चित्रावलियां चित्रित हुई हैं। तान्त्रोक्त दशमहाविद्या और विष्णु के दशावतार विषय पर भी बहुत सारे चित्र कांगड़ा शैली में विद्यमान हैं। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य विषय भी कांगड़ा कलम में यदा-कदा देखने को मिलते हैं यथा- ''किरातर्जुनीय, मालती-माधव'', ''माधवानल-कामकन्दला'', ''सोहनी-महिवाल'', ''लैला-मजनू'', ''बाजबहादुर-रूपमति'', ''ससी-पुन्नू'' इत्यादि। रणथम्बोंर के वीर राजा हमीर की वीरता दर्शाते चित्र ''हमीर-हठ'' काव्य पर आधारित हैं जिसमें कांगड़ा के कुशलचितेरों ने वीर रस को अत्यन्त कुशलता से अभिव्यक्त किया है। रनिवास में काम के लि करते सामन्तों एवं अन्तःपुर की स्त्रियों के आमोद-प्रमोद के दृश्यों को भी चितेरों ने अपनी तूलिका का विषय बनाया है।

कांगड़ा कलम का उत्थान कला जगत का एक अविस्मरणीय माध्यम है। अठाहरवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में (1770-1800) कांगड़ा घाटी की चित्रकला अपने चरमोत्कर्ष पर पहुंची प्रतीत होती है। कांगड़ा शैली के गीत गोविन्द विषयक चित्रों में सूक्ष्म अंकन, कोमल एवं उज्ज्वल वर्ण-संयोजन, हतप्रभ कर देने वाली सुन्दर अभिव्यंजनाओं के कारण ''कांगड़ा कलम'' की प्रसिद्धि दूर-दूर तक फैल गई थी। कला की इतनी ऊँची उड़ान भारतीय चित्रकला के इतिहास में अपूर्व थी।

विशेषतः नारी आकृतियों का ऐसा सौंदर्य पूर्ण एवं नयनाभिराम अंकन किसी अन्य भारतीय चित्रशैली में देखने को नहीं मिलता। कांगड़ा की सौंदर्यगर्विता कमनीय नायिकाओं के आगे मुगल एवं राजस्थानी शैली की सुन्दरियों का सौंदर्य भी क्षीण और तिरोहित दृष्टिगोचर होता है।

**दूसरा अध्याय**

1707 ई. में कवि उत्तम ने ''दिलीपरंजनी'' ग्रंथ में हरिपुर-गुलेर में चित्रकारों की उपस्थिति का उल्लेख किया है। हाल ही के नवीन शोधकार्य द्वारा गुलेर दरबार हेतु चित्रांकन करने वाले अनेक चित्रकारों के नामो का पता चला है जो अठारहवीं शताब्दी के प्रारम्भिक चरण में गुलेर में सक्रिय रूप से कार्यरत थे। गुलेर चित्रकला के इतिहास में राजा दिलीप सिंह के राज्यकाल (1695-1741ई.) का अध्ययन अत्यन्त महत्वपूर्ण है क्योंकि इसी दौरान गुलेर में उत्तर मुगल कालीन चित्रकला से प्रभावित एक नवीन चित्रशैली विकसित हुई जिसकी अपनी पृथक पहचान थी।

गुलेर शैली के उद्भव की कहानी अभी भी अनजानी सी है कि अचानक पहाड़ों में किस भान्ति से मुगल शैली से प्रभावित एक नई चित्रशैली का आविर्भाव हुआ। इस सम्बन्ध में विभिन्न कला विद्वानों की अलग-अलग राय है। कुछ विद्वान सोचते हैं कि शायद गुलेर से चित्रकार स्वयं ही बाहर (दिल्ली या लाहौर) कला साधना हेतु गये हों अथवा उन्होनें मुगल शैली के चित्रों को देखकर अपनी कला को निखारा। पूर्व निर्मित चित्रों को देखकर कोई भी कलाकार उनके बनाने के ढंग विशेषकर महीन सूक्ष्म पर्दाज और साया लगाने की तकनीक को गुरु के सन्निध्य के नहीं सीख सकता। गुलेर कलम के चित्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि किस प्रकार मुगल शैली के तकनीकी तत्व जैसे वसली (कई कागजों को जोड़कर बनाया गया धरातल) बनाना, हाशिये पर सोने का छिड़काव (अफशां) चेहरे में घुलती हुई रंगत में महीन पर्दाज लगाना और रांगे की रंगत से नदी का जल दर्शाना आदि ठेठ मुगल शैली के द्योतक है जिन्हें मुगल शैली के उस्ताद चित्रकार की शगिर्दी किये बिना नहीं सीखा जा सकता। नुरपुर राज घराने के चित्र संग्रह से प्राप्त अनेक चित्रों में उत्तर मुगल कालीन शैली की झलक मिलती है। इन चित्रों के मुगल शैली के तत्वों को गुलेर व कांगड़ा कलम के चित्रों में देखा जा सकता है।

अठाहरवीं शताब्दी के प्रथम चरण में गुलेर के राजपुरोहित

दिनमणि रैणा और राजा दिलीप सिंह की युवावस्था के व्यक्ति चित्रों से गुलेर में प्रचलित पहाड़ी कलम के प्रारम्भिक चित्रशैली का पता चलता है जिसमें अधिक खुले नेत्रों वाली आकृतियों का सादी पृष्ठभूमि में संयोजन किया गया है। किन्तु अठारहवीं शताब्दी के तीसरे दशक के अन्त तक राजा दिलीप सिंह और उनके ज्येष्ठ पुत्र के कई व्यक्ति चित्र उपलब्ध हैं जो मुगल शैली की भान्ति यथार्थ चित्रण की रीति कर बोध कराते हैं। नैनसुख द्वारा बनाए गए अपने कला पोषक जसरोटे के राजा बलबन्त देव के रूप चित्रों से ज्ञात होता है मानो वे मुगल सम्राट अथवा मुगल अधिकारियों की शबीह को आधार मानकर चित्रित किये गए हों।

**कांगड़ा कलम ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य में**

कांगड़ा कलम का इतिहास गुलेर राज्य से जुड़ा हुआ है। कांगड़ा घाटी में चित्रकला का जो तरूवर समुचित राज्याश्रय पाकर पल्लवित एवं पुष्पित होकर सुरभित हुआ और उसकी जड़ें गुलेर में थीं। गुलेर को कांगड़ा कलम की ''जन्म-स्थली'' भी कहा जाता है। गुलेर चित्रशैली जब मध्य अठाहरवीं शताब्दी के पश्चात् विकसित होकर समग्र पहाड़ी क्षेत्र में लोकप्रिय हुई तो उसे ''कांगड़ा कलम'' के नाम से अधिक ख्याति प्राप्त हुई। अत: गुलेर शैली का परिष्कृत एवं विकसित रूप ही कांगड़ा कलम है। कुछ विद्वान गुलेर शैली को प्रारम्भिक कांगड़ा कलम के नाम से भी संबोधित करते है। कांगड़ा शैली के अधिकांश चित्रकार गुलेर के चित्रकारों के वंशधर थे।

अठाहरवीं शताब्दी के प्रराम्भ में एक नवीन शैली का अभ्युदय गुलेर के कला-प्रिय शासकों के प्रश्रय में हुआ था। राजा दिलीप सिंह का राज्यकाल (1695-1741 ई.) गुलेर में चित्रकला की दृष्टि से संक्रमण काल समझा जाता है। उस समय मुगल साम्राज्य ह्रासोन्मुख होकर छिन्न-भिन्न हो चुका था। उस काल के मुगल शासक चित्रकला के प्रति सर्वदा उदासीन थे। ऐसे परिवेश में मुगल शैली के उपेक्षित दरबारी चित्रकार नए आश्रयदाताओं की खोज में विभिन्न हिन्दु रजवाड़ों में राजकीय संरक्षण हेतु उन्मुख हुए। उस काल में मुगल चित्रकला लखनऊ के नवाबों के संरक्षण में पोषित हो रही थी और लखनऊ एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक केन्द्र बनकर उभरा। उत्तर मुगलकाल की चित्रकला की अन्य शाखाएं अवध के अतिरिक्त मुर्शिदाबाद (बंगाल) में प्रस्फुटित हुईं। ठीक इसी समय में (लगभग 1730 ई.) में सम्राट मुहम्मद शाह कालीन मुगल चित्रशैली में दीक्षित चित्रकारों ने गुलेर दरबार में आश्रय प्राप्त किया।

इस चित्रकार का नाम था पण्डित सेऊ। पं. सेऊ अपने दो भाईयों सहित मुगल कला से प्रभावित यथार्थवादी चित्रशैली में चित्रांकल करता था। यद्यपि पं. सेऊ का हस्ताक्षरयुक्त कोई भी चित्र अभी प्रकाश में नहीं आया है, परन्तु उनके दो पुत्रों माणक व नैनसुख की चित्रण शैली से पं. सेऊ की चित्रांकन शैली का आकलन किया जा सकता है। पं. सेऊ व उसके दो भाई बिल्लू (बिलन्द) और रूघु गुलेर दरबार के प्रतिष्ठित चित्रकार थे। राजा दिलीप सिंह और उनके कलानुरागी पुत्र बिशन सिंह महान कला प्रेमी थे। इन गुण-ग्राहक रसिकों के आश्रय में गुलेर में चित्रकला ने शीघ्र ही अपनी निजी पहचान स्थापित कर ली। मुगल शैली के अनेक तत्वों को समाहित करती इस नवीन शैली की अपनी मौलिक विशेषताएं हैं।

गुलेर शैली के चित्रों में मुगल शैली की दरबारी चकाचौंध वाले दृश्यों की कृत्रिमता और विलासता न थी, अपितु पहाड़ी भू-दृश्यों का नैसर्गिक सौंदर्य एवं स्थानीय परिवेश की स्पष्ट अभिव्यक्ति थी। अब चित्रों में पूर्व प्रचलित प्रवृतियों से भिन्न रीति से मानवाकृतियों एवम् भू-दृश्यों का अंकन हुआ है। ढलानदार पहाड़ियों में वृक्षों के समूह, सरोवर में खिले कमल-दल, जलचरों और पक्षियों की उपस्थिति, कन्दली वृक्षों के झुण्ड, अग्र भूमि में सुन्दर फूलों युक्त पौधे एवम् शुभ्र रंगों वाले उज्जवल भवनों का वास्तु आदि गुलेर चित्रशैली की निजता थी। आकाश में सुर्यास्त से पूर्व लालिमा युक्त बादल प्राय: दृष्टिगोचर होते हैं। दूर की पहाड़ियों में सरोवर जिसमें जलचर किलोल करते हैं, अथवा वृक्षों के झुरमुट में लघु आकार के झांकते भवनों का समूह अन्तराल (पर्सपेक्टिव) का बोध कराते हैं। मानवाकृतियों के गोलाईदार चेहरों पर मुगल शैली के समान परदाज से साया लगाने की परम्परा (शेडिंग) गुलेर के चित्रों में दिखाई देती है। पुरूषों के समूह में प्रत्येक व्यक्ति की मुखाकृति में भिन्नता दर्शाना गुलेर शैली की विशेषता है। नारी आकृतियों में चेहरा रंग में घुलती हुई महीन परदाज (साया) लगाने में गुलेर के चित्रकार निपुण थे।

पं. सेऊ के भाईयों के पुत्र ग्वाल, टेढ़ा व पुन्नु भी चित्रकारी में निष्णात थे। वे संयुक्त रूप से पारिवारिक चित्रशाला में चित्रांकन करते थे। पं. सेऊ अपेक्षाकृत अत्यन्त प्रतिभा-सम्पन्न चित्रकार थे। उनकी प्रतिभा के समस्त गुण उनके पुत्रों माणक एवं नैनसुख के चित्रों में स्वत: उजागर होते हैं। दुर्भाग्यवश गुलेर राज्य से सम्बन्धित ऐतिहासिक तथ्यों का नितान्त अभाव है जिससे वहां के शासकों का वृतान्त एवं उनसे सम्बन्धित घटनाओं एवं तिथियों का ज्ञान हो सके। तथापि ''दिलीपरंजनी'' काव्य ग्रंथ जो राजा के आश्रित कवि उत्तम द्वारा सन् 1707 ई. में रचा गया था- से हमें तत्कालीन गुलेर राज्य के एतिहासिक घटनाक्रमों का पता चलता है। ''दिलीपरंजनी'' के

निम्न दोहे में चित्रकारों का उल्लेख हुआ है जो दिलीप सिंह के राज्यकाल में चित्रकारों के सक्रिय होने का उल्लेख करता है।

राजा दिलीप सिंह और उसके पुत्रों के अनेक शबीह चित्र विभिन्न संग्रहों में संगृहित हैं जो तत्कालीन चित्र प्रवृतियों के साक्ष्य हैं। राजा दिलीप सिंह के शबीह चित्रों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गुलेर में चित्रकार कई प्रकार की शैलियों में कार्य करते थे।

गुलेर के चित्रकारों ने राजपुरूषों के शबीह चित्रों के अतिरिक्त भागवत् पुराण विषयक एवं बृहद् चित्र श्रृंखला का महत्वाकांक्षी कार्य प्रारंभ किया था जिसके अनेक चित्र एवं रेखांकन विभिन्न संग्रहों में हैं। राजा दिलीप सिंह के अतिरिक्त उनके पुत्र बिशन सिंह एवम् गोवर्धन चंद महान कला पोषक थे। गुलेर शैली की स्थापना एवम् विकास में कला के इन तीनों गुण ग्राहकों के नाम अविस्मरणीय हैं। इनकी छत्रछाया में संरक्षण प्राप्त कर चित्रकारों ने कला साधना में अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया। फलत: चित्रकला अपने चरमोत्कर्ष पर जा पंहुची। राजा दिलीप सिंह के राज्यकाल में ही उनके ज्येष्ठ पुत्र बिशन सिंह, जो कला प्रेमी होने के अलावा एक कुशल प्रशासक भी थे, का सामयिक देहान्त हो गया था। इस दुखमयी घटना से गुलेर में चित्रकला के प्रवाह में एक अवरोध सा आ गया। अति संभवत: इसी काल में पं. सेऊ अपने कनिष्ठ पुत्र नैनसुख – जो विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न चित्रकार था,– के लिए किसी महत्वपूर्ण एवम् रसिक कला पोषक की खोज में थे। उन्होनें जसरोटा के शासकों का संरक्षण प्राप्त किया जो उस समय शक्ति एवम् संसाधनों की दृष्टि से पर्याप्त सम्पन्न थे। जसरोटा के राजा धुवदेव, भूपाल देव, कीरत देव, मियां मुकन्द देव और जोरावर सिंह के शबीह चित्र नैनसुख द्वारा चित्रित हैं जो ठेठ गुलेर शैली के द्योतक हैं। परन्तु नैनसुख की लम्बी कलायात्रा मिंया जोरावर सिंह और उनके बेटे मिंया बलवंत सिंह के सानिध्य में प्रारम्भ हुई। मियां बलवंत सिंह शबीह बनवाने का बड़ा शैकीन था। नैनसुख द्वारा बनाए गए बलवंत सिंह के चित्र एवम् रेखांकनों का अच्छा खासा संग्रह (विभिन्न संग्रहों में) सुरक्षित है। गुलेर शैली में अंकित ये चित्र भिन्न–भिन्न कालावधि के महत्वपूर्ण दस्तावेज हैं जो बलवंत सिंह के जीवनकाल की विविध झांकियों को उद्घाटित करते हैं। बलवंत सिंह और नैनसुख की सुखद युगलबन्दी के परिणामस्वरूप बने चित्र आप पहाड़ी चित्रकला की महत्वपूर्ण धरोहर है।

उधर पं. सेऊ का ज्येष्ठ पुत्र माणक अपने भाईयों (चचेरे भाई पुन्नू, ग्वाल व टेढ़ा के साथ गुलेर दरबार हेतु चित्रांकन करते रहे । इस पारिवारिक चित्रशाला के प्रमुख चित्रकार माणक थे। राजा दिलीप सिंह के पश्चात् उनके उत्तराधिकारी राजा गोवर्धन चंद ने चित्रकला को समुचित प्रोत्साहन दिया जिससे गुलेर चित्रशैली उत्तरोत्तर विकसित होती गई। राजा गोवर्धन चंद के अनेक श्बीह चित्र राजकीय, संग्रहालय, चंडीगढ़ में संगृहीत हैं।

गोवर्धन चंद के पश्चात् उनका पुत्र प्रकाश चंद गुलेर राज्य का शासक बना। परन्तु प्रकाश चंद के समय में गुलेर राज्य आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न न था। फलत: क्रियाकलापों में शिथिलता आना स्वाभाविक था। इस काल में पं. सेऊ तीसरी पीढ़ी के कलाकार (माणक एवम् नैनसुख के पुत्र आदि) चित्रकला में निष्णात हो चुके थे। और कला का गौरवमय इतिहास रचने हेतु सर्वदा तैयार थे। चम्बा, कांगड़ा, मण्डी और बसोहली के शासकों ने इस तीसरी पीढ़ी के कलाकारों को समुचित संरक्षण दिया जिससे गुलेर शैली का कला वैभव दूर–दूर तक जाकर प्रसिद्ध हुआ। गुलेर चित्रकारों (पं. सेऊ के वंशजों) के संग्रह से प्राप्त एक रेखांकन द्वारा ज्ञात होता है कि अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक गुलेर शैली का वर्चस्व अधिकांश पहाड़ी रियासतों में स्थापित हो चुका था।

चम्बा के राजा राजसिंह (1764–1794 ई.) चित्रकला के महान पोषक थे। उन्होनें नैनसुख के पुत्रों एवम् अन्य गुलेर के चित्रकारों को कांगड़ा से जुड़े अपने राज्य की सीमा के अन्तर्गत ''रिल्हू'' के उर्वर भू–भाग में जागीरें प्रदान की थी। नेरटी, रजोल, बजरेड़ और चड़ी ग्रामों में गुलेर के चित्रकार आ बसे थे। ये सभी चित्रकार चम्बा दरबार हेतु विशेषकर राजा राजसिंह और बाद में उनके उत्तराधिकारी जीतसिंह के आश्रय में चित्रांकन करते थें। परिणामस्वरूप ''रूक्मिणी–मंगल'', ''सुदामा चरित'', ''उषा–अनिरूद्ध'' जैसी भव्य चित्रावलियों का अंकन संभव हो पाया। कला के पोषक चम्बा के शासकों के अनेक शबीह चित्र चम्बा के भूरि सिंह संग्रहालय में संग्रहीत हैं।

इनमें राजा राजसिंह के दो चित्र उल्लेखनीय हैं। पहला चित्र पेरिस के ''लूव्र'' संग्रहालय में है जिसमें राजा राजसिंह अपनी पत्नी सहित राजनगर के उद्यान में हुक्कापान कर रहे हैं। दूसरा चित्र (संग्रह अज्ञात) राजा के भव्य दरबार को अभिव्यक्त करता है जिसमें राजा अपने दरबारियों सहित एक विशाल शामियाने के तले विराजमान हैं। राजा राज सिंह के शासनकाल में अनेक प्रतिभावान चित्रकारों ने अत्यन्त आकर्षक चित्रमालाएं चित्रित करके चम्बा दरबार में अपनी सेवाएं अर्पित की थीं। इस काल के चित्रों का अनुपम संग्रह चम्बा के भूरि सिंह संग्रहालय में दर्शनीय है।

यह आश्चर्य की बात है कि जब कांगड़ा कलम अपने

चरमोत्कर्ष पर पहुंच कर विभिन्न रजवाड़ों में आदरणीय स्थान प्राप्त कर चुकी थी, कांगड़ा का राजा घमण्ड चंद कलाओं के प्रति सर्वदा उदासीन था। उसका अधिकांश समय युद्ध की मुहिमों में अथवा राज्य के ही विस्तार में लगा रहा। घमण्ड चंद का पुत्र तेग चन्द अधिक समय तक सिंहासन पर न बैठ सका । अत: 1775 ई. में उसके पुत्र संसार चंद कटोच ने कांगड़ा राज्य की बागडोर संभाली। कालान्तर में जब राजा संसार चन्द के शक्ति सम्पन्न होने पर कांगड़ा के इस उन्नायक की ओर रूख किया।

राजा संसार चंद कटोच एक वीर योद्धा, कुशल राजनीतिज्ञ एवम् ललित कलाओं का महान पोषक था। उसके दरबार में प्राय: कवि, संगीतकार एवम् चित्रकार अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते और यथोचित सम्मान प्राप्त करते थे। टीरा-सुजानपुर में नर्वदेश्वर मन्दिर के उत्कृष्ट भित्ति-चित्र संसार चन्द के कला प्रेमी के साक्षी हैं। कटोच नायक संसार चंद जैसे शक्ति एवम् संसाधन सम्पन्न और गुणग्राहक शासक के अभ्युदय से अनेक उच्च कोटि के चितेरों राजाश्रय प्राप्त किया और कांगड़ा नरेश के संरक्षण में कला साधना करने लगे थे। फ्लत: ''गीतगोविन्द'', ''बारामासा'', ''रसिकप्रिया'', ''बिहारी सतसइ'' और ''रागमाला'' जैसे सुरूचिपूर्ण काव्यग्रंथों पर आधारित असंख्य अनुपम कलाकृतियों का सुरूचिपूर्ण अंकन हुआ। सुन्दर बेल-बूटे के हाशियों से सुसज्जित चित्र इस काल की विशेषता थी। गोढू, खुशाला, पुरूखु, फत्तु और सजनु जैसे चितेरे इस काल के प्रमुख कलावंत थे। राजा संसार चन्द चित्रों के संग्राहक भी थे। उच्च कोटी के पुराने उस्तादों के बनाए चित्रों का भी उसके पास विशाल संग्रह था।

उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में गोरखों के आक्रमण से पहाड़ी राज्यों को एक विपत्ति का सामना करना पड़ा। अमर सिंह थापा नामक गोरखा ने अनेक पहाड़ी राजाओं से मिलकर राजा संसार चंद से भंयकर युद्ध किया। अत: संसारचंद को सिक्खों के नायक महाराजा रणजीत सिंह से सहायता प्राप्त करनी पड़ी और अंतत: अमर सिंह थापा संधि करके वापस लौट गया। बदली राजनैतिक परिस्थितियों में कांगड़ा और अन्य राजाओं पर अब सिक्खों का अधिपत्य हो गया था। राजा संसार चंद की कीर्ति निस्तेज हो चुकी थी। बाद में उसके पुत्र अनिरूद्ध चंद को दुर्दिन देखने पड़े और गढ़वाल राज्य में शरण लेनी पड़ी। इसी काल में कांगड़ा कलम की एक शाखा गढ़वाल में प्रस्फुटित हुई। चेतु नामक कांगड़ा कलम का चितेरा गढ़वाल में चित्रांकन करता था। एक स्थानीय कवि मोला राम भी चित्रकला में निपुण था। उसके चित्रों के ऊपर स्वरचित काव्य लिखा हुआ मिलता है। कांगड़ा कलम के चित्रकारों के नए पोषक सिख सामन्त थे। चित्रकला पहाड़ी राज्यों की सीमा से बाहर निकलकर लाहौर और पटियाला आदि पंजाबी राज्यों के शासकों एवं धनपतियों की छत्रछाया में संवरने लगी थी। पहाड़ों में अभी भी कांगड़ा कलम की कीर्ति गुलेर के राजा भूप चंद और मण्डी के राजा ईश्वरी सेन के संरक्षण में बनी रही। नैनसुख के वंशधर गोकल, हरखु व छज्जु जीविकोपार्जन हेतु लाहौर के धनिकों एवं सिक्ख सामन्तों के आश्रित चित्रकार थे। गुलेर के कुछ चितेरे पटियाला के सिक्ख शासक महेन्द्र सिंह के अधीन चित्रांकन करते थे। राजा संसारचंद के दरबार के प्रसिद्ध चित्रकार पुरखु के पुत्रों ने जम्मू दरबार में आश्रय प्राप्त कर लिया था।

उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक यद्यपि कुछ चित्रकार अपने पैतृक व्यवसाय यानी चित्रांकन परम्परा का जैसे-तैसे निर्वाह कर रहे थे, परन्तु चित्रों में अब पहले जैसा दम-खम न रहा था। कांगड़द्या कलम का अवसान हो चुका था। रंगों में पहले की तरह उज्जवलता और कान्ति न थी और चित्रों की अभिव्यंजनाएं (कम्पोजिसन) कल्पनाओं के अभाव में अतिशय कृत्रिमतापूर्ण और निर्जीव थीं। परन्तु इन प्रभावहीन अनुकृतियों में कांगड़ा कलम का लालित्य एवम् गरिमा नहीं थीं। रंगों की वर्णिका और रेखाओं के आलेखन में चमत्कार एवम् गति नहीं रही थी। अब चित्रों में सस्ते बाजारू रंगों का अतिशय उपयोग होने लगा था। नील, सिंदूर और तेज हरे रंग आदि की शोख वर्णिका चित्रों में सौन्दर्य की अपेक्षा विद्रूपता उत्पन्न करने लगी। अधिकांश चित्रकार पूर्वजों के बनाए चित्रों के (ट्रेसिंग) और खाकों को छापकर प्रभावहीन अनुकृतियों तैयार कर निर्वाह कर रहे थे। उन्नीसवीं शताब्दी के अंत तक पंहुचते-पंहुचते कांगड़ा कलम लगभग समाप्तप्राय: हो चुकी थी। अर्की के राज परिवार के एक सदस्य मियां बंसत सिंह भी शौकिया तौर पर कांगड़ा शैली में चित्रांकन करते थे जिनका बनाया एक चित्र पचीसी खेलती महिलाएं चम्बा के भूरि सिंह संग्रहालय में संग्रहीत है।

**यहां से शुरू**

कांगड़ा कलम के चित्रों का विषय चाहे ''नायिका-भेद'' हो अथवा ''पौराणिक आख्यान - नारी-आकृतियों का चारू आलेखन इन चित्रों में बस देखते ही बनता है। अप्रितम सौन्दर्य से भरपूर नारी आकृतियों का लालित्यपूर्ण सरस अंकन कांगड़ा कलम की विशेषता है। कोमलांगी नायिकाएं हो अथवा कृष्ण की कोई गोपिका-धार्मिक ग्रंथों में वर्णित कोई देवी हो अथवा किसी राजा की रानी -कांगड़ा कलम की नारियों का सौन्दर्यपूर्ण मनोहर अंकन विमुग्ध कर देने

वाला है। नायिका भेद के शास्त्रीय ग्रंथों में विविध नायिकाओं के असंख्य भेदोंपभेदों का सजीव चित्रण करने में कांगड़ा के चितेरों का कोई सानी नहीं। इन नायिकाओं के सूक्ष्मत्तम मनोभावों को चमत्कारिक तूलिका द्वारा व्यक्त करने में चित्रकारों ने अपनी उर्वर कल्पनाशीलता का परिचय दिया है।

प्रेमातुर नायिकाओं के स्मित गौरवर्णी मुख पर लहराती बालों की लटें, उनके भ्रु-विलास, धनुषाकार भवें, गुलाबी रंगत लिए अधर, मीन सदृश नेत्र, उन्नत वक्षों पर झूलते मणि-मुक्ताहार, नितम्बों तक लहराती घनी केशराशि कदली वृक्ष समान स्निग्ध जंघांए, झीनी चोलियों से अंकुरित यौवन की चंचलता को प्रकट करते पीर पयोधर, हाथों में रचाई सुरूचिपूर्ण मेंहदी और आलता (महावर) से रंजित नूपुर सजे पांव-सचमुच कांगड़ा कलम की नायिकाओं को मूर्त रूप् देने में विलक्षण चितेरों ने अनुपम चातुर्य दिखलाया है। नायिकाओं के अप्रितम सौंदर्य से भरपूर मादक अंग-प्रत्यंग नख से शिख तक संपूर्ण सुडौल देहयष्टि - चित्र दर्शक को मंत्रमुग्ध कर पाने में सर्वदा सफल हैं।

''वहीत्कृष्ट है जो कि निरन्तर देखने पर भी अभिनव बना रहे और उससे अरूचि न हो।'' चित्राचार्य रामगोपाल विजयवर्गीय की उपरोक्त उचित कांग्रड़ा कलम के चित्रों पर अक्षरश: उचित प्रतीत होती है। कांगड़ा कलम के ''गीत गोविन्द'' विषयक लालित्यमय चित्र हों अथवा ''बिहारी सतसई'' के रूमानी प्रसंग - यहां के चित्रकारों ने चित्रांकन में कोई त्रुटि अथवा प्रमाद का आभास नहीं होता। मानवाकृतियों के अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण का सुन्दर आलेखन कांगड़ा कलम के चित्रों में हुआ है।

आकाश में आच्छादित जलद मेघ, सर्पाकार विद्युन्मालाएं, कुसुमित बेल-वुटे कमल दलों से सज्जित सरोवर और जलचरों एवम् वन्य जीवों का जीवन्त आलेखन कांगड़ा के चित्रों में दिखता है। घने वृक्षों के झुण्डों से घिरे हरित केलि-कुंजों में पल्लवों से सजे हुए प्रेमी युगलों के संकेत सिल रसिक चित्र-दर्शकों के हृदय को आह्लादित करते हैं। सजावटी बेल-बूटों से अलंकृत भवनों के वास्तु कांगड़ा शैली के चित्रों को शोभायमान बनाते हैं। चित्रों के गहरे नीले रंग के हाशियों को सोने चांदी के नानाविध रूपांकनों द्वारा सजाने में चित्रकारों ने प्र्याप्त श्रम व्यय किया है।

जैसे काव्य में ध्वनि, छंद, अलंकार और अर्थ आदि का महत्व है, उसी प्रकार कांगड़ा कलम में चित्रों के महत्वपूर्ण तत्वों का निर्वाह कल्पना के धनी चितेरों ने अद्भुत दक्षता से किया है। कांगड़ा के चित्रों में साधारण से साधारण विषय भी कलावन्तों की कल्पना से निकलकर ब्रश की नोक द्वारा कागज के धरातल पर जीवन्त हो उठा है। चित्र दर्शक को रस विभोर करते हुए अलौकिक आनन्द के जगत में ले जाना कांगड़ा कलम की अद्वितिय विशेषता है। संस्कृत काव्य हो अथवा हिन्दी की कविता-कांगड़ा के चितेरों ने रंग-रेखाओं द्वारा कवि के कन्धे से कंधा मिलाकर भावपूर्ण चित्रों की सृष्टि की है। चित्रों में शास्त्रीय परम्पराओं एवं काव्यानुशासन का ध्यान चित्रकारों ने विशेष रूप से रखा है। कहीं कहीं तो भाव व्यंजना में कांगड़ा के उस्ताद चित्रकारों ने वह चातुर्य दर्शाया है कि केशव और बिहारी जैसे महाकवि उनके आगे गौण प्रतीत होते हैं। संभवत: काव्य में निर्दिष्ट मूल भाव को समझने हेतु उन्हें विद्वान पण्डितों का सहयोग सुलभ था। तभी तो गीत गोविन्द, रसमंजरी, और नैषधचरित सरीखे संस्कृत के ग्रंथों पर आधारित चित्रों की श्रृंखलाएं चित्रित हो सकीं। रेखाओं द्वारा विभिन्न भावों को चेहरे पर ला पाना कांगड़ा कलम की एक विशेष खूबी रही है। नैनसुख सरीखे चित्रकार अपने चित्र के चरित्रों की मुखाकृतियों में बहुविध भावों को प्रकट करने में अतिशय चमत्कार करते हैं। रूमानी विषयों के अतिरिक्त ''रामायण'', ''भागवत'', ''दुर्गासप्तशती'' और ''हमीर हठ'' आदि विषयों के कांगड़ा शैली के चित्र विस्मित कर पाने में उतने ही समर्थ हैं जितने कि श्रृंगारिक चित्र। वास्तव में चितेरों ने अपने अद्भुत कला कौशल से कांगड़ा कलम को चित्रकला के उच्चतम शिखर पर पहुंचा दिया था। कांगड़ा घाटी से नि:सृत चित्र कला की अद्वितीय शैली ''कांगड़ा कलम'' के नाम से संसार के कला-इतिहास में आज भी प्रतिष्ठित है।

संपर्क : +91 9418052580


## ध्रुपद संस्थान 'गुरुकुल'

**भारतवर्ष में गुरु-शिष्य परंपरा पर आधारित एकमात्र संस्थान जहाँ नैसर्गिक वातावरण में रहने की भी सुविधा है ।**

परिचय

# पद्मश्री

# श्री विजय शर्मा

1. श्री विजय शर्मा को छोटे-छोटे चित्र बनाने की नैसर्गिक प्रतिभा से सम्पन्न मेधावी चित्रकार और कला-इतिहासकार के रूप में व्यापक रूप से जाना-माना जाता है। आपने हिमाचल प्रदेश में छोटे आकार की पहाड़ी चित्रकला की परंपराओं को पुनर्जीवित करने में अग्रणी भूमिका निभाई। कुशल चित्रकार होने के अलावा, आप अनुसंधानकर्ता और निर्बाध रूप से अत्यधिक सृजनशील लेखक भी हैं तथा आपने पहाड़ी चित्रकारी की कला में कई युवा कलाकारों को प्रशिक्षित किया है।

2. आपका जन्म 12 सितम्बर, 1962 को चम्बा, हिमाचल प्रदेश में हुआ। आपने चित्रकारी की कला, स्थानीय कला-अध्यापक, मिर्जा असगर बेग से सीखी। आपने हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय से इतिहास में स्नातकोत्तर की उपाधि प्राप्त की। आप वाराणसी और राजस्थान में कई पारंपरिक लघु चित्रकारों के संपर्क में आए। तथापि, आपके वास्तविक गुरु डॉ. विश्व चन्द्र ओहरी रहे, जो एक वरिष्ठ विद्वान, विख्यात कला-इतिहासकार और हिमाचल राज्य-संग्रहालय, शिमला के संस्थापक संग्रहपाल (क्यूरेटर) हैं।

3. आपने हिमाचल प्रदेश की कला और कलाकारों को बढ़ावा देने के लिए चम्बा में शिल्प-परिषद् की स्थापना की और इस एन जी ओ के अध्यक्ष के रूप में आप इसका नेतृत्व करते हैं। हिमाचल प्रदेश-सरकार ने आपको हिमाचल कला, संस्कृति और भाषा-अकादमी के शासी निकाय के सदस्य के रूप में मनोनीत किया। आप उत्तर क्षेत्र-संस्कृति (नॉर्थ जोन कल्चर सैंटर), पटियाला की कार्यक्रम-कार्यकारिणी समिति के भी सदस्य हैं। आपने चम्बा रुमाल कशीदाकारी-कढ़ाई के शिल्प का पुनरूद्धार करने के लिए दिल्ली शिल्प-परिषद् के मानद सलाहकार के रूप में कार्य किया है। धर्मशाला में स्थित एन जी ओ ''कांगड़ा आर्टस प्रमोशन सोसाइटी'' के संस्थापक सदस्य और प्राध्यापक के रूप में आप बीसियों विद्यार्थियों को प्रशिक्षण प्रदान करते रहे हैं।

4. आपने भारत और विदेशों की व्यापक रूप से यात्रा की और समूचे विश्व में भारतीय चित्रकलाओं के प्रमुख संग्रहों का अध्ययन किया है। आपने नेशनल क्राफ्ट्स म्यूजियम दिल्ली (1989), नेशनल म्यूजियम, सिंगापुर (1995) आर्थर एम. सैकलर गैलरी, वाशिंगटन डी सी (1999), ऑस्टेलंग मोंटाबौर, जर्मनी (2003), विक्टोरिया एंड एल्बर्ट म्यूजियम, लंदन (2003), एल डी म्यूजियम, अहमदाबाद (2004) और छत्रपति शिवाजी महाराज वस्तु-संग्रहालय, मुंबई (2010) आदि सहित कई स्थानों पर पहाड़ी चित्रकला की तकनीक पर व्याख्यानात्मक प्रदर्शन किए हैं।

5. अपने कलात्मक कौशल के अलावा, आप कला-समालोचक, कला-इतिहासकार, संपादक और लेखक भी हैं तथा आपने हिमाचल प्रदेश की पहाड़ी लघु चित्रकारी और अन्य कलाओं पर कई शोधपरक लेख और पुस्तकें लिखी हैं। आप उन विरले विद्वानों में से एक हैं जो शारदा और टॉकरी लिपियां पढ़ सकते हैं। आपने कई गूढ़ लिपि में लिखे महत्वपूर्ण ऐतिहासिक दस्तावेजों का अर्थ स्पष्ट किया है और उन्हे प्रकाशित किया है। आप भारतीय चित्रकला की विभिन्न शैलियों में चित्रकारी करते हैं, फिर भी, बसोहली और कांगड़ा स्कूल ऑव पहाड़ी पेंटिंग की शैली में आपको विशेष योग्यता हासिल है। आप हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत में भी निपुण हैं, जिससे आपको रागमाला पेंटिंग की रचना करने में मदद मिलती है। आपने सुप्रसिद्ध भारतीय कवि श्री गुलजार की कविताओं के आधार पर संगीत-रचना करने की भी कोशिश की है।

6. आपको कई सम्मानों और पुरस्कारों से विभूषित किया गया है, जिनमें आपकी रागमाला पेंटिंग्ज के लिए स्टेट अँवार्ड वस्त्र-मंत्रालय द्वारा वर्ष 1990 में प्रदत्त बसोहली पेंटिंग में मास्टर क्राफ्ट्समैन का राष्ट्रीय पुरस्कार ऑल इंडिया फाइन आर्टस एंड क्राफ्ट्स सोसाइटी द्वारा वर्ष 1997 में प्रदत्त ए आई एफ, सी एस पुरस्कार और मेघदूतम की संगीत-रचना के लिए मध्य प्रदेश सरकार द्वारा वर्ष 2011 में प्रदत्त राष्ट्रीय कालिदास पुरस्कार शामिल हैं। वर्ष 2013 में हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय ने डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान की है। ■

# कांगड़ा कलम की चित्रावली

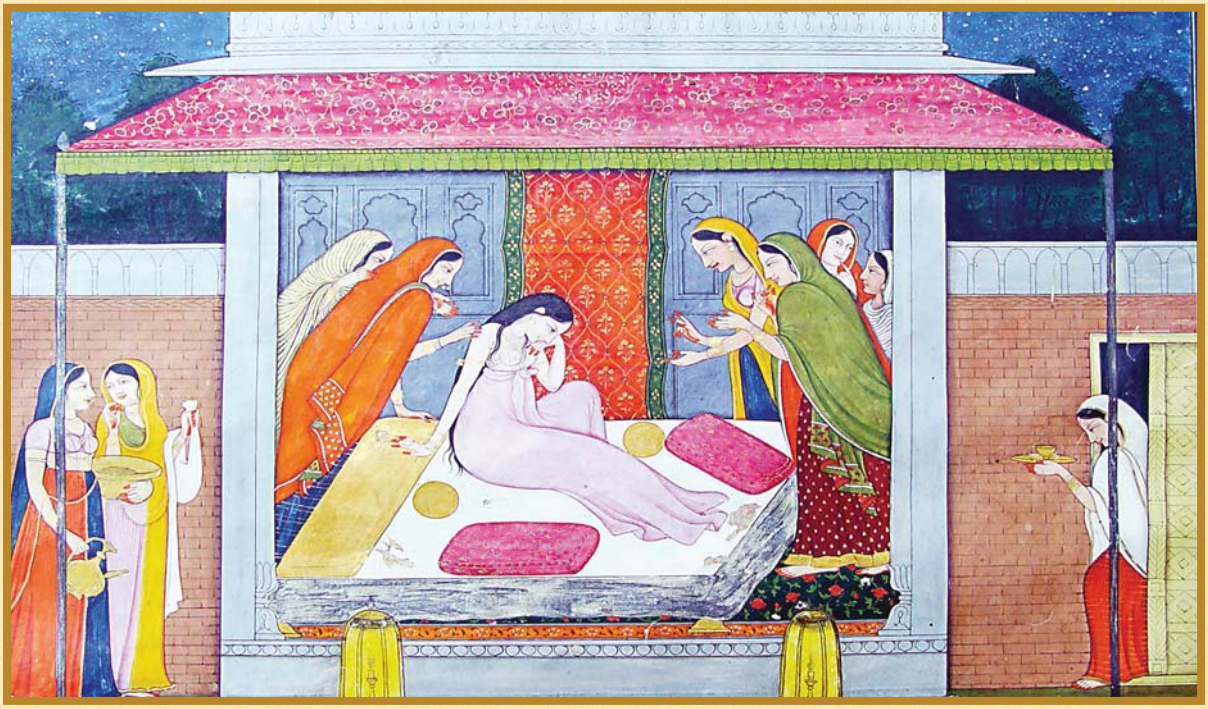

उषा का स्वप्न, उषा-अनिरुद्ध प्रेमाख्यान पर आधारित चित्र, कांगड़ा शैली

हरिवंश पुराण का एक प्रसंग, कांगड़ा शैली

काँगड़ा शैली

कांगड़ा के महाराजा संसार चंद चित्रों का रसास्वादन करते हुए

गीतगोविन्द पर आधारित
चित्र, कांगड़ा शैली

गुलेर के चित्रकार नैनसुख द्वारा
चित्रित जसरोटा के राजा
बलवंत सिंह की शबीह

चम्बा नरेश जीत सिंह अपनी
रानी के साथ, कांगड़ा शैली

टटकी धोयी धोवती,
बिहारी सतसई पर आधारित

नैनसुख का व्यक्तिचित्र

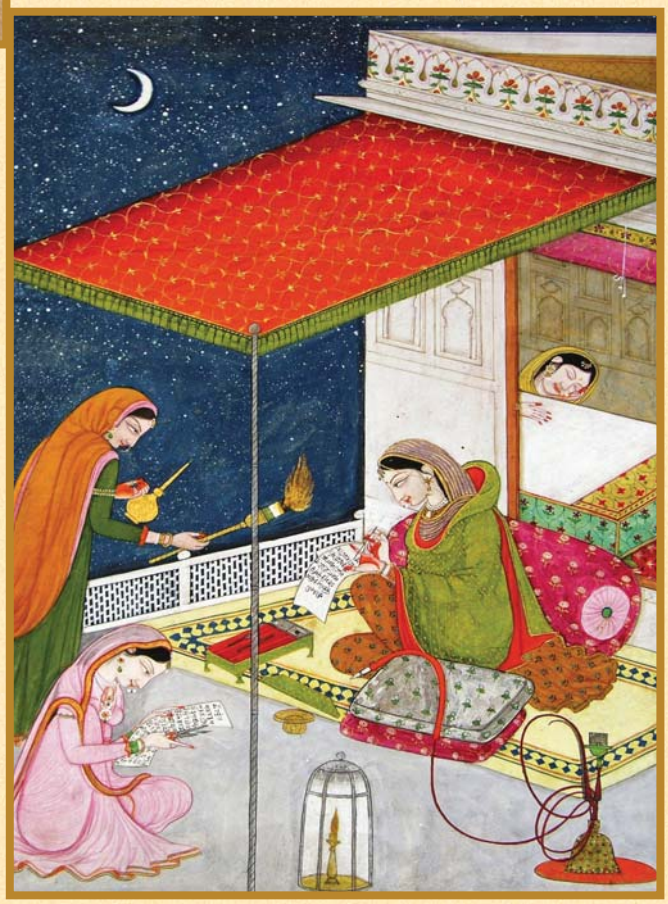

प्रोषितपतिका विरहिणी द्वारा पत्र लेखन, कांगड़ा शैली

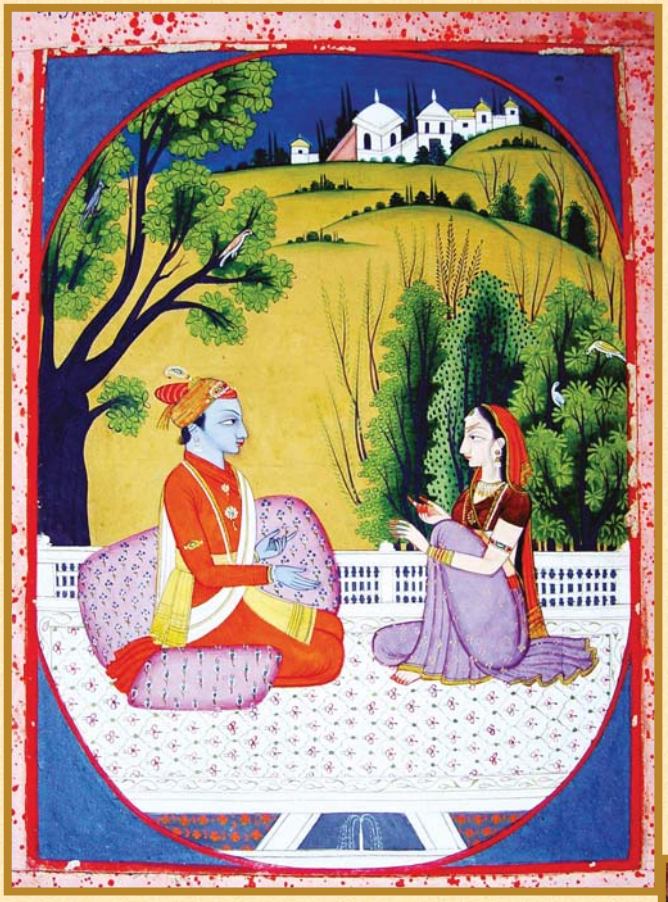

बारामासा पर आधारित
वैसाख का महीना, कांगड़ा शैली

भूषन भेद सवार सभै अंग,
कांगड़ा शैली

रसिकप्रिया पर आधारित चित्र
कांगड़ा शैली

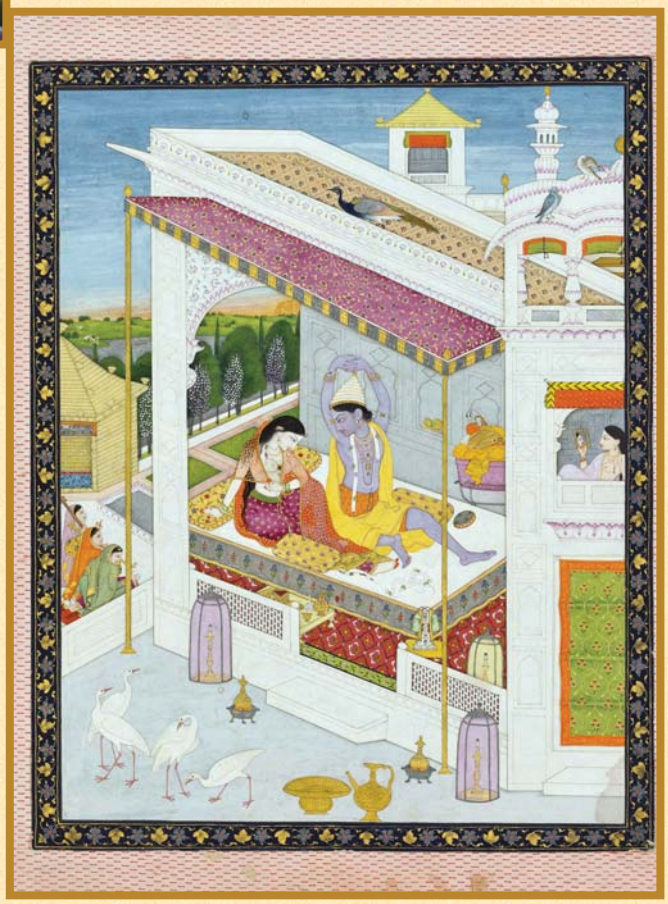

रसिकप्रिया पर आधारित चित्र
कांगड़ा शैली

राग कलिंगडा
कांगड़ा शैली

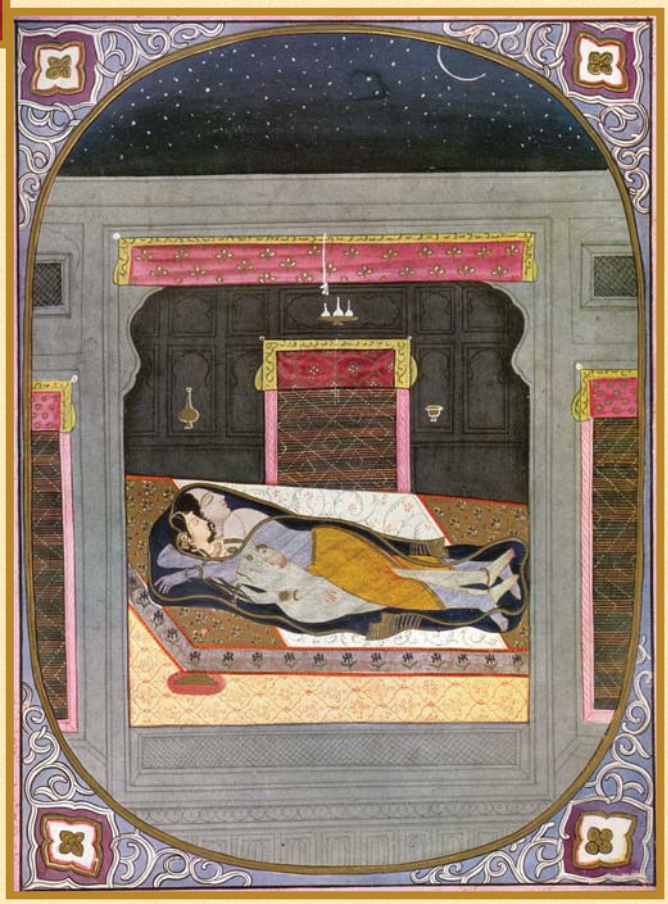

लपटानी अति प्रेम सौं
मतिराम के काव्य पर आधारित

**विरहिणी का उपचार, रसिकप्रिया पर आधारित चित्र, कांगड़ा शैली**

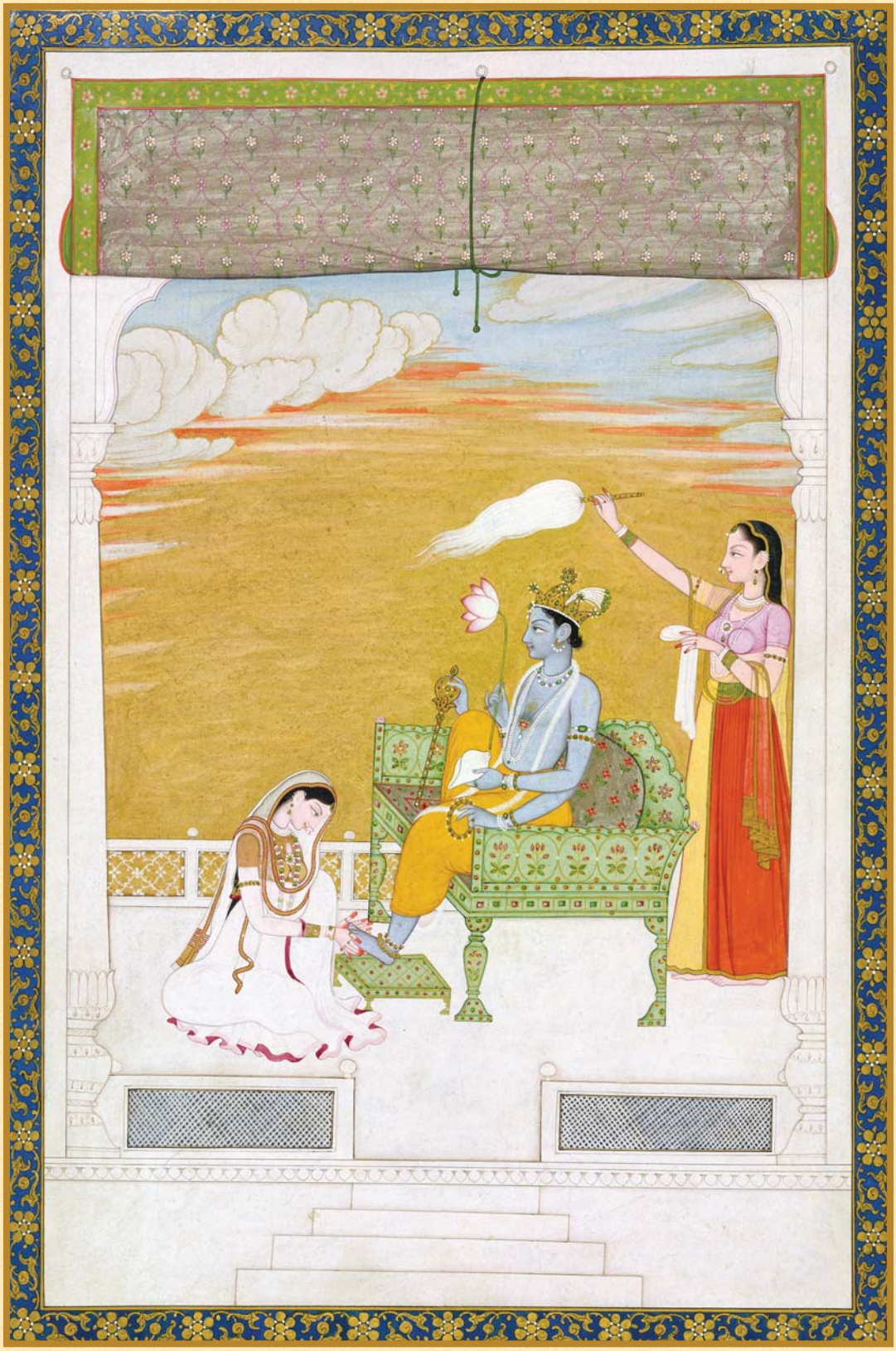

विष्णु के पांव प्रक्षालन करती हुई लक्ष्मी, कांगड़ा शैली

**सद्यः स्नाता, काँगड़ा शैली**

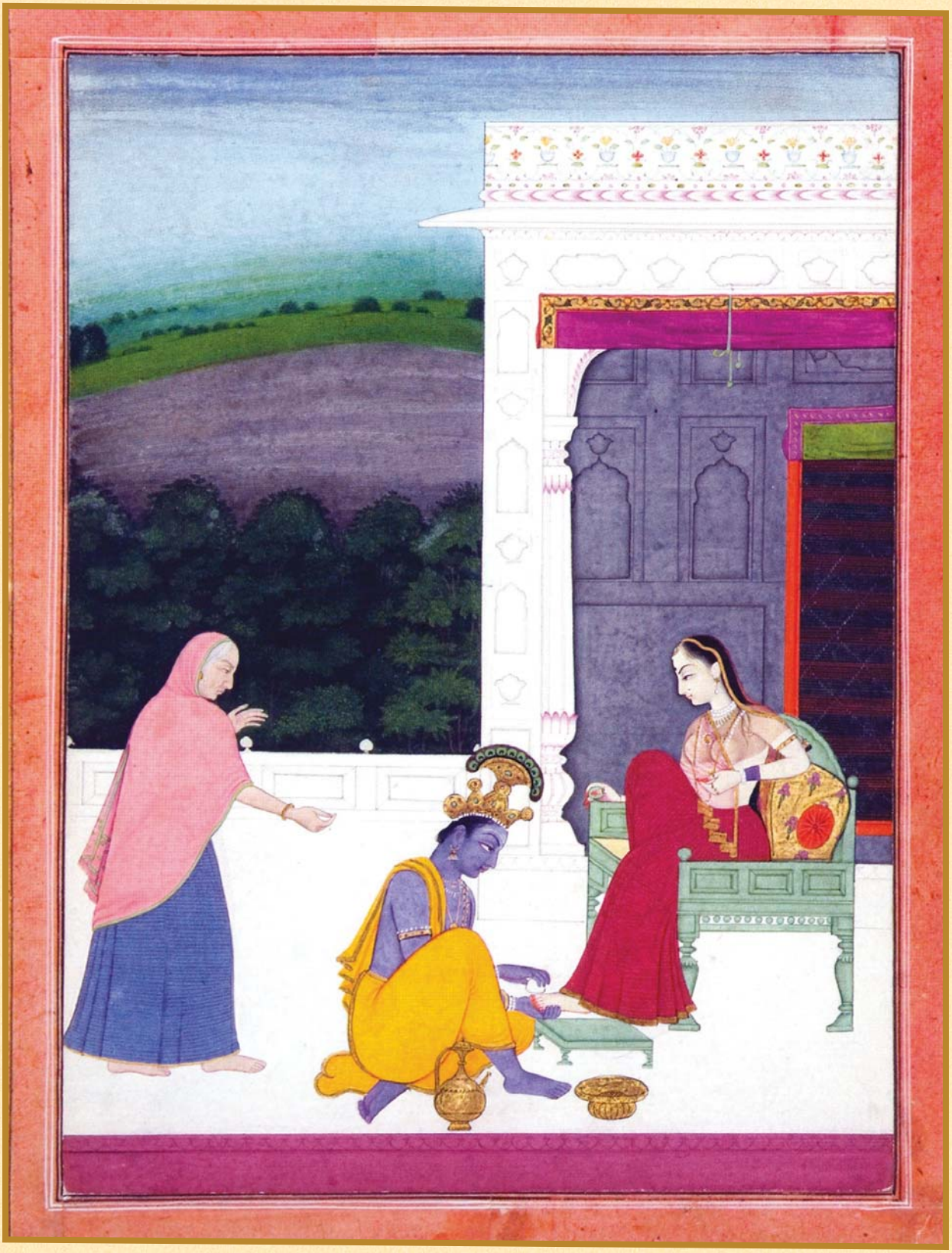

स्वधीनपतिका राधा, केशवदास की रसिकप्रिया पर आधारित

पुण्य-स्मरण

# मंगेशकर परिवार का स्वर प्रासाद!

माधवी नानल

दिनांक 6 फरवरी 2022 रविवार का दिन, बड़ा ही उदासी भरा एवं भारी दु:खमय ठहरा! देश का लाड़ला देवी स्वर 'भारत रत्न लता मंगेशकर की मृत्यु हुई और देश की सवा सौ करोड़ जनता दु:ख के महासागर में डूब गई। लता दीदी की आवाज विश्व के आठवें आश्चर्य के रूप में परिचित है तथा खासियत यही, कि दीदी को कोई भी पहचानता नहीं या लता मंगेशकर यह नाम न जानने वाला व्यक्ति पाया न जाएगा, यह देश का वैभव है।

छोटा-बड़ा, गरीब-अमीर, श्रमिक, मजदूर, देश का नागरिक, विदेशी नागरिक, इस प्रकार सभी जानते थे, ऐसा यह व्यक्तित्व! आवाज के इस जादू से देशभर में तीन पीढ़ियाँ भारित हुईं। संगीत क्षेत्र में से इस आवाज ने सभी-सभी संगीत प्रकारों पर अधिराज्य किया। ऐसा कुछ होते हुए भी बड़ा ही शालीन मधुर स्वभाव था, साथ ही सभी की सही पहचान होने वाली समझदार, मेहनती थीं लता दीदी। अब आज आप सभी से विदा होते अनंत में विलीन हो गईं, स्वर्गवास स्वीकार किया। अपने इस स्वर्गीय स्वर द्वारा सभी सभी देवी-देवताओं के लिए, उनकी पूजा हेतु साथ ले जाते स्वर्गस्थ हो गईं।

वसंत पंचमी के शुभ पर्व पर देवी सरस्वती का पूजन करते यह माँ सरस्वती इस शुभ समय पर हमसे विदा हुई हैं। रविवार होने से सभी के लिए छुट्टी का दिन था। तब सारा दिन देश भर की जनता टी.वी. के सामने ही बैठी हुई थी। अपनी आँखों और कानों को खुला रखते आपके बारे में प्रतिक्रियाओं को देखते और सुनते रहे सभी सभी। संध्या समय शासकीय इहतिमाम में मानवन्दना देते वर्णनातीत कलानिपुण दीदीजी का अग्निसंस्कार किया गया। तब सवा सौ करोड़ जनता ने साश्रुपूर्ण बिदाई दी। इस अवसर पर प्रधानमंत्री माननीय नरेन्द्र मोदी जी भी विशेष रूप से उपस्थित रहे और आपने श्रद्धांजली अर्पित की। लता दीदी जी ने सभी को आनंदित करने का सर्वोपरि सम्मान प्राप्त किया था। कोई भी व्यक्ति न होगा जिसे लता दीदी जी के स्वर पसंद न आये या आपकी आवाज से उसे पीड़ा पहुँची। दीदीजी का स्वर कहाँ-कहाँ तक पहुँचा? महल से लेकर झुग्गी झोंपड़ी तक, घर से लेकर अस्पताल तक, सभी ज्येष्ठ-श्रेष्ठ कलाकारों तक, विद्यालयों से लेकर महाविद्यालयों तक, सभी होटल, रेस्टॉरेंट्स, चाय के स्टॉल, ट्रक-बस-टैक्सी-ऑटो ड्राइव्हर्स, सभी मार्केट्स- बाजार वहाँ काम करने वाले तृतीय-चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी आदि सभी को आपने बड़ा ही आनंद दिया और उनका श्रम परिहार जो किया। दु:खी जनों के आँसुओं को ही आनंदभरा बना दिया, मरीजों की बीमारियों में दिलासा दिया, नन्हें बच्चों को सुलाने लोरियाँ गाईं तो वयस्कों का बुढ़ापा सुसह्रदय बना दिया। खैर! तो ऐसी आवाज मिट गई, काल के पर्दे के परे चली गई। केन्द्र सरकार ने दो दिनों की तो महाराष्ट्र सरकार ने तीन दिनों की समवेदना घोषित कर बड़े सम्मान से मुजरा करते इस स्वर सम्राज्ञी को बिदा किया।

अचरज की एक बात ऐसी, कि लता दीदी की सभी भाई-बहनें दीदी जैसी ही कर्तव्यवान हैं। एक ही परिवार के सभी सदस्य प्रतिभाशाली संगीत शिल्पकार हैं, यह इस अवसर पर मैं कहना चाहूँगी। 'कला समय' के संपादक महोदय के साथ चर्चा हुई, तो आपने समूचे इस परिवार को लेकर ही एक लेख लिखकर देने का आह्वान किया। इसीलिए आगे चलकर मंगेशकर परिसार के तथा उनके सांगीतिक कार्य कर्त्तव्य का परिचय करा देना चाहती हूँ। वैसे देखा जाए, तो किसी भी कला के बारे में तथा कलाकारों के संबंध में कुछ लिखना कठिन ही होता है। उनके सभी मौखिक पहलुओं का वर्णन करने समुचित शब्द रचना करना कभी कभार काफी मुश्किल हो जाता है। फिर भी मैं प्रयास कर रही हूँ। लता दीदी के देश की संपदा होने से और समूचा देश ही आपका चहेता होने से सभी भाषाओं में आपके बारे में काफी कुछ लिखा जा चुका है। फिर भी समूचे मंगेशकर परिवार का परिचय करा देने, मैं यह छोटा सा प्रयास करने जा रही हूँ। पाठकगण उसे स्वीकार करें!

इक्कीसवीं सदी में से संगीत क्षेत्र में से एक आश्चर्य के रूप

में ही मंगेशकर परिवार माने तीन पीढ़ियों में भरापूरा एक वलय ही जो है। पिता दीनानाथ जी मंगेशकर ने खुद को प्राप्त 'मास्टर' उपाधि सार्थक बनाया।

मास्टर दीनानाथ, भाई और उनकी पाँच बेटे-बेटियाँ कुल मानो 'सप्तस्वर'। आरोह वही और अवरोह भी वही। कितनी ही श्रुतियाँ सप्तस्वरों में से अपने आप निर्माण होती हैं, वैसा ही यह सप्तस्वरों का मंगेशकर परिवार। कितने ही स्वरों के, रंगों के, भावभावनाओं के निर्माता। इन सभी के गाते जा रहे कंठ ये मानो जादूभरी दुनिया ही जो लगती है। जो कुछ भी गाते हैं, वह चिरकालिक बन जाता है, स्वरों का मानो 'महाप्रासाद' ही!

'मंगेशकर' यह विषय ही बड़ा विशाल है। उसके अपने कितने ही पहलू जो हैं। इस विभिन्न पहलुओं पर होने वाला विचार परिपूर्ण रूप का हो, यही सोचा है। विशेष रूप से सोचना हो, तो 1. आवाज , 2. बुद्धिमत्ता, 3. नवीनता से लगन, 4. आत्मविश्वास, 5. एकलव्य वृत्ति ये सभी विशेष महत्वपूर्ण पहलू लगते हैं।

**आवाज :** सभी ओर, तीनों सप्तकों में सहज ही घूमने वाली, सुरीली, तेज आवाज की पैदाइशी देन दीनानाथ जी को मिली थी। रियाज करते, संगीत का शास्वोक्त ज्ञान प्राप्त करते, आवाज के लगाव के तंत्र को जहाँ से मिले वहाँ से प्राप्त करते अपनी बढ़िया आवाज आपने निभाई थी। माधुर्य भरी आवाज के संबंध में आप बड़े ही सख्त हुआ करते थे। आपका स्वर एवं गला बिल्कुल हुकूमत में हुआ करता था। इस आवाज ने आपको कभी भी धोखा नहीं दिया। सिर्फ एक बार, आवाज जब फूटी उस समय। उस पर 'चिल्का' नाम का अघोरी इलाज करते आवाज को काबू में रखा और उसने भी अंत तक दीनानाथ जी को धोखा दिया नहीं। दीनानाथ जी को भी भरोसा था ही।

ऐसी ही बढ़िया आवाज सभी मंगेशकर भाई-बहनें माने लताबाई, आशा ताई, उषा ताई, हृदयनाथ और मीना ताई इनकी हैं। बिल्कुल 'हुक्मी' कहा जाए ऐसी ही। इस आवाज को लेकर आप सभी सावधानी भी काफी बरतते हैं। ऐसा कहीं सुना नहीं, कि अपनी आवाज को लेकर आप सभी ने अघोरी प्रयोग किये अथवा आवाज पर काफी तनाव दिया है। आवाज सही अगर न हो, तो आप गाते नहीं हैं और कभी कभार रेकॉर्डिंग भी रद्द की हैं।

दिव्य आवाज के बल पर दीनानाथ जी का गायन ऊँचे स्तर पर पहुँचा हुआ था। नाट्यसंगीत के साथ ही महफिल का बैठक का गायन माने सुअवसर ही हुआ करता था, ऐसे नमूने लिखित रूप में कई जगह पाए जाते हैं। और सभी मंगेशकरों के बारे में भी गायन का निर्देश ऊँचे स्तर पर ही हुआ करता है। दीनानाथ जी से शास्त्रीय संगीत के संस्कार लगातार हो रहे थे तथा जल, स्थल और पत्थरों के पास भी गायन ही गायन सुना जाता था। उसके फलस्वरूप अलग से खास 'पढ़ाई' के रूप में न होते सुरीले स्वर तो निरंतर सुनाई दिया ही करते थे। उससे ये सभी सुरीले ही जो बन गए।

इनका गायन अनोखे ही दमसाँस का, स्वरों के ऊपर पूरा अधिकार होने वाला था। लताबाई, आशा बाई इनका गायन भी ऐसा ही हुक्मी है। कोई एक गीत एक बार सिखाया, तो इनका गला तुरन्त उसे उठा लेता है। बटन दबाते ही दिया जैसे ही लगता है, वैसे ही इनके गले को लेकर है। मन में उभरे, वही स्वर इनके गले से फूट पड़ता है। इन दोनों की आवाज में चाहे जैसा भाव दर्शन कराने की क्षमता है। हृदयनाथ जी की आवाज भारदस्त तथा कभी कभी मुलायम लगती है। उषा ताई की आवाज में ठसक महसूस होती है। इतने प्रकार की आवाज एक ही परिवार में पाई जाना बड़ा अनोखा सा लगता है।

**बुद्धिमत्ता :** दीनानाथ बड़े ही तेज गायक, अभिनेता के रूप में विख्यात थे। असीम बुद्धिमत्ता के बल शास्त्रीय संगीत के ज्ञानस्वर जहाँ कहीं से कानों पर आ पड़े, वैसे ही उन्हें कहीं भी बिखरने न देते, दिमाग की संदूक में उन्हें तालाबंद करते चले। बड़े ही साहस से आपके ऐसा करते, किसी को भी उसका पता न चलता था। मन की एकाग्रता के आधार पर ज्ञान का विशाल संचय आपने किया था। स्वर शास्त्र का आपका अध्ययन बड़ा गहरा था। कुछ प्रमेय, सिद्धान्त, अनुमान निश्चित किये थे। गायन का लय के साथ संबंध कैसा, इस पर आपने काफी सोच रखा था। वह आपके गायन में पाया जाता था। एक ही बार देखा-सुना, तो भली भाँति याद होना यह क्रिया तो अफलातून ही जो थी।

लताबाई, आशाबाई के बारे में यह क्रिया दिखाई देती है। संगीतकार कहा करते हैं, कि इन्हें गीत सिर्फ दो बार बाजे पर सुनाया, तो आप उसे समझ लेती हैं। बाजे पर फिर से रियाज करना जरूरी नहीं होता। तब जाकर रेकॉर्डिंग के समय वाद्यवृंद के साथ दो-चार बार गाने पर गीत याद हुआ करता। ध्वनि मुद्रण के समय रीटेक शायद ही कहीं होते हैं। इस कोटि की अनोखी सी बुद्धिमत्ता है।

हृदयनाथ मंगेशकर से स्वररचना की जाने में ऐसी बुद्धिमत्ता मासला पाया जाता है। गीतों में होने वाले भावों के अनुरूप स्वररचना बिल्कुल सही तैयार करना यह बुद्धिमत्ता से ही हो सकता है। मीना खडीकरी को स्वररचनाओं में भी ऐसा ही प्राविण्य दिखाई देता है।

**नूतनता की लगन :** बहुत सारे चमत्कृतिपूर्ण स्वरविलासों में डूबे रहना यह दीनानाथ जी का शौक ही कहा जाए। और कोई क्या कर रहे हैं, इसकी अपेक्षा मैं क्या नया या कुछ अलग सा कर सकता हूँ, इसी ओर हमेशा ध्यान हुआ करता। उस समय शायद बालगंधर्व और केशवराव भोसले इन दिग्गजों के साथ स्पर्द्धा में बने रहने आवश्यक नवीनता की खोज करने की आदत बन गई होगी।

नवीनता के अंतर्गत आवाज में उतार-चढ़ाव, स्वररचनाओं में बदलाव, लय बदलना, रंगमंच पर भव्य-दिव्य नेपथ्य सजाना, आलीशान कपड़े पर निभाना, सोना-मोतियों के मूल-सही गहने पहनना आदि कुछ करते नवीनता को निभाने का प्रयास लगातार हुआ करता था। उससे नाटक देखना और संगीत सुनना यह बड़ा ही कर्णप्रिय एवं नेत्रसुखद हुआ करता था।

दीनानाथ जी की नवीनता यह पहलू लताजी और हृदयनाथ इनके संगीत निर्देशन में विशेष रूप से पाया जाता है। और कहीं दूसरे संगीतकारों के गीत गाते समय गीत को दिया गया न्याय दिखाई देता है। फिर भी संगीत रचना में भी सही स्वर का प्रयोग करते अनपेक्षित सुरावट देने की खूबी नवीनता का दर्शन कराती है।

दीनानाथ जी द्वारा नाटकों में से गीतों की स्वररचना में परिवर्तन किया हुआ सुनते हुए श्रोताओं को आश्चर्य एवं अचंभा लगता था। उन गीतों का गायन करते हो रही आलापी तथा गायकी का ढंग कुछ अलगसा ही जो था। उसमें स्वरों का एवं बुद्धि का सही प्रयोग करने का कौशल जो पाया जाता है। यही गुण हृदयनाथ जी में उतरा, आपकी स्वररचनाओं का श्रवण करते पाया जाता है। जानते-बूझते ऐसे किये बदल को अपने गले में उतारते काफी परेशानी होती है, ऐसा बहुत सारे स्वीकार करते हैं। लताजी की स्वररचनाओं में लोकसंगीत की छटा एवं फिर से दीनानाथ जी जैसा ही स्वरों का किया सही प्रयोग आकर्षक और मन को लुभानेवाला होता है।

ऐसे ही कहीं जूझते-चलते दीनानाथ जी ने गंधर्व गायकी-के समान दीनानाथ गायकी का अलग सा बाज प्रस्थापित किया तो लतादीदी और आशाजी ने चित्र पर पार्श्वसंगीत में अपने ही अलग-अलग से दो 'लता घराना' और 'आशा घराना' प्रस्थापित किये। 50 वर्षों से भी दीर्घ अवधि में ये दोनों घराने अपनी अपनी अलग सी नींव पर खड़े हैं। पार्श्वगायन के पचासवें वर्ष इन दोनों ने उसके ऊपर सुवर्ण कलश चढ़ाते उन्हें छोड़कर और कोई इस जाति का 'घराना' निर्माण कर नहीं कर सकता इसे साबित कर दिखाया। दुर्भाग्य से यह सही है।

चित्रपट क्षेत्र में पार्श्वगायन पर इन दोनों का फैले प्रभाव को देखते अब तक और किसी को उन्हें चुनौती देने की हिम्मत न हुई। दीनानाथ अपना 'दीनानाथ बाज' लाये उस अवसर पर बालगंधर्व और केशवराव भौंसले भी कुछ काँप उठे थे, बेचैन हुए थे। मन में भय की आशंका उमड़ी थी, लेकिन कुछ समय में वे सम्हल गए। दीनानाथ नाविन्य की लगन से गायन में लगातार सुरों की क्रीड़ा करते चले, वैसी ही सुरों की क्रीड़ा हृदयनाथ के पास दिखाई देती है। विद्वता के अभाव में ऐसे खेल खेलना असंभव होता है। इस खेल में सुरों पर हुकूमत होनी चाहिए, जो इन बाप बेटे की है। सुरों का प्रासाद ही खड़ा किया देखना, श्रवण करना माने अपने मन को आनंद से भर देना ही जो है। हृदयनाथ की स्वर रचनाएँ समर्थ कंठ ही निभा सकते हैं। सुगम संगीत में गायकी पेश करने वाले हृदयनाथ ही जो पहले कलाकार हैं। वैसे तो सुगम संगीत यह इने गिने तीन मिनटों का खेल होता है। हृदयनाथ सुगम संगीत की महफिल पेश करते हैं, उस समय अगले पल कौन सी नई कल्पना उभर आएगी और गले में से उमड़ेगी इसका अनुमान नहीं किया जा सकता। दीनानाथ जी का भी ऐसा ही जो था।

मीना दीदी को लेकर बालगीतों की स्वर रचना में यह झलक पाई जाती है।

**आत्म विश्वास :** प्रयोगशील आपने अपने निष्कर्ष जब भी ठिठाई से रखता है, बोलता है और उसे अपने काम को लेकर भरोसा होता है, तब वह होता है आत्मविश्वास! दीनानाथ जी से लेकर लता, आशा, उषा, हृदयनाथ आदि सभी में आत्मविश्वास ऊँची मात्रा में है। अपनी कुछ अलग सी शैली निर्माण करना और उसे विकसित करते रंगमंच पर निर्भीक होते उसे पेश करना कहीं मुश्किल होता है। उस समय दीनानाथ की आयु 25-26 बरसों की थी। दो बड़ी चुनौतियों के सामने होते ऐसा साहस करना कुछ अनोखा ही! पर उनके लिए कोई चारा न था।

दीनानाथ जी के परिवार में शास्त्रीय संगीत का वायुमण्डल था। फिर भी स्वतंत्र गायकी-शैली निर्माण करना कहीं आसान नहीं। आज कुमार गंधर्व जी की गायकी को 'नई गायकी', 'नया घराना' ऐसा हम पहचानते हैं, उसके पीछे होने वाली आपकी साधना, तपस्या देखते हैं, तब उसका स्वरूप कैसा होता है तथा उसके पीछे कुमारजी के प्रयास कैसे थे, उन्हें वास्तव में देखा है। कुछ नहीं तो उससे दीनानाथजी की गायकी की, रियाज की और आपने निर्माण किये हुए घराने की कल्पना हम कर सकते हैं। ऐसा ही स्वतंत्र 'हृदय घराना' हृदयनाथ जी ने निर्माण किया है।

लताजी का आत्मविश्वास इससे कुछ अलग सा कहा जा

सकता है। अपने पहले मराठी गीत से आरंभ करते हुए आज विभिन्न भाषाओं में लगभग 30 हजार गीतों का गायन करने का विश्वविक्रम करने की 'एकमात्र' के रूप में ख्याति प्राप्त करने वाली ये विदुषी 'जो भी कुछ सामने आए, मैं गाकर दिखाऊँगी' इस आत्मविश्वास से गाया करती हैं, वह कल्पना करने के परे है। इसमें होने वाली निर्भयता का बड़ा महत्व! सभी भारतीय भाषाओं के परे चलते हुए आप कहती हैं, ''और दूसरे देशों के गीतों का भी मैं गायन करूँगी।'' ऐसा सुना है, कि आप जिस किसी विदेश में कार्यक्रम पेश करती हैं, उस देश की भाषा में एक गीत का गायन करती हैं और भाषाओं के गीतों के रेकॉर्ड्स खरीद कर, जब फुर्सत हो तब उन्हें सुनती रहती हैं। बड़ी ही जिद से ऐसे सफलता पाने का आत्मविश्वास कैसा अनोखा सा ही जो है।

आशा दीदी का आत्मविश्वास कुछ अलग ढंग में दिखाई देता है। उम्र की 62वें वर्ष की अवस्था में भी ''क्या आप बालगीत गाएँगी?'' ऐसा पूछने पर आप स्वीकार करेंगी। गीत-गायन को सफल बनाने का आत्मविश्वास आपको सफलता की ओर आगे ले जाता है। ''पाश्चात्य शैली के गीतों का और कोई तो गायन करता नहीं? मैं तो गाकर ही बताऊँगी, कैसा हो नहीं पाता?'' ऐसी महत्वाकांक्षा के बल पर वह साबित कर दिखाया है। इनेगिने एक ही दिन 2-3 रेकॉर्डिंग करने की ताकत आप दोनों में है। वैसा करने में आपका आत्मविश्वास ही काम आता होगा। इसमें गुणवत्ता की ओर काँटे को झुकाये रखने पर दोनों गौर करती हैं।

**एकलव्य वृत्ति :** इने गिने ही लोग होते हैं, जिन्हें खास कुछ सिखाना जरूरी होता हो? जहाँ कहीं से भी ज्ञान ग्रहण करते, उसका अपनी बुद्धि के अनुरूप प्रयोग करने वाले बुद्धिमान कहीं बिरला ही। खासकर दीनानाथ जी के बारे में ऐसा पाया जाता है। दीनानाथ जी ने संगीत की शिक्षा मूलत: पाई थी, फिर भी आपकी नजर सभी ओर दौड़ा करती थी। कंपनी में गायन की तालीम हुआ करती। आगे चलकर वझेबुवा से शाखोक्त तालीम पाई ही। फिर भी और किसी का गायन सुनते समय, नाटक देखते समय, गपशप के दौरान, इतने सारे का खयाल करते, आगे चलकर उससे लाभ उठाना, यह हमेशा जारी ही रहा करता। सामने वालों को आह्वान-प्रतिआह्वान देते, 'देखिए! मेरे पास ऐसा है, मैं यह कर बताऊँ!' ऐसा कहते गायन कर दिखाया करते थे। इससे दिखाई देता है कि सही तालीम के अतिरिक्त दीनानाथ जी के पास संगीत का ज्ञान भण्डार जो था। यह इतना सारा आपने कब, कहाँ और किससे पाया होगा? हरगिज दूसरे-तीसरे से बिल्कुल नहीं। 'एकलव्य वृत्ति से' यही है उसका उत्तर। रंगमंच पर का स्वर विलास तथा गीत पेश करने की आकर्षक शैली, यही दिखाती है, कि दीनानाथ जी ने प्राप्त किये हुए ज्ञान पर बड़ी बारीकी से सोचा था। चिंतन-मनन यह बड़ा ही महत्वपूर्ण लगता है।

हम सभी भारतीयों में टिप्पणी करना, किसी भली-बुरी घटना या प्रसंग को देखते वह लिख लेना, समुचित संकलन करना, उसे सही जगह सही तरीके से प्रयोग करना ऐसी प्रवृत्तियाँ लगभग हैं ही नहीं। कुछ व्यक्ति इसमें अपवाद रूप होते हैं, उनमें मास्टर दीनानाथ की गणना होती है। दीनानाथ जी के अपनी तालीम पाने के बरस तथा अपने ही बल पर, मेहनत करते कमाई की हुई गायन विद्या के बरस, इन्हें देखते-ये दूसरे बरस अधिक पाये जाते हैं। दीनानाथ इस संगीत यात्रा के दौरान एकलव्य के मार्ग पर ही आगे बढ़े। इसका कारण यही, कि आपने अपनी कुछ अच्छी सी आदतें बनाई थी। अगर कुछ सुना और वह अपने काम का है, ऐसा पाया, तो समय पर ही उसकी टिप्पणी बनाते चले। नर्तक का अभिनय करना था, तो सीखे हुए कत्थक नृत्य के गायन का 'ठुमरी ढंग' लाने पर बन गया रसायन कुछ दिव्य-अद्‌भुत सा ही जो बना। अनुकरण न होते अपना-अपना स्वतंत्र गायन तैयार हुआ। नकल उतारने के झंझट में आप कभी फँसे ही नहीं। आपके बारे में और एक बात दिखाई देती है, वह ऐसी कि, आपने घंटों तक लगातर रियाज कभी नहीं किया। आवाज फूटी, तब जो कुछ चिल्लामा किया, उतना ही अघोरी रियाज, पर आगे चलकर उस्तादों के समान 10-12 घंटे रियाज नहीं किया। फिर भी दिमाग में लगातार चौबीसों घंटे गायन ही गायन था। यही गायन मंच पर या महफिल में गले से झरता था।

लता दीदी को लेकर भी ऐसा ही सोचना पड़ता है। दिनभर में कुछ ही अवधि रियाज किये बगैर आपका दिनक्रम शुरु न होता था। फिर भी घंटों तक रियाज करती रही, ऐसा कहीं सुना नहीं। आशा दीदी भी हररोज सबेरे रियाज करती हैं। इन पाँचों भई बहनों के बारे में कहा जाए, तो दिमाग में निरंतर गायन ही जो होता है। संगीत यही एकमात्र होने से उनकी दुनिया ही संगीत की बनी है। बेसुरा, बेताल या गाना नापसंद हुआ, दूसरों से कुछ गैर सुनना पड़ा, ऐसा कभी न हुआ।

दीनानाथ जी की विशेषता दिखाने वाला और एक पहलू माने ज्वलंत देशाभिमान। स्वातंत्र्यवीर सावरकर के साथ रहते उन दिनों आपने किया हुआ कार्य एवं लता दीदी का भारत-चीन युद्ध के अवसर पर गाया गीत 'ए मेरे वतन के लोगों' यह भी देशाभिमान ही दिखाते हैं। लता दीदी कहा करती थीं, 'मुझे फिर से भारत में ही पैदा

होना और संगीत की ही भूमिका निभाना पसंद होगा।'– अब यह तो केवल स्वाभिमानवश ही। समाजकार्य में रुचि होने से आपने पिताजी की स्मृति में 'दीनानाथ मंगेशकर प्रतिष्ठान' स्थापित किया है। संगीत, नाटक, साहित्य, रोजगार संबंधी काम आदि क्षेत्रों में प्रतिवर्ष पुरस्कार दिये जा रहे हैं।

ऐसे हैं ये सभी मंगेशकर। 'बाप से बेटा सवाई' जो कहा जाता है, वह इनके बारे में बिल्कुल सही लगता है। दीनानाथ जी तो महान थे ही, फिर भी आपके रोपे हुए पौधे को इन पाँच भाई बहनों ने कल्पवृक्ष ही बना दिया। पिताजी के अच्छे अनुभवों के अनुसार आचरण किया, तो कड़वे अनुभवों को किसी तरह दूर ही रखा। अपने जीवन में वैसा कुछ अनुभव न हो, इस हेतु वे आपकी प्रतिष्ठा को काफी कुछ निभाते थे।

आज मंगेशकर परिवार अपने कर्तव्य के बल देश में ऊँचे पद पर पहुँचा है। आज वह अकेले अपने लिए बने नहीं, तो भारत देश के मंगेशकर बन गए हैं। यह परिवार इस देश की संपदा है। आशा दीदी भोंसले और मीना खडीकर के उपनाम अलग हों, तो भी इस देश के 'मंगेशकरों' में उनका भी हिस्सा बड़ा भारी है। उनके पुरुषार्थ में देश का एवं सवा सौ करोड़ जनता का पूरा विश्वास है। इस विश्वास का किसी भी समय भंग न होने का भान उन्होंने हमेशा निभाया है। इसी विश्वास तथा पुरुषार्थ के बल पर ही दीनानाथ जी ने पुरस्कार पाये थे। पूजनीय शंकराचार्य जी से पिताजी दीनानाथ और लता दीदी दोनों को शुभाशीर्वाद प्राप्त हुए हैं बड़ी ही शालीन एवं सरस्वती समान दीदी के घर में, आपके सहवास में रहने कितने ही रसिक, विद्यार्थी उत्सुक होते थे।

आज अब समूचे मंगेशकर भाई बहनों ने उम्र के 80 वर्ष पूरे किये हैं। इस पूरी सदी को उन्होंने संगीतमय बना दिया है, इससे तो सभी सभी आनंदित हुए हैं।

आइए! अब हम हर एक मंगेशकर ने खुद ही मेहनत करते निर्माण किया हुआ अपना कर्तत्व देखें। विरासत मिली हो, तो भी, उसका सुवर्ण बना देते अपनी पहचान खुद को ही बनानी होती है।

**'भारत रत्न' लता मंगेशकर :** पिताजी दीनानाथ इनसे सीधे तालीम मिली, वह अकेली दीदी को। दीनानाथ जी ने अपने स्वरों की अमूल्य धरोहर, तानपुरा और चीजों की बही दीदी को सौंपते अंतिम स्वरूप महत्वपूर्ण सुझाव दिया। आपने कहा, तुम्हारे गले में गंधार है, उसको निभाना। मेरे भरे पूरे आशीष तथा श्री मंगेश की कृपा तुम्हारे पीछे बनी रहेगी। इसी संपदा के बल दीदी ने बड़ी मेहनत से अपना रियाज जारी रखा। मनन, चिंतन एवं नियम से अद्यतन रहने की आदत बनाते, संगीत की ओर देखने की वृत्ति में सीधे परिवर्तन लाया। कितने सारे लोगों से आप कुछ न कुछ सीख सकीं और चिंतन–मनन करते आपने उसमें वृद्धि की। कंठ में बने रहे गंधार को प्राणपण से निभाया। हर एक स्वर के उच्चारण की, कहने की भाषा अलग–अलग सी होती, इसका भान रखते आप गाया करती थीं। एक से बढ़कर एक विचार, उच्चार, आचार इन संस्कारों के प्रवाह में से गुजरते दीदी ने मधुकरी वृत्ति से जो भी कुछ अच्छा सुना, पढ़ा, देखा उनमें से हर एक को आत्मसात् करते प्रस्तुत करती चलीं। शब्दों में छिपे भावों का आप बड़ी उत्कटता से उपभोग किया करतीं और तब जाकर प्रगट किया करतीं। वह आपकी अपनी मेहनत थी। उर्दू और हिंदी भाषाएँ सीख लीं। श्वास के ऊपर प्रभुत्व पाया। संतरचनाओं को करने संत साहित्य का अध्ययन किया। ग्रंथ पठन की रुचि बढ़ाई। देश प्रेम हेतु स्व. सावरकर का अध्ययन किया। जवानों के हित में वीररस का अध्ययन और निर्माण करते, उनके मन में ऊर्जा निर्माण की।

**आशा भोंसले :** आपका व्यक्तित्व लता दीदी जैसा ही है। बहुत सारे प्रयास करते संगीत विश्व में अपनी स्वतंत्र आवाज एवं पहचान निर्माण करते, बड़ी ही मजबूती से आप खड़ी रहीं। पिताजी दीनानाथ के संगीत नाटकों में से नाट्य गीतों की गायनशैली का अध्ययन करते उस बड़ी ही कठिन गायकी को अपने गले में उतारते कितने ही नाट्य गीतों का गायन करते उन्हें ध्वनिमुद्रित किया। उससे तनायत का भारी मात्रा में रियाज हुआ। आवाज के विभिन्न पहलू, विभिन्न गुण एवं अलग–अलग ढंग के तथा कथावस्तुओं के गीतों का गायन करते अपनी आवाज का अलग–अलग ढंग से प्रयोग किया। लता दीदी और आशा दीदी इन दोनों के गायन की पट्टी ऊपरी होकर आपने आवाज के विभिन्न उतार चढ़ावों को अलग–अलग भाव प्रदर्शन हेतु प्रयासपूर्वक प्रयोग किया और ऐसे गायन से सभी को चकित किया। स्वभाव से बड़ी ही खिलाड़ी होने से गाते समय कुछ वाक्यों का सिर्फ उच्चारण करत रंग भरने की शैली को आपने आत्मसात किया है। यह आपकी अनोखी सी विशेषता मानी जाए।

**उषा मंगेशकर :** पार्श्व गायन के साथ ही एक उत्तम चित्रकर्ती– के

रूप में शोहरत पाने वाली उषा दी दी मराठी लावणी गायन में अपनी अलग सी प्रतिभा प्रस्तुत करती हैं। लता दीदी और आशा भोंसले इनके महाप्रचंड सुरीले आधार वटवृक्ष की छाया में उषा दीदी ने अपनी गायकी को सजाया। निर्माता के रूप में भी आप परिचित हैं। अपनी घर गृहस्थी को निभाते और सभी को अपनाने वाले व्यक्तित्व के रूप में आप परिचित हैं।

पोर्टेट का आरेखन करने वाली उषा दीदी ने पिताजी दीनानाथ का खींचा हुआ पोर्टेट आपकी जन्मशती के वर्ष सभी ओर मुद्रित हुआ और मशहूर बन गया था। लावणी के साथ ही लोकगीत और भक्तिगीत इनमें आपकी आवाज के अलग-अलग पहलू दिखाई देते हैं तथा उनका आपने किया हुआ प्रयोग भी पाया जाता है। हरएक लोकगीत का बाज और नखरा इन्हें आप अपनी आवाज में सही ढंग से प्रस्तुत किया करतीं। ऐसा कौशल आपने बड़ी ही मेहनत से पाया है।

**मीना मंगेशकर-खडीकर :** पतली एवं बडी ही सुंदर आवाज होने वाली मीना दीदी वैसे तो और भाई बहनों की अपेक्षा संगीत विश्व में काफी कुछ कम सफर करती चलीं। फिर भी कुछ मराठी चित्रपटों को और गीतों को संगीतबद्ध किया और वे गीत मशहूर बन गये। मराठी बाल गीतों को कुछ अलग सा ही परिमाण दिलाया। घर गृहस्थी, पति, बाल बच्चे इनके बीच ही आप बहुत रम गईं। इन सभी भाई-बहनों ने स्व. सावरकर के गीत का गायन करते समय उसमें से कुछ पंक्तियों का स्वतंत्र गायन किया है।

**पं. हृदयनाथ मंगेशकर :** बिल्कुल छोटी उम्र में ही पितृछत्र से वंचित हुए हृदयनाथ जी को अपने पिताजी जैसे ही आत्मशोध करने के आशीर्वाद मानो मिले हैं। चार बहनों का सबसे छोटा भाई होने से बहनों ने बहुत कुछ प्यार किया, माया की। बड़े बुद्धिमान, मनस्वी गायक, संगीतकार, वाचन-पठन एवं संत साहित्य में रुचि होने वाले हैं हैं। गायन तो सुरीला है ही, किन्तु विचारों में शास्त्रीय संगीत को बाँध लेने वाले शब्द-स्वरों की असाधारण प्रतिभा का प्रसाद ही मानो आपको प्राप्त हुआ है तथा उसका आप सौ प्रतिशत प्रयोग करते दिखाई देते हैं। सुगम संगीत की होने वाली आपकी महफिल मानो शास्त्रीय संगीत की ही जो लगती है। आपके गायन में निरंतर नवीनता की खोज होती-चलती दिखाई देती है। स्वरों पर असाधारण सा प्रभुत्व तथा उसके फलस्वरूप अलौकिक प्रतिभा के दर्शन होते रहते हैं। अभी हाल में आपकी प्रतिभा को सलाम करते 'पंडित' यह उपाधि खास समारोह में आपको प्रदान की गई।

हृदयनाथ जी ने सुगम संगीत के क्षेत्र में 'हृदय-घराना' निर्माण किया है। सुगम संगीत के अंतर्गत रचना निर्माण में आपके विचार कुछ खास ही जो हैं और वे विचार 'आपके' इस रूप में ही पाये जाते हैं। इसके पहले शब्दों का सुराग आपकी शैली से और किसी ने निकाला नहीं। उस दृष्टि से नये नये निकषों का प्रयोग करते स्वररचना करने की नयी पद्धति आपने जो आरंभ की, वह कुछ खास ही दर्शन कराने वाली तथा सीधे जाकर कलेजे से भिड़ने वाली है। आपकी स्वरों की एवं शब्दवर्षा की ताकत में एक साक्षात्कार सा पाया जाता है। उस विशिष्ट शब्द का अर्थ सुरों में से साकार हुआ दिखाई देता है, तब जगत् को मानो हम भूल ही जो जाते हैं।

हृदयनाथ सुगम संगीत की अपनी महफिल पेश करते हैं, उस समय विचार एवं आचार शास्त्रीय संगीत के अनुरूप ही होता है। उसके फलस्वरूप उसका अविकल सा प्रभाव दिखाई देता है। वह भी आपके उत्स्फूर्त आविष्कार द्वारा, सरल विचारों से। यहाँ सांगीतिक विचारों की प्रगल्भता दिखाई देती है और यही प्रगल्भता महफिल का संतुलन भी निभाती चलती है। आपके बहुत सारे सुगम गीत (भावगीत) आपने अपने बचपन में सुनी हुई शास्त्रीय संगीत में से निर्माण हुई, ऐसा आप कहा करते हैं। इसी से पिताजी से प्राप्त पैदाइशी गुण तथा आपका अभ्यास / रियाज दिखाई देता है। अपने खुद के रियाज से आपने उन्हें विकसित किया है। (वे प्रगत होते ही चलते हैं)। बिल्कुल साधारण से शब्द के गर्भित आशय को स्वरों में निबद्ध किया जाता है। यह सबकुछ इतनी सरलता से होता है, कि स्वररचना में होने वाली दुर्बोधता, कठिनता हल्के-हल्के घुल जाता है और वह सबकुछ सुगम-सरल-स्वाभाविक लगता है। आपकी महफिल सिर्फ तबला और हार्मोनियम के साथ होती है। आजकल जैसा भरापूरा वाद्यवृंद नहीं होता। स्वरों पर और विचारों पर इस कोटी का प्रभुत्व है, कि ये दो ही वाद्य सारी महफिल को जीत लेते हैं। मनस्वी वृत्ति से दिल लगाकर हो रहा आपके गायन का श्रवण

करना, यह एक स्वर्ग सुख की अनुभूति ही मानो होती है। लतादीदी और आशा दीदी प्यार से कहा करतीं, ''हृदयनाथ के गीतों का गायन करना, यह एक दिव्य अनुभूति ही होती है, एक परीक्षा ही जो होती है, क्योंकि वे सुनने हेतु जितनी सुगम, उतनी ही गायन करने कठिन होती है।''

इस प्रकार ये सभी भाई बहनें संगीत की दुनिया में खुद ही कहीं खोई हुईं तथा परमात्मा ने आनंद निर्माण हेतु ही उन्हें निर्माण किया है, ऐसा कहना चाहिए। इन सभी के समक्ष ध्येय-उदृष्टि तो था ही। ध्येय-उदृष्टि तो था ही। ध्येय साधना के लिए अंत:प्रेरणा यह निश्चित रूप में महत्वपूर्ण होती है और उसे पराकोटि के प्रयासों का साथ अगर मिला नहीं, तो सफलता के शिखर तक पहुँचना असंभव सा हो जाता है। फिर भी इन भाई बहनों ने आपस में एक-दूसरे का बड़ा ही अच्छा साथ दिया तथा इस क्षेत्र में जो भी कोई रोड़े-अटकावे या इस क्षेत्र की यात्रा में आने वाली बाधाएँ इन सभी को दूर हटाते मार्ग को सुगम-सुलभ बनाने का प्रयास किया, यही महसूस होता चलता है। सभी ने संगीत क्षेत्र चुना और वीर अर्जुन के समान मानो मछली की आँख पर ही नजर लगाई थी। लक्ष्य के ऊपर ही ध्यान केन्द्रित किया था। उसी के फलस्वरूप यह उत्तुंग सफलता प्राप्त हुई ऐसा ही कहा जाए।

समूचे मंगेशकर परिवार ने रोड़े-अटकावे पार करते ज्ञान-संचय किया है। यह किताबी ज्ञान नहीं, इसका खयाल करना चाहिए। बरसों तक विद्यार्थी दशा का स्वीकार करते नया-नया कुछ सीखते चलने का निदिध्यास था, तभी जाकर वे अपने अपने कौशल के आधार पर खिलते ही चले।

अब-आज ये सभी भई बहनें निवृत्त जीवन जी रही हैं। उम्र 80 बरसों के लगभग है। उससे एक दूसरे को सँभाल रहे हैं। ऐसे में ही दीदी का ऐसे हम सभी से हमेशा के लिए विदा होना, बड़ा ही दु:खदायी है। वैसे तो आते समय अकेला आया हुआ कोई भी अपने कार्य की समाप्ति पर अगली यात्रा पर अकेले ही मार्गस्थ होता है। आपका स्वर्गस्थ होना सभी बड़ी खुशी से स्वीकार करते आपकी अगली यात्रा सुखदायी हो ऐसी ही मनोकामना करनी है।

मूल मराठी से हिन्दी में
अनुवाद- बालकृष्ण वा. भागवत
401 उपक्रम सोसायटी, प्लॉट नं. 45, राजयोग मार्ग, गोराई-2
बोखिली (प.), मुंबई 400091, मो. : 9820162924
दिनांक 21 फरवरी 202


# पत्रिका ही नहीं, एक रचनात्मक अनुष्ठान

## पत्रिका मुफ्त मांग कर, कृपया हमारे अनुष्ठान को आघात न पहुँचाएं

**'कला समय'** के सदस्य बनें- ❍ पत्रिका की वार्षिक/द्वैवार्षिक /आजीवन सदस्यता ग्रहण करें। सदस्यता शुल्क मनीआर्डर, ड्राफ्ट, ऑनलाइन अथवा व्यक्तिगत रूप से भुगतान किया जा सकता है।

**'कला समय' की एजेंसी के नियम-** ❍ आपके गांव, कस्बे, शहर में सांस्कृतिक पत्रिका 'कला समय' की एजेन्सी के लिए सम्पर्क करें। ❍ कम से कम दस प्रतियों से एजेन्सी शुरू की जायेगी। ❍ पत्रिका कुरियर अथवा रजिस्टर्ड बुक पोस्ट से भेजी जायेगी। डाक खर्च एजेन्सी को वहन करना होगा। ❍ कमीशन, प्रतियों की संख्या के आधार पर।

**स्थायी तथा सम्पादकीय पता और दूरभाष क्रमांक के साथ सम्पर्क करें-** जे-191, मंगल भवन, महावीर नगर, ई-6, अरेरा कॉलोनी, भोपाल- 462016 Email : bhanwarlalshrivas@gmail.com मो. 9425678058, 0755-2562294

**लेखकों/कलाकारों से** ❍ कला, संस्कृति और विचार के अछूते पहलुओं पर सृजनात्मक, शोधात्मक और सूचनात्मक आलेख, टिप्पणियां, रिपोर्ताज, साक्षात्कार, ललित निबंध, कविताएँ, छायाचित्र, रेखांकन तथा शोध आमंत्रित हैं। ❍ रचनाएँ कागज के एक ओर टाइप की हुई तथा मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो। कृपया रचना के साथ पर्याप्त डाक टिकिट लगा लिफाफा भी संलग्न करें। रचनाएँ और चित्र ई-मेल से भी भेजे जा सकते है।

**प्राथमिकता के साथ :** Chanakya फोंट / वर्ड फाइल / PDF फॉर्मेट में ही भेजें।

**अनुरोध : वे सदस्य जिनका वार्षिक / द्विवार्षिक सदस्यता शुल्क समाप्त हो रहा है, कृपया अपनी सदस्यता का नवीनीकरण करायें। सदस्यों को पत्रिका साधारण डाक से भेजी जाती है। नहीं मिलने की स्थिति में सदस्यता शुल्क के साथ 120/- का प्रतिवर्षानुसार रजिस्टर्ड डाक शुल्क अतिरिक्त भेजा जाना होगा।**

**-संपादक**

# लता मंगेशकर : तुम भूल न जाओ उनको इसलिए लिखी ये कहानी

पं. विजय शंकर मिश्र

मौत के क्रूर पंजों से क्या आज तक कोई बच पाया है ? जो लता बच जातीं ? दुनिया से जाने का दिन तो दुनिया में आने के दिन ही तय हो जाता है। जिंदगी भर जिए जाते हैं एक दिन मरने के लिए। यह दुनिया का दस्तूर है। यहां सदा सर्वदा के लिए कोई नहीं आता है। धरती पर अपनी भूमिका, अपने कर्तव्य का निर्वहन करने के बाद हर किसी को यहां से विदा होना ही पड़ता है। किसी को स्वेच्छा, तो किसी को अनिच्छा से। इसलिए कोई इच्छा मृत्यु का वरदान लेकर आता है, कोई खुद समाधि ले लेता है, तो किसी किसी के लिए किसी कवि की यह पंक्ति भी बिल्कुल सटीक बैठती है.. ''सांझ ढले हर पंछी को घर जाना पड़ता है/ कौन खुशी से मरता है मर जाना पड़ता है / बसंत पंचमी के दिन संगीत की सुरीली लता का यूं मुरझा जाना अत्यंत दुखद और शोकाकुल करने वाली दुर्घटना तो अवश्य है, लेकिन सरस्वती पूजा के अगले दिन मां सरस्वती की विदाई का नियम भी तो हमारा ही बनाया हुआ है ना ! फिर यह विलाप क्यों हमें तो ईश्वर के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करनी चाहिए कि उन्होंने लता मंगेशकर जैसी महान् गायिका की छत्रछाया इस धरती पर 92 वर्षों तक बनाए रखी। हमें लताजी के प्रति आभार व्यक्त करना चाहिए कि उन्होंने लगभग 75 वर्षों तक इस धरती पर अपने सुरों की अमृत वर्षा की, तीन-चार पीढ़ियों की महिलाओं को अपनी अपनी भावनाएं व्यक्त करने का अवसर अपने सदाबहार गीतों के माध्यम से दिया, और कठिन संघर्षों की अग्नि में खुद को तपाकर वह कुंदन बनीं जिसकी बेमिसाल मिसाल वे स्वयं ही थीं और कोई नहीं। कोई अन्य हो भी नहीं सकता है। इसलिए मेरे विचार से यह लता दीदी के पुण्य स्मरण का समय है, उनके महान सांगीतिक योगदानों को याद करने का समय है, उनके मधुर संगीत गंगा में आकंठ डूब जाने का समय है।

18 सितंबर 1929 को इंदौर में मराठी संगीत नाटकों के सुविख्यात गायक, अभिनेता मास्टर दीनानाथ मंगेशकर और श्रीमती शेवंती मंगेशकर की इस बड़ी पुत्री का नाम पहले हेमा रखा गया था। लेकिन बाद में एक मशहूर नाटक भाव बंधन के एक चरित्र लतिका से मास्टर दीनानाथ इतने प्रभावित हुए कि अपनी बेटी का नाम उन्होंने बदलकर लता रख दिया। बाद में यह परिवार महाराष्ट्र आ गया। लता मंगेशकर की परवरिश महाराष्ट्र में ही हुई। लता मंगेशकर के पिता मास्टर दीनानाथ बहुत अच्छे गायक थे, लेकिन उन्हें शराब पीने की बुरी लत थी। आय की दृष्टि से यह मध्यमवर्गीय परिवार था। अपने चार अन्य भाई बहनों आशा, उषा, मीना और हृदय नाथ में सबसे बड़ी लता उस समय सिर्फ 13 वर्ष की थी जब उसके पिता मास्टर दीनानाथ मंगेशकर का असामयिक आकस्मिक निधन हो गया था, और उस बड़े परिवार की पूरी जिम्मेदारी उस फूल सी नन्हीं बच्ची लता पर आ गई थी। लता मंगेशकर को जो सफलताएँ विश्वव्यापी लोकप्रियता और सम्मान मिले थे वह उनके जीवन चित्र का सिर्फ एक पक्ष है उजला पक्ष पॉजिटिव, लेकिन हर तस्वीर का एक नेगेटिव भी तो होता है। लता के जीवन का वह नेगेटिव इतना दर्दनाक, करुण और मार्मिक है कि जब सफलता के सिंहासन पर बैठे लता मंगेशकर से एक बार पूछा गया था कि ''क्या आप दोबारा लता मंगेशकर बनना चाहेंगी ?'' तो उन्होंने तपाक से मना कर दिया था। कारण पूछने पर वह बोली थी कि जिन तकलीफों से गुजर कर मैं यहां तक पहुंची हूं उनसे दुबारा गुजरने की हिम्मत और चाहत नहीं है मुझ में। और ए तब ज्ञात होता है कि इतने वर्षों में कोई दूसरी लता मंगेशकर क्यों नहीं बन पाई ? हम लता की लोकप्रियता, सम्मान

और उपलब्धियों की चर्चा बार-बार करते हैं और क्यों न करें? आखिर! हर दिन हर-हर अवसर पर सुबह से रात तक अपने सुरमई गीतों के निर्मल स्वर गंगा से हमें भिंगोकर हमारी थकावट, हमारी वेदना और हमारी चिंताओं को वह हमसे दूर जो करती रही हैं! लेकिन कितने लोगों ने उनके टूटे हुए सपनों, असमय दफ्न हुए अरमानों, और अधरों की पावन मुस्कानों के पीछे की दम तोड़ती खुशियों को जानने और समझने की कोशिश की है। जिस लता के गानों की महक ने हमें सदा मदहोश किए रखा उस लता के लिए यह शब्द बिल्कुल सही हैं.. दाना खाक में मिलकर गुले गुलजार होता है। जी हां! अपनी खुशियों, अपने अरमानों, सपनों को मिट्टी में मिला कर ही वह छोटी और छुईमुई सी लता कालांतर में इतनी बड़ी हो गई थी कि दुनिया भर का संगीत समाज उनके सामने नतमस्तक हो गया था। एक ओर उनके अधरों की निर्मल मुस्कान के पीछे के दर्द को देखकर एक शायर यह लिखता है कि... लाख होठों पर तबस्सुम के उजाले होंगे/ दिल में झांकोगे तो बस छाले छाले होंगे/ तो, दूसरी ओर बीसवीं शताब्दी की इस महान गायिका को बीसवीं शताब्दी का एक महान शास्त्रीय गायक अपनी प्रिय गायिका बताता है। प्रतिष्ठित शास्त्रीय गायक पंडित जसराज से जब एक बार उनके प्रिय गायक के लिए पूछा गया था तो उन्होंने किसी पंडित, उस्ताद या विदुषी का नाम न लेकर तपाक से कहा था 'लता मंगेशकर' इसके पहले एक और महान गायक उस्ताद बड़े गुलाम अली खां अपनी व्यथा इन शब्दों में व्यक्त कर चुके थे ''कमबख्त कभी बेसुरी नहीं होती है।'' उस्ताद अमीर खान ने बहुत ईमानदारी और विनम्रता के साथ स्वीकार किया था कि .. ''अपने संगीत के माध्यम से जो माहौल हम 3 घंटे में बनाते हैं, उसे लता मंगेशकर सिर्फ3 मिनट में बना देती हैं। वे 3 मिनट की जादूगरनी हैं।'' उस्ताद अमजद अली खान उनकी आवाज, उनकी गायकी को विश्व का आठवां आश्चर्य मानते हैं।'

एक फिल्मी गायिका की प्रशंसा में शास्त्रीय संगीत के दिग्गजों का इस तरह का कसीदे पढ़ना कोई साधारण बात नहीं है। उनकी उपलब्धियों के ताजमहल को विस्फारित और चकित दृष्टि से निहारने के साथ ही उसके नीचे दफन उनके अरमानों की मुमताज को भी हमें देखना और समझना होगा। अगर समय साथ देता और परिस्थितियां अनुकूल रहती तो शायद लता मंगेशकर आज एक फिल्मी पार्श्व गायिका नहीं शास्त्रीय गायिका के रूप में याद की जा रही होती। अपने पिता मास्टर दीनानाथ मंगेशकर से शास्त्रीय संगीत की आरंभिक शिक्षा प्राप्त कर चुकी लता ने बाद में भेंडी बजार घराने के महान गायक उस्ताद अमान अली खान से शास्त्रीय संगीत की विधिवत और गहन शिक्षा ग्रहण की थी। बाद में लता के साथ समयाभाव की समस्या उत्पन्न हुई तो उस्ताद अमान अली खान ने अपने सुयोग्य शिष्य पंडित शिवकुमार शुक्ला को यह जिम्मेदारी सौंपी कि, वह लताजी के घर जाकर उन्हें संगीत सिखाएं। प्रतिष्ठित सारंगी वादक पद्म विभूषण पंडित रामनारायण जी उन दिनों को याद करते हुए कहते हैं,..' तब लता मंगेशकर शास्त्रीय संगीत के मंच पर तानपुरा लेकर दो से ढाई घंटे तक का शास्त्रीय गायन करती थीं। और, उनकी संगति के लिए सारंगी पर प्रायः मुझे ही बुलाया जाता था। लेकिन, आज ही की तरह तब भी शास्त्रीय संगीत में फिल्म संगीत की अपेक्षा बहुत कम पैसे मिलते थे। अतः लता मंगेशकर धीरे धीरे शास्त्रीय संगीत से दूर और फ़िल्म संगीत के निकट होती चली गईं।

पिछले दिनों एक टीवी चैनल पर जब एक युवा गायिका को मैंने यह कहते सुना था कि फिल्मों में गाने के लिए संगीत सीखना अनिवार्य नहीं है। तो मैं आधुनिक फ़िल्मी गानों के स्तर हीनता का कारण समझ गया। काश! उन्हें पता होता कि जितने भी अच्छे फ़िल्मी गायक हुए हैं सभी ने संगीत सीखा है। मोहम्मद रफी साहब से लेकर सोनू निगम तक, और आशा भोसले से लेकर श्रेया घोषाल तक और, लता मंगेशकर तो रोज सुबह तानपुरे के साथ दो घंटे रियाज किया करती थीं नियम पूर्वक। सिर्फ प्रसंग वश यहां यह बताना उचित लग रहा है कि शास्त्रीय संगीत का विधिवत अध्ययन कि, बगैर सिर्फ एक ही फ़िल्मी गायक ने अपनी श्रेष्ठता सिद्ध की है और वह थे.. किशोर कुमार।

लता मंगेशकर बचपन से ही शास्त्रीय गायिका बनना चाहती थीं। उनके पिता मास्टर दीनानाथ मंगेशकर की भी यही इच्छा थी। तभी तो उन्होंने मराठी फ़िल्म 'कीति हसाल' में जब अपना पहला गाना 1942 में गाया था तो उस गाने को दीनानाथजी ने फ़िल्म से निकलवा दिया था। क्योंकि वह लता को फ़िल्मों से नहीं जोड़ना चाहते थे। लेकिन संयोग देखिए कि 1942 में मास्टर दीनानाथ के निधन के बाद लता को न केवल फ़िल्मों में गाना पड़ा बल्कि अभिनय भी करना पड़ा था। पिता के आकस्मिक और असामयिक मृत्यु के बाद उन्होंने पाहिली मंगला गौरी, माझे बाल, चिमुकला संसार, गज भाऊ, बड़ी मां, जीवन यात्रा, मांद और छत्रपति शिवाजी आदि जैसी मराठी और हिंदी फ़िल्मों में अभिनय भी किया और गाना भी गाया। बड़ी मां फ़िल्म में आशा भोसले ने भी लता की छोटी बहन की एक छोटी सी भूमिका निभाई थी। आर्थिक समस्याओं से जूझ रहीं लता मंगेशकर ये सारे काम अपने मन को मार कर सिर्फ पैसे

कमाने के लिए कर रही थीं। उनके निधन के बाद समाचार पत्रों में प्रकाशित हुआ है कि लताजी 375 करोड़ के संपति की स्वामिनी थीं, और लगभग 40,00000 रुपए की रॉयल्टी उन्हें प्रतिमाह मिलती थी। कभी 25 रुपये में मंचीय कार्यक्रम देने वाली और 250 रुपये महीने की नौकरी करने वाली गायिका अगर एक दिन इतनी धनाढ्य हो जाती है तो मन के एक कोने से यह आवाज तो आती ही है कि 'सब कुछ इतना बुरा भी नहीं है जितना दिखता है।'

लता ने अपने जीवन का पहला प्रेम 13 वर्ष की उम्र में किया था उस समय के सर्वाधिक लोकप्रिय अभिनेता और गायक कुंदन लाल सहगल से। सहगल की फ़िल्म चंडी दास देखकर और उनके गीत सुनकर वह इतनी प्रभावित हुई थीं कि मन ही मन तय कर लिया था कि बड़ी होकर उन्हीं से विवाह करुंगी, जबकि कुंदन लाल सहगल, (जन्म1904, मृत्यु 1947) उनसे 25 वर्ष बड़े थे। यह बालपन का प्रेम था। वही प्रेम जो मीरा ने किया था अपने कान्हा से। इसी उम्र में मीरा ने भी तो कन्हैया की एक छोटी सी मूर्ति को अपना दूल्हा मान लिया था! तब न तो मीरा को पता था और न तो लता को ही कि यह मेल बेमेल है। आखिर हजरत अमीर खुसरो ने यूं तो नहीं लिख दिया था ना कि ...'खुसरो दरिया प्रेम का, या की उल्टी धार / जो उबरा सो डूब गया, जो डूबा सो पार / इसके बाद लता मंगेशकर का नाम संगीत निर्देशक चितलकर रामचंद्र और क्रिकेटर राज सिंह डूंगरपुर के साथ जुड़ा, लेकिन हमेशा सनसनीखेज मसालेदार खबरों की तलाश में रहने वाले छिद्राअन्वेषी फ़िल्मी पत्रकारों को लता के प्रेम की कोई मसालेदार, सनसनीखेज खबर कभी नहीं मिली। अगर यह प्रेम था भी तो आदर्श और सच्चा प्रेम था, जो शरीर से परे था। जिसमें

कुछ पाने की चाहत नहीं थी। यह सच है कि क्रिकेट में लता मंगेशकर की रुचि राज सिंह डूंगरपुर की मित्रता के कारण ही हुई थी। इस रुचि के कारण ही 1983 में भारत के वर्ल्ड कप जीतने के बाद खिलाड़ियों को पुरस्कृत करने और क्रिकेट कंट्रोल बोर्ड के मदद करने के उद्देश्य से लता ने एक कार्यक्रम भी दिया था। इस कार्यक्रम से प्राप्त धनराशि से वर्ल्ड कप में खेलने वाले हर भारतीय खिलाड़ी को पुरस्कार स्वरूप एक 100000 रुपये दिए गए थे। कपिल देव कहते हैं ..'उस दिन जीवन में पहली बार मैं लखपति बना था।' राजस्थान के अकाल पीड़ितों की मदद के लिए भी लता ने एक कार्यक्रम किया था। मुंबई और राजस्थान में अस्पतालों के लिए भी उन्होंने आर्थिक सहायता दी थी। अपने छोटे भाई बहनों और देशवासियों की सहायता करते करते लता कब शादी की देहरी पार कर गई किसी को पता ही नहीं चला। लता के अनुसार.. 'रिश्ते तो

पंडित बिरजू महाराज को लता मंगेशकर सम्मान से सम्मानित करती हुई लता जी

कई आए थे, लेकिन मुझे लगा कि अगर मैं शादी करके दूसरे के घर चली जाऊंगी तो फिर मेरे भाई बहनों और, मां की देखभाल कौन करेगा ? इसलिए मैंने उस विचार को सिरे से ही त्याग दिया'

लता को हिंदी फ़िल्मों में गाने के अवसर बहुत आसानी से नहीं मिले थे। यद्यपि बसंत जोगलेकर और गुलाम हैदर जैसे परिपक्व संगीतकारों का उन पर पूरा विश्वास था, तथापि फ़िल्म निर्माता शशधर मुखर्जी आदि ने 'इसकी आवाज बहुत पतली और महीन है। यह आवाज नहीं चलने वाली है।' कहकर शुरू-शुरू में लता को अपनी फ़िल्मों में लेने से मना भी कर दिया था। लेकिन, जब लता की वह आवाज चली तो फिर कई पीढ़ियों तक चलती चली गई, और शशधार मुखर्जी आदि लता को अपनी फ़िल्मों में लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। लताजी ने अभिनेत्री शोभना समर्थ उनकी बेटी नूतन और तनुजा तथा तनुजा की बेटी काजोल तक के लिए अपनी आवाज दी थी। उनकी आवाज फ़िल्म निर्माताओं के लिए, संगीत निर्देशकों के लिए और नायिकाओं के लिए अनिवार्यता की हद तक जरूरी हो गई थी।

लता मंगेशकर सिर्फ इसलिए महान् नहीं थीं कि वह बहुत अच्छी और सुरीली गायिका थीं, बल्कि वे इसलिए भी महान् थीं कि उन्हें अच्छी तरह मालूम था कि उन्हें क्या गाना चाहिए और क्या नहीं ? अभिनेता दिलीप कुमार और संगीतकार गुलाम हैदर के सुझाव पर उन्होंने अपनी हिंदी और उर्दू का उच्चारण सुधारा तो दूसरी और हिंदी और उर्दू का प्रचार-प्रसार अपने गीतों के माध्यम से सात समंदर पार तक दुनिया के अनेक ऐसे देशों में भी किया जहां न तो

हिंदी बोली जाती है और न तो समझी जाती है। लेकिन लता के गीत वहां भी गाये और गुनगुनाए जाते हैं। लता ने एक बार एक गाने से सिर्फ इसलिए इनकार कर दिया था कि उसकी एक पंक्ति थी.. सड़कों पर नाचे जवानी.. कितने हीं मुजरा और कैबरे गीतों को उन्होंने यह कह कर गाने से मना कर दिया था कि 'इन गीतों के साथ आशा ज्यादा न्याय कर पाएंगी। इस आशा से ही गवाइये।' लेकिन अमर गीत.. ऐ मेरे वतन के लोगों जरा आंख में भर लो पानी..को आशा से छीनने में भी उन्हें संकोच नहीं हुआ। इसी प्रकार.. बिंदिया चमकेगी..जैसे गीत को फ़िल्मों में गाने के बावजूद मंच पर गाने से वे परहेज करती रहीं, और संगम फ़िल्म के मशहूर गीत..मैं क्या करूं राम मुझे बुड्ढा मिल गया.. को उनसे गवाने के लिए सबसे बड़े शोमैन राज कपूर को भी उनसे काफ़ी मिन्नतें करनी पड़ी थी। क्योंकि लताजी ने इस गीत को गाने से साफ तौर पर मना कर दिया था। लेकिनए यह तो अच्छा हुआ कि इसे लताजी जैसी सशक्त गायिका ने गाया और अभिनय भी वैजयंती माला जैसी सशक्त अभिनेत्री ने किया। तभी तो अपनी संपूर्ण मादकता के बावजूद यह गीत फूहड़, अश्लील और कामुक होने से बच गया। लता जब फ़िल्मों में नहीं आई थीं तो संगीतकार नौशाद ने एक दो बार सांकेतिक भाषा में उनसे उस जमाने की सबसे बड़ी गायिका नूरजहां की आवाज की मादकता को अपने गले में उतारने का सुझाव दिया था, लेकिन लता इसके पक्ष में नहीं थीं। इसलिए उन्होंने न तो स्पष्ट तौर पर नौशाद को मना ही किया और न तो उनके सुझाव पर अमल ही।

अपने संगीत निर्देशन में लता मंगेशकर से कई गाने गवा चुके प्रख्यात बांसुरी वादक पंडित हरिप्रसाद चौरसिया का लता के बारे में यह कहना कि... 'वे संगीतकार की सोच की सीमा से कहीं आगे तक चली जाती थीं और जब तक खुद संतुष्ट नहीं होती थीं गीत फाइनल नहीं करती थी।' काफी महत्वपूर्ण है। इसी प्रकार, अनिल विश्वास ने भी एक बार कहा था कि....'लता जब हिंदी फ़िल्म इंडस्ट्री में आईं तो हम जैसे कई संगीतकार निश्चिंत हो गए थे कि अब हम कैसा भी, कितना भी कठिन संगीत तैयार कर सकते हैं। क्योंकि हमारे बीच एक प्रशिक्षित और परिपक्व गायिका आ चुकी है। प्रसंग वश यह भी बता दें कि लता मंगेशकर ने भी यह स्वीकार किया था कि अनिल विश्वास नहीं उन्हें यह समझाया था कि .... 'गाने के बीच में सांस कब और कैसे ली जाती है। यह उन्हें अनिल विश्वास नहीं बताया था।' और राज कपूर ने भी रविंद्र जैन को फ़िल्म राम तेरी गंगा मैली के संगीत निर्देशन का दायित्व इसी शर्त पर सौंपा था कि वे गाने लता मंगेशकर से ही गवायेंगे। अपने पिता सचिन देव बर्मन के साथ लता मंगेशकर के मनमुटाव और बातचीत बंद होने तथा आशा भोसले के प्रति अनुराग का भरपूर भाव होने के बावजूद अपनी पहली स्वतंत्र हिंदी फ़िल्म छोटे नवाब में संगीतकार राहुल देव बर्मन ने लताजी को ही गायिका के रूप में लिया था, और अपने पहले गाने की रिकॉर्डिंग उन्हीं के साथ की थी। ये घटनाएं बताती हैं कि 1960 और 70 के दशक में संगीतकारों के लिए किस तरह अनिवार्य होती जा रही थीं लता मंगेशकर। आंचलिक भाषाओं के कई गीतकारों, संगीतकारों और फ़िल्मकारों को लता मंगेशकर से अपने गाने गवाने के लिए भूख हड़ताल तक करनी पड़ी थी। यह था लता के कंठ का जादू! अखबारों की मानें तो उन्होंने 30 से अधिक भाषाओं में लगभग 50000 गाने गाए थे। फ़िल्मों के अलावा भी उन्होंने खूब था। पंडित भीमसेन जोशी के साथ उनका भजनों का एल्बम हो या भगवत गीता अथवा मीरा के भजन। सभी आज भी खूब लोकप्रिय हैं। गायन में रूमानियत की चरम सीमा पर पहुंचने के बावजूद उसे अतिरिक्त मादकता और कामुकता से बचाए रखना लता मंगेशकर की बहुत बड़ी विशेषता थी। उनके गीतों में यौवन आवेग तो दिखता है किंतु कामुक आमंत्रण नहीं, इसीलिए कई बार आशा भोंसले को उनके गानों की विविधता के कारण लता से अधिक श्रेष्ठ सिद्ध करने का भी प्रयास किया गया। लेकिन लता को दौड़ में आगे निकलने की होड़ में अपनी आवाज की कोमलता निर्मलता और पवित्रता को खोना कभी भी स्वीकार नहीं हुआ। उन्होंने अपनी आवाज का 'कौमार्य' कभी भी भंग नहीं होने दिया– गीत और दृश्य की मांग होने के बावजूद। इसीलिए लता–लता हैं, सर्वश्रेष्ठ हैं, अद्वितीय हैं।

लता में दर्प और स्वाभिमान की भावनाएं कूट–कूट कर भरी हुई थीं और, वे कई बार स्वाभिमान की सीमा रेखा पार करके अभिमान में भी परिणत हो जाते थी। आखिर! सचिन देव बर्मन, सी. रामचंद्र और शंकर (जयकिशन) जैसे संगीत निर्देशकों से, मोहम्मद रफी जैसे गायक से और राज कपूर जैसे कई बड़े निर्माता निर्देशकों से दुश्मनी मोल लेना कोई साधारण बात तो नहीं थी ना! लेकिन लता को जो उचित लगता था वह वही करती थीं। अपनी शर्तों पर काम करती थीं। उन्हें जब लंदन में पहली बार कार्यक्रम के लिए बुलाया गया था तब भी उन्होंने एक बड़ी शर्त रख दी थी.. , 'कार्यक्रम रॉयल अल्बर्ट हॉल में आयोजित कीजिए तभी आऊंगी।'

उनकी वह शर्त भी मानी गई थी। वह अपनी बात धड़ल्ले से कहती थीं। नरेंद्र मोदी को प्रधानमंत्री बनने का भी उन्होंने समर्थन किया था और सचिन तेंदुलकर को भारत रत्न देने का भी। इसीलिए

उन्हें कई बार गंभीर आलोचनाओं का भी शिकार होना पड़ा था, लेकिन वह अपना काम अपने ढंग से करती रहीं।

विदुषी लता मंगेशकर को कई मान सम्मान मिले थे। 7 बार फ़िल्म फेयर पुरस्कार जीतने के बाद उन्होंने खुद ही कह दिया था कि भविष्य में इस पुरस्कार के लिए मेरे नाम पर विचार न करके अन्य गायक गायिकाओं के नाम पर विचार किया जाए। महाराष्ट्र सरकार पुरस्कार उन्हें दो बार मिला था। महाराष्ट्र भूषण और नूरजहां सम्मान भी उन्हें मिला था। तीन बार राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित लता मंगेशकर को राजीव गांधी और एन टी आर. के नाम पर दिए जाने वाले पुरस्कार भी प्राप्त हुए थे। 6 विश्वविद्यालयों से डॉक्टर ऑफ लिटरेचर की मानद उपाधियों से सम्मानित इस महान गायिका को पद्म भूषण और पद्म विभूषण जैसे प्रतिष्ठित नागरिक अलंकरण भी मिले थे। लता मंगेशकर को आई फा लाइनफटाइम अचीवमेंट अवॉर्ड, जी सिने का लाइफ टाइम अचीवमेंट अवॉर्ड, स्क्रीन का लाइफ टाइम अचीवमेंट सम्मान, स्टार डस्ट का लाइफ टाइम अचीवमेंट सम्मान और फ़िल्म फेयर का लाइफटाइम अचीवमेंट अवार्ड भी मिला था। उन्हे दादा साहेब फाल्के सम्मान से भी सम्मानित किया गया था और 2001 में इस राष्ट्र ने उन्हें अपने सर्वोच्च नागरिक अलंकरण भारत रत्न से विभूषित कर उनके प्रति अपनी कृतज्ञता ज्ञापित की थी। लता मंगेशकर एकमात्र जीवित कलाकार थीं जिनके नाम पर प्रतिवर्ष लता मंगेशकर पुरस्कार संगीत और नृत्य के महान साधकों को दिया जाता है।

लता मंगेशकरजी पिछले कुछ समय से गंभीर रूप से बीमार थीं। उनके कुछ वीडियो भी सामाजिक संचार माध्यमों पर आ गए थे जिनमें दो युवतियां उन्हें सहारा देकर ले जा रही हैं। वह अस्पताल के गाउन में थीं। दूसरी वीडियो में वे व्हील चेयर पर बैठी थीं और उनके शरीर में कई तरह की नलियां लगी हुई थीं। सच से साक्षात्कार कराने वाले उस भयावह वीडियो को देखकर हम जैसे लता प्रशंसकों का मन बुरी तरह से विचलित हो गया था और अभी तक विचलित है। और, तभी लताजी का एक मार्मिक बयान आ गया... 'इस दुनिया में मौत से ज्यादा वास्तविक कुछ भी नहीं है। दुनिया की सबसे महंगी ब्रांडेड कार मेरे गैरेज में खड़ी है, लेकिन मैं व्हील चेयर पर चलने के लिए विवश हूं। महंगे से महंगे कपड़ों और साजो सामान के होने के बावजूद मैं अस्पताल द्वारा दिए गए छोटे से गाउन को पहनने के लिए विवश हूं। अपना महल जैसा घर होने के बावजूद मैं अस्पताल के एक छोटे से कमरे में छोटे से बिस्तर पर सोने के लिए विवश हूं। मैंने दुनिया भर के फाइव स्टार होटल में भोजन किया है, लेकिन आज मेरी खुराक दिन में 2 गोलियां और रात में नमक की एक बूंद मात्र है। आज मुझे एक कदम भी चलने के लिए दो लोगों की मदद लेनी पड़ती है। ऐसे समय में अगर मेरे पास कुछ है तो वह है अपने कुछ लोगों का प्यार और उनकी दुआएं।' और मौत ने क्या आज तक किसी को छोड़ा है जो लता को छोड़ देती अत: 6 फरवरी 2022 की प्रात: बेला में सरस्वती पूजा के अगले दिन संगीत की देवी इस दुनिया से प्रस्थान कर गईं। उनकी विदा मेला में सुप्रसिद्ध गायक दिल्ली विश्वविद्यालय के संगीत संकाय में अध्यापक डॉक्टर विनीत मोहन गोस्वामी 'अनुराग' ने उन्हें अपनी भावपूर्ण संगीतांजलि अर्पित करते हुए गाया... ''स्वर को जलता छोड़ गई हो / गीतों का दिल क्यों तोड़ गई हो / पाया कंठ मां शारदा का / श्वेत वसन क्यों ओढ़ गई हो / हर इंसान की नम हैं आंखें / कैसा नाता जोड़ गई हो/ बहलेगा न तार हृदय का / जी को यूं ही झिंझोड़ गई हो / लता सरीखा जीवन था / क्यों जीवन से मुख मोड़ गई हो / सुर से फिर 'अनुराग' ने फूटा / सब संगीत निचोड़ गई हो।

एक पुरानी कहावत है– आदमी की असली हैसियत उसके मरने के बाद ही पता चलती है। और, लता मंगेशकर की अंतिम विदाई ने दिखा दिया कि वे कितनी महान् कलाकार थी। मुंबई में जिस भव्यता के साथ उन्हें अंतिम विदाई दी गई, और न केवल देश के कोने कोने में उन्हें समर्पित कार्यक्रम आयोजित किए गए, उन्हें श्रद्धांजलि दी गई, बल्कि अनेक दूसरे देशों में भी उनके लिए शोक सभाएं आयोजित की गईं उसे देखते हुए भला कौन भावुक हृदय स्वत: सहर्ष मरने के लिए तैयार नहीं हो जाएगा ? कम से कम मैं तो तैयार हूं। उनके अंतिम संस्कार के समय जिस तरह देश के प्रधानमंत्री और अनेक मंत्री गण, महाराष्ट्र सरकार के मुख्यमंत्री और अनेक मंत्री गण, विभिन्न राजनीतिक दलों के शीर्षस्थ नेता गण एक साथ दिखे, सुप्रसिद्ध संगीतकारों, साहित्यकारों, अभिनेता अभिनेत्रियों, क्रिकेट खिलाड़ियों और उद्योग जगत के शीर्षस्थ लोगों ने वहाँ जाकर उनके पार्थिव शरीर पर पुष्पांजलि अर्पित की, वैसी विदाई तो मैंने आज तक अपनी जिंदगी में किसी और की नहीं देखी। लताजी के पार्थिव और लौकिक शरीर का अवसान अवश्य कष्टमय है, लेकिन उनकी आवाज की अलौकिकता उनका चिर युवापन उन्हें तो मरने नहीं ही देगा, बूढ़ा भी नहीं होने देगा। तभी तो 92 वर्ष की उम्र में भी लताजी, ..दीदी ही थीं.. सबकी दीदी.. क्योंकि ना तो वे बूढ़ी हुईं और न तो उनका संगीत कभी बूढ़ा होगा। उन्हें अंतिम विदाई देते हुए उनका अमर गीत बज रहा था.. ऐ मेरे वतन के लोगों / जरा आंख में भर लो पानी / जो शहीद हुए हैं उनकी / ज़रा याद करो कुर्बानी / मैं इसी गीत की एक अन्य पंक्ति के साथ उन्हें नमन करता हूं, उन्हें विदा करता हूं ,..तुम भूल न जाओ उनको, इसलिए लिखी ये कहानी, जो शहीद हुए हैं उनकी, ज़रा याद करो कुर्बानी। लताजी को, उनकी स्मृतियों को और उनके अमर संगीत को सादर नमन।?

■

आलेख

# पूर्वी निमाड़ अंचल के ज्ञात अज्ञात स्वतंत्रता संग्राम सेनानी

डॉ. रेखा गुंजन

12 मार्च 1930 की तारीख भारतीय स्वाधीनता संग्राम की महत्वपूर्ण तारीख है। इस दिन महात्मा गांधी जी ने अपनी सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक दांडी यात्रा का आरंभ किया सविनय अवज्ञा आंदोलन की शुरुआत की। अहमदाबाद के साबरमती आश्रम और विद्यापीठ के चुने हुए उन 79 साथियों के साथ 240 मील की यात्रा अंग्रेजों के नमक कानून के खिलाफअर्थात 386 किलोमीटर की यात्रा करके 25 दिन में 6 अप्रैल को दांडी पहुंचे। जिसके लिए उन्होंने 16 किलोमीटर की प्रतिदिन पदयात्रा की। उनकी यात्रा का उद्देश्य नमक कानून तोड़ना था जो अंग्रेजी के विरुद्ध देशभर में विरोध की शुरुआत थी। कभी न सूर्य अस्त होने वाले ब्रिटिश साम्राज्य के मिथक को तोड़ कर उसके विरुद्ध सतत संघर्ष का क्रम शुरु कर दिया था।

हमारे देश के माननीय प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी जी के आह्वान पर पूरे देश में अमृत महोत्सव का आयोजन किया जा रहा है। इस अमृत महोत्सव का उद्देश्य है कि आजादी के आंदोलन में ज्ञात-अज्ञात स्वाधीनता संग्राम सेनानियों के योगदान का स्मरण किया जाना है। देश की आजादी के लिए जो शस्त्र से लड़ सकता था वह शस्त्र से लड़ा जो अन्य प्रकार से सहयोग कर सकता था उसने अपने सामर्थ्य के अनुसार सहभाग किया। यह कहना गलत नहीं होगा कि लगभग प्रत्येक भारतीय स्वाधीनता संग्राम में हृदय से जुड़ा था। जिन लोगों में कुछ न करने का साहस अथवा सामर्थ्य नहीं था वह अपने आराध्य देवता से प्रार्थना कर रहा था देश की आजादी के लिए। जनता, किसान, मजदूर, शिक्षक, छात्र, स्त्रियों सहित जन-जन ने अपना अविस्मरणीय योगदान दिया था। आजादी का यह आंदोलन सफल इसलिए हो सका क्योंकि इसमें सभी ? भारतीय जनो की हिस्सेदारी थी और यह जन आंदोलन बन सका। जब कोई आंदोलन जन-जन का हो तब आंदोलन की सफलता तय हो जाती है।

आप हम यदि अपने घरों में दादा-दादी, नाना-नानी अथवा गांव के बड़े बुजुर्गों से बात करेंगे तो पाएंगे कि उन दिनों कैसा जनसमर्थन आजादी को मिला था। गांधीजी के पीछे पूरा देश था ''चल पड़े जिधर दो डग, मग में चल पड़े कोटि पग उसी ओर।'' कितने लोगों ने बिना किसी डर के बंदूको और लाठियों का सामना अहिंसात्मक तरीके से किया अंग्रेजों की ताकत को अहिंसा से जवाब दिया।

आज अमृत महोत्सव का आयोजन इसी उद्देश्य से किया जा रहा है कि ऐसे कई नाम है जो इतिहास के पन्नों पर दर्ज नहीं है, उनका कहीं उल्लेख नहीं है, ऐसे अनकहे किस्से हैं जिनके बारे में कुछ भी कहा नहीं गया है। उनको स्मरण करना ही हमारा पुनीत कर्तव्य होगा। आज यदि हम प्रयास करें तो ऐसे स्वाधीनता संग्रामी को याद करें तो ऐसे कई अध्याय खुल सकते हैं जिन पर हमें नाज होगा। इस अमृत महोत्सव की सार्थकता भी इसी में है कि उनके योगदान को रेखांकित करें। इसी अवसर पर अपने क्षेत्र की विभूतियों को याद करने का यह पुनीत अवसर है। हम अपनी माटी के उन सपूतों को याद करेंगे जिन्होंने हमारी आजादी की लड़ाई में अविस्मरणीय योगदान दिया।

मैं स्वाधीनता संग्राम के महोत्सव पर सर्वप्रथम अपना पहला श्रद्धा सुमन उस वीर योद्धा को समर्पित करती हूं जो इंडियन रॉबिनहुड के नाम से जाने जाते हैं। वो आजादी के जननायक और आदिवासियों के नायक टंट्या मामा भील थे। टंट्या मामा की पुण्यतिथि पर 4 दिसंबर को शासन ने स्थानीय अवकाश घोषित किया है। उनकी वीरता और अदम्य साहस के बदौलत तात्या टोपे ने प्रभावित होकर टंट्या को गोरिल्ला युद्ध में पारंगत बनाया था। वह अंग्रेजों के शोषण तथा विदेशी हस्तक्षेप के खिलाफ उठ खड़े हुए और देखते ही देखते गरीब आदिवासियों के मसीहा बन गए। वे अंग्रेजों के खजाने लूटते और गरीबों में बांट देते थे उन्हें पकड़ना असंभव था, यदि उनके साथ उनकी मुंहबोली बहन ने मुखबिरी करके पकड़वा न दिया होता।

एक बार का वाकया है कि इंदौर के निकट बलवाड़ा नाम के गांव में एक अंग्रेज थानेदार ने उन्हें गिरफ्तार करने की कसम खाई थी। दूसरे

दिन टंट्या मामा नाई के भेष में थानेदार की हजामत बनाने पहुंचे और थानेदार की दाढ़ी में साबुन लगाने के बाद धारदार उस्तरा उसकी गर्दन पर रख दिया और यह चेतावनी दी कि उनके रास्ते पर आए तो सोच लेना क्या होगा ? थानेदार की तो जैसे घिघ्घी बंध गई टंट्या मामा ने उसे मारा नहीं। ऐसे थे टंट्या मामा वह बड़े पराक्रमी थे।

टंट्या भील का जन्म पूर्व निमाड़ जिले के पंधाना के बडदा गांव में सन् 1842 में हुआ था उनके पिता माऊसिंह ने बचपन में नवगजा पीर की दहलीज पर अपनी पत्नी की कसम खाकर कहा था कि उनका बेटा अपनी जाति की बेटियों, बहनों, बहुओं के अपमान का बदला अवश्य लेगा। ब्रिटिश हुकूमत के खिलाफ़ विद्रोह का झंडा उठाया था वह जन्मजात क्रांतिकारी थे।

10 नवंबर 1889 को उन्हें धोखे से गिरफ्तार किया गया था। तब अमेरिका के न्यूयॉर्क टाइम्स ने उनकी गिरफ्तारी का समाचार भारतीय रॉबिनहुड की गिरफ्तारी शीर्षक से छापा था। इससे उनके पराक्रम का अंदाजा लगाया जा सकता है। उनके विद्रोही तेवर ने कम समय में ही बड़ी पहचान हासिल कर ली थी। आजादी के पहले देश में अंग्रेजों का साम्राज्य था। गरीब आदिवासियों ने अंग्रेजों के खिलाफविद्रोह किया परंतु उन पर बहुत कम लिखा गया है। इस महत्वपूर्ण कमी के कारण भारत के राष्ट्रीय आंदोलन के इतिहास में एक शून्यता दिखती है। इस शून्यता को भरने के लिए जन समुदाय के इतिहास को नजदीक से देखना होगा।

आदिवासियों के विद्रोह की शुरुआत 1757 में प्लासी युद्ध के ठीक बाद में हुई। यह संघर्ष बीसवीं सदी की शुरुआत तक चलता रहा। अपने सीमित साधनों से वे लंबे समय तक संघर्ष करते रहे क्योंकि वनांचल में गुरिल्ला युद्ध का प्रयोग उन्होंने किया।

अंग्रेजों ने उन पर डकैती का इल्ज़ाम लगाकर अपराधी घोषित किया था। उनकी शहादत 4 दिसंबर 1889 को हुई। फांसी के बाद उनके शव को पातालपानी रेलवे स्टेशन के पास ले जाकर डाल दिया गया था। वहां पर बनी हुई एक समाधि स्थल पर लकड़ी के पुतलों को टंट्या मामा की समाधि माना जाता है। जब तक इस मीटर गेज लाइन पर ट्रेन चल रही थीए तब तक रेल चालक पातालपानी पर टंट्या मामा को सलामी देने के लिए कुछ क्षण के लिए रेल रोकते थे, किन्तु अब इस जगह रेलवे के ब्राडगेज का काम चलने से इस रूट पर ट्रेन का संचालन बंद है, किन्तु वे इतने लोकप्रिय हो गए थे कि उनके सम्मान में प्रत्येक भील अपने आपको मामा कहलाने में गौरव का अनुभव करने लगे हैं। भील जन जाति में वह छोटे-बड़े सभी के मामा के रूप में जाने जाते है, एवं भीलों में मामा आज भी आदर सूचक संबोधन माना जाता है। मध्य प्रदेश के स्वतंत्रता संग्राम के नायक टंट्या मामा के जीवन पर आधारित एक फ़िल्म टंट्या भील भी बनाई जा चुकी है। फ़िल्म का लेखन निर्देशन प्रदेश के मुकेश चौकसे ने किया है। उन्होंने ब्रिटिश लाइब्रेरी से टंट्या भील के बारे में जानकारी मंगवाई इसके बाद फ़िल्म की स्क्रिप्ट पर काम शुरू हुआ। फ़िल्म में टंट्या मामा का अंग्रेजों से लोहा लेना, गरीबों में धन बांटना, जेल में गुजारे दिन उनके पिता द्वारा जमीन गिरवी रखना उस पर कर्ज लेना इसी कर्ज के बोझ से उनकी मृत्यु होना, टंट्या को कर्ज के लिए जमींदारों द्वारा परेशान किया जाना और बाद में जमीन हड़प लेना। इस पूरी घटना के बाद झांसी की रानी की प्रेरणा से अन्याय का विरोध करते गरीबों की मदद करना जैसे कार्य किया जाना दर्शाया गया है। पूरी फिल्म में टंट्या मामा के गुरु जी का किरदार अभिनेता कादर खान ने निभाया। जन-जन के हृदय में उनकी यादें बसी हैं।

टंट्या मामा के अलावा निमाड़ के भी कुछ अल्प ज्ञात किन्तु महत्वपूर्ण स्वाधीनता संग्राम के नायकों का स्मरण भी आवश्यक है। उल्लेखनीय है कि आज खंडवा नगर के मध्य में रेलवे स्टेशन के सामने

जो गांधी भवन बना हुआ है वह उन दिनों रॉबर्टसन पार्क के नाम से जाना जाता था गांधी भवन का निर्माण तो बहुत बाद में हुआ। इसी राबर्टसन पार्क में 1917 में लोकमान्य तिलक की एक सभा हुई इस सभा के बारे में कुछ रोचक बातें हैं, तिलक की सभा में भाषण सुनने के लिए इतने लोग एकत्रित हुए कि अंग्रेज प्रशासन घबरा गए उन दिनों गवर्नमेंट हाई स्कूल के शिक्षक रामकृष्ण पालीवाल और राजाभाऊ पालीवाल ने सभा को सक्रिय बनाने की भूमिका अदा की थी अंग्रेज पुलिस ने इन दोनों को सभा से बाहर निकाल दिया केवल सभा से ही नहीं बल्कि स्कूल से भी निकाले जाने की कार्यवाही की गई परंतु बाद में 5-5 रुपए जुर्माना किया गया। रामकृष्ण पालीवाल ने एक साप्ताहिक अखबार खंडवा से निकालना शुरू किया जिसका नाम रखा 'अंकुश' यह नाम बड़ा प्रतीकात्मक था। जिसमें अंग्रेजी सत्ता पर वैचारिक अंकुश रखने की घोषणा थी। इसी समय खंडवा के समाजसेवी वकील कालूराम गंगराड़े ने 7 अप्रैल 1913 को मासिक पत्रिका 'प्रभा' का प्रकाशन किया जिसका संपादन पंडित माखनलाल चतुर्वेदी करते थे। उल्लेखनीय है कि माखनलाल का प्रसिद्ध साप्ताहिक कर्मवीर 17 जनवरी 1920 को जबलपुर से प्रकाशित हुआ था। जिसे 1925 में माखनलाल जी खंडवा लाए थे जो 4 अप्रैल 1925 में खंडवा से प्रारंभ हुआ था। इसी क्रम में स्मरणीय है खंडवा के श्री सिद्धनाथ माधव आगरकर का नाम जिन्होंने 1923 में साप्ताहिक 'मध्य भारत' नाम का अखबार निकाला यह तेजस्वी अखबार अंग्रेजों की आंख की किरकिरी बन गया। खंडवा के प्रभागचंद्र शर्मा के संपादन में 'आगामी कल' साप्ताहिक पत्र का प्रकाशन खंडवा के जवाहरगंज स्थित आगामी कल की प्रेस से निकाला। श्री प्रभागचन्द्र शर्मा, सिद्धनाथ माधव एवं श्री रामकृष्ण पालीवाल ये तीन नाम ऐसे हैं जिनके वैचारिक योगदान को याद करना आवश्यक है, क्योंकि अंग्रेजी शासनकाल में अंग्रेजी नीतियों का विरोध करने वाले विचारों को प्रेरित करने वाले अखबार निकालना सरल कार्य नहीं था। जिस प्रकार माखनलाल जी के कर्मवीर को याद किया जाता हैए उसी प्रकार श्री प्रभाग चन्द्र शर्माए श्री सिद्धनाथ श्री पालीवाल के योगदान को भी याद किया जाना चाहिए। आज जिन्हें प्रदेश ने बिसरा दिया है।

खंडवा के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों में माखनलाल जी, रामकृष्ण उपाध्याय, जानकी प्रसाद मिश्र के अलावा लक्ष्मण सिंह चौहान भी थे जो सुप्रसिद्ध कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान के पति थे, सन् 1923 में नागपुर के झंडा सत्याग्रह आंदोलन में भाग लेने का निर्णय किया खंडवा से 40 सत्याग्रही आंदोलन में भाग लेने के लिए नागपुर रवाना हुए इस आंदोलन में सुभद्रा जी राष्ट्रीय ध्वज लेकर नागपुर के सीताबर्डी किले पर चढ़ रही थी कि एक अंग्रेज ने उन्हें धक्का देकर नीचे गिरा दिया। सुभद्रा जी इसमें बेहोश हो गई। किले के रक्षकों ने सत्याग्रहियों पर अत्याचार किया उस समय घोड़े दौड़ाना, लाठीचार्ज करना बंदूकों के वट से मारना आम बात थी। आंदोलन में लक्ष्मण जी चौहान एवं सुभद्रा जी का साहस देखने योग्य था। 1928 में विदेशी वस्त्रों की होली जलाने का आंदोलन शुरू हुआ, शराब की दुकानों पर धरना देने का कार्यक्रम भी तेजी से चालू हुआ जिसमें खंडवा से रायचंद नागड़ा, डॉ. जगन्नाथ महोदय, शिवप्रसाद दलाल आदि की भूमिका महत्वपूर्ण थी।

11 अप्रैल 1930 को खंडवा में नमक कानून तोड़ने के लिए माखनलाल जी की अध्यक्षता में रायचंद नागड़ा, सिद्धनाथ माधव, जगन्नाथ सोनी, बाबूलाल वर्मा, ताराचंद कर्वे, सुकुमार पगारे, अमोलकचंद जैन, दिनकरराव बरौले थे, जिन्होंने स्वतंत्रता संग्राम की शुरुआत की। जगह-जगह नमक कानून तोड़ने का आंदोलन प्रारंभ हो गया था। हरदा में भी नमक सत्याग्रह कैसे किया जाए सत्याग्रहियों के लिए यह समस्या थी हरदा तहसील में काया गांव के पास खारी मिट्टी है। यह जानकारी मिलते ही श्री सीताराम दीक्षित अपने साथ दो नौजवान साथी श्री महेश दत्त मिश्रा रमाशंकर को लेकर काया गांव की ओर चल पड़े। 2 मई 1930 की घटना थी भीषण गर्मी थी गांव के बाद एक झोपड़ी में कहीं से पानी मिला पानी पिया और काया गांव की ओर चल दिए। मिट्टी की तलाश में एक जगह खारी मिट्टी मिली उसे कपड़े में बांधी और हरदा की ओर लौटें। रात्रि में घंटाघर चौक पर आमसभा हुई और उस मिट्टी को कढ़ाई में पानी डालकर उबाला गया 4.5 तोला नमक खारी मिट्टी से तैयार हुआ। नमक सत्याग्रह का नेतृत्व सीताराम दीक्षित ने किया । 1930 में सत्याग्रहियों से मिट्टी तुड़वाना, चक्की पीसवाना जैसे काम लिया जाता था।

12 अगस्त 1930 को राजा देवधर नाम के सत्याग्रही ने शासकीय विद्यालय खंडवा के भवन पर अंग्रेजों का यूनियन जैक झंडा उतार कर तिरंगा फहरा दिया था तब अंग्रेज सिपाहियों ने इसे उतार दिया तो बड़ा रोष फैल गया तब सुरेंद्र महोदय, सुकुमार पगारे, देवीदयाल मिश्र, रतीलाल नागडा, तत्कालीन एसडीएम श्री चौंवल के पुत्र श्री बलवंत राव चौवल ने फिर से यूनियन जैक उतारकर तिरंगा फहराया। विद्यार्थियों ने ध्वज की सलामी दी झंडा गीत गाया। विद्यार्थियों को भड़काने के आरोप में रायचंद नागड़ा को गिरफ्तार किया गया।

ऐसी ही एक घटना बुरहानपुर के रॉबर्टसन हाईस्कूल की थी जिसका संचालन नगर पालिका परिषद कर रही थी। अब वह हाई स्कूल कहलाता है। 1942 में यह स्वतंत्रता संग्राम का प्रमुख केंद्र बन गया। यहां के युवा छात्र मनोहर दास ढाकोर को उस स्वतंत्रता संग्राम का प्रथम सेनानी कहना होगा उन्होंने भी यूनियन जैक का झंडा उतारकर तिरंगा लहराया छात्रों को स्कूल जाने से रोका, जुलूस निकाला उनके साथ थे विष्णु प्रसाद खन्ना और केशव राव तिरुलकर। पुलिस द्वारा जुलूस रोका गया धीरे.धीरे स्कूल का मैदान युद्ध स्थल बन गया था। चार से छह माह तक आंदोलन जारी रहा उनके प्रमुख स्वतंत्रता सेनानी रामदत्त ज्ञानी, श्री लक्ष्मी दास मास्टर, पुरुषोत्तम दास पाटीदार, सूरज प्रसाद मिश्र, श्री मोहन चंद्र, धन्नालाल शाह उनकी पत्नी कमला बेन शाह। पंधाना के सत्याग्रहीयों में श्री प्यारे लाल, कन्हैया लाल निवासी रुस्तमपुर बोरगांव के सेठ अमरचंद गंगराड़े पं. तापीराम जी शुक्ल, पंधाना के ग्राम पंचायत के सेनेटरी इंस्पेक्टर डोंगरगांव के श्री लक्ष्मी नारायण अग्रवाल के नाम प्रमुख हैं।

इस प्रकार खंडवा जिले के ज्ञात अज्ञात स्वाधीनता संग्राम के नायकों का स्मरण हुए हमें याद रखना चाहिए कि आजादी के आन्दोलन में हर जिले हर गाँव ने अपना योगदान दिया था। आजादी के अमृत महोत्सव की यही सार्थकता है कि हम अपने अपने क्षेत्र के ऐसे सभी नायकों का श्रद्धा पूर्वक स्मरण करें। यही हमारी उनके प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

■


## 'कला समय' पत्रिका के सदस्यता शुल्क में वृद्धि की सूचना

प्रिय पाठकों,

द्वैमासिक 'कला समय' एक अव्यावसायिक कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक सांस्कृतिक पत्रिका है, जो विगत 25 वर्षों से अविकल रूप से कला/साहित्य जगत की सेवा कर रही है। आप इस तथ्य से परिचित हैं कि एक अव्यावसायिक कला-सांस्कृतिक पत्रिका निकालना बड़ा ही दुष्कर और श्रमसाध्य कार्य है। विगत कुछ वर्षों में मुद्रण, टंकण, कागज आदि की लागत में असामान्य बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसे में पत्रिका के नियमित प्रकाशन को आप तक पहुँचाने के लिए ग्राहक सदस्यता शुल्क में (जून-जुलाई 2021) अंक से वृद्धि करना अपरिहार्य हो गया है। सदस्यों से अनुरोध है कि अब वे अपना सदस्यता शुल्क निम्नानुसार भेजकर सहयोग करें। जिन आजीवन (15 वर्षीय) सदस्यों की सदस्यता अवधि के 15 वर्ष पूरे हो चुके हैं, उनसे अनुरोध है कि वे पुन: अपनी आजीवन सदस्यता का नवीनीकरण कराने हेतु 'कला समय' के पक्ष में आजीवन सदस्यता शुल्क भेज कर अनुगृहीत करें।

### संशोधित सदस्यता शुल्क

| | | |
|---|---|---|
| **वार्षिक** | : | 300 (व्यक्तिगत) |
| | | 350 (संस्थागत) |
| **द्वैवार्षिक** | : | 600 (व्यक्तिगत) |
| | | 700 (संस्थागत) |
| **चार वर्ष** | : | 1000 (व्यक्तिगत) |
| | | 1200 (संस्थागत) |
| **आजीवन** | : | 10,000 (व्यक्तिगत) |
| (15 वर्ष के लिए) | : | 12,000 (संस्थागत) |

**(कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें)**

**विशेष :** 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

आलेख

# स्वतंत्रता आंदोलन की सहयोगी : मुजरेवालियाँ

डॉ. विभा सिंह

16 से 20 शताब्दी की तवायफ , बाईजी, गायिका और नृत्यांगनाओं की जिंदगी के पन्ने पलटें तो पता चलता है कि ये कोठे पर अंग्रेज सिपाहियों के लिए गाने जरूर गाती थीं लेकिन स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों संग बैठकें भी करती थीं। कहा जाता है कि 1 जून 1857 को कानपुर में क्रांतिकारियों की एक बैठक में नाना साहब, तात्या टोपे के साथ सूबेदार टीका सिंह, शमसुद्दीन खां और अजीमुल्ला खां के साथ अजीजन बाई भी शामिल हुई थी। यहीं इसी बैठकी में हाथ में गंगाजल लेकर इन सबने अंग्रेजों की हुकूमत को जड़ से उखाड़ फेंकने का संकल्प लिया था। अजीजन बाई एक नर्तकी थीं परंतु सिपाहियों से उन्हें बेहद स्नेह था और सिपाहियों को भी उस पर पूरा भरोसा था। इसी तरह बेगम समरु की भी कहानी काफी प्रेरक है। अमृतलाल नागर की किताब 'ये कोठेवालियां' में तवायफों की जिंदगी को नजदीक से जाना जा सकता है।

गाँधी जी की भक्त विद्याधरी देवी भी थीं, जिन्होंने 1930 में गाँधी के विदेशी बहिष्कार आंदोलन में सक्रिय भूमिका निभाई और उनकी प्रेरणा से 'तवायफसंघ' की स्थापना की। ये 'तवायफ संघ' स्वतंत्रता संग्रामियों को हर संभव मदद करता। विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार इन्होंने सर्वप्रथम किया तथा अन्य गायिकाओं से भी वो इसके लिए आग्रह करती थी। गांधी के स्वदेशी आंदोलन में विद्याधारीबाई, हुस्नाबाई ने बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। लेकिन स्वतंत्रता संग्राम से जुड़ी किताबों कही इनका ज़िक्र नहीं मिलता है।

इनके उत्सर्गमय जीवन और संगीतसेवा के बाद भी इनकी बेहद नगण्य चर्चा ही मिलती है। जब एक राष्ट्र की परिकल्पना हुई तो तवायफों, बाईजी का जिक्र जरूर होना चाहिए। क्योंकि ये वो औरतें हैं, जिन्होंने न केवल अपने नृत्य. गायन से संगीत की एक परंपरा को कायम किया बल्कि समयानुसार स्वयं को ढालकर भक्ति कलाम द्वारा देशभक्ति की भावनाओं को प्रबल किया। तवायफों में मुस्लिम और हिंदू भी होती थीं लेकिन उनके लिए देश पहले था। 1920 में बनारस गांधी के बनारस दौरे में 26 नवंबर की दोपहर को 20,000 लोगों की एक विशाल भीड़ जमा हुई। गांधी के लिए अज्ञात, तवायफों का एक समूह, विद्याधरी बाई के नेतृत्व में, टाउन हॉल में विशाल सभा का हिस्सा था। इन्होंने समाज की मुख्यधारा से स्वयं को तथा अन्य गायिकाओं को भी जोड़ने का प्रयास किया। साथ ही संगीत को सम्मानित मंच तक ले जाने का महनीय कार्य किया।

बीसवीं सदी के तीसरे दशक में गांधी जी द्वारा महिलाओं से देश की आज़ादी के लिए घरों की चारदीवारी से बाहर आकर उनके साथ जुड़ने के आह्वान और राममोहन रॉय और ईश्वरचंद विद्यासागर जैसे तत्कालीन समाज-सुधारक ने वेश्यावर्ग की सामाजिक स्थिति जैसे विषयों गंभीर रुचि लिया। धीमे-धीमे उस पूर्वाग्रहग्रस्त और जकड़न भरे माहौल में ब्रह्मसमाज, आर्यसमाज, एवम् प्रार्थनासमाज सरीखे सुधार-आंदोलनों ने स्त्री शिक्षा तथा वेश्याओं की दशा को लेकर एक उदार नई मानसिकता के बीज बोना शुरू किया।

**गौहर जान से पहले भी रिकॉर्ड हुए थे ..**

गायिका गौहर जान को कौन भूल सकता है जिन्होंने लिखा कि 'मदीना में हजरत ने मनाई होली'। यदि इन गानों और इनके अंदर छिपे संदेशों को देखें तो इनके भीतर का देश प्रेम दिखाई पड़ता है। इस संदर्भ में मृणाल पांडे ने एक घटना का जिक्र किया है जिसके अनुसार –

''सन् 1920 में जब गांधी कलकत्ता में स्वराज फंड के लिए चंदा जुटा रहे थे तब उन्होंने गौहर जान को बुलवाकर उनसे भी अपने हुनर के माध्यम से आंदोलन के लिए चंदा जुटाने की अपील की। गौहर जान चकित और खुश दोनों हुई। गौहर ने बापू से ये आश्वासन ले लिया वह एक खास मुजरा करेंगी जिसका सारा फंड को स्वराज को जाएगा और गांधी जी भी वहां आएंगे। बापू राजी भी हो गए। किंतु ऐन वक्त आ न सके। कहते हैं उस कार्यक्रम में 24000/- की आमदनी हुई थी जो बड़ी रकम थी।

गौहर जान रूठी थीं। गांधी जी ने जब चंदा हेतु मौलाना शौकत अली को उनके घर भेजा तो दुनिया देख चुकी गौहर ने उनको कुल 12 हजार रुपए यह कहते हुए थमा, की बापू ने अपना आधा ही वचन निभाया सो वे भी आधा ही चंदा दे रही है।''

गौहर जान ने कबीर को गाया :

**मैं केहि समझाऊँ सब जग अंधा,**
**एक दूइ होय उनहीं समझाउँ,**
**सबहि भुलाना पेट का धंधा।**

(मृणाल पाण्डे, ध्वनियों के आलोक में स्त्री, पृ . 60)

शुरुआती दौर में गीत-संगीत की जितनी भी रिकॉर्डिंग हुई, उनमें गौहर जान, छप्पन छुरी, रसूलन, मुन्नी बेगम, अख्तरीबाई फैजाबादी, रसूलन बाई, धेला बाई, चवन्नी बाई, सिद्धेश्वरी, विद्याबाई जैसी तवायफ़ों ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। इस संबंध में आम

धारणा है कि पहला रिकॉर्ड गौहर जान की आवाज़ में था किंतु अमरनाथ शर्मा के अनुसार गौहर जान से पहले भी रिकॉर्ड हुए थे। उनका कहना है कि.. ''आम धारणा यह है कि गौहर जान की रिकॉर्डिंग पहली रिकॉर्डिंग है, लेकिन ऐसा नही है। जब मिस्टर गैसवर्ग इंडिया में आए और उन्होंने रिकॉर्डिंग शुरू की तो सबसे पहले उन्होंने शशि एण्ड फनी बाला को रिकॉर्ड किया। ये दो नॉच गर्ल्स थीं, जी 15-16 साल की थीं और कलकत्ता थियेटर में काम करती थीं। उनकी रिकॉर्डिंग पहली रिकॉर्डिंग है। अगली रिकॉर्डिंग जो हुई वह शेहला बाई की है। हरिमति, एक फीमेल आर्टिस्ट थीं, बंगाल की थीं, फिर उनका रिकॉर्ड हुआ। गौहर जान की रिकॉर्डिंग तेरह भाषाओं में दो दिनों के रिकॉर्डिंग सेशन में हुई।'' छोटी-छोटी मुलाकातें, शरद दत्त, संपादक-अभिषेक कश्यप, पृ .457)

**नृत्यांगनाएं भरती थीं सबसे अधिक टैक्स..**

व्यापारिक दृष्टिकोण से, आर्थिक दृष्टिकोण से भी इन गायिकाओं ने अपना महत्वपूर्ण दिया था। 1862 में जब सर्वाधिक इनकम टैक्स और प्रॉपर्टी टैक्स देने वालों की श्रेणी बनाई गई तो यह जानकर हैरानी हुई कि आभूषण विक्रेता दूसरे नंबर पर थे, जबकि पहले नंबर पर नृत्यांगनाएं थीं। तीसरे नंबर पर इनका नृत्य.संगीत देखने वाले दर्शक होते थे। ये शहरी, ग्रामीण इलाकों में मकान समेत फैक्ट्रियों की मालकिन भी होती थीं। यही नहीं कई तवायफ़ों का जीवट ऐसा था कि वे राजे-रजवाड़ों के खत्म होने के बाद भी अपने कोठों पर कई ललित कलाओं को संरक्षण देती रहीं।

अत: केवल तवायफ, नर्तकी, गवनहारियां कह कर इनके योगदान को कमतर नहीं आंका जा सकता है।

# कला समय

**कला, संस्कृति, साहित्य एवं समसामयिक द्वैमासिक पत्रिका**

**के सदस्य बने**

मैं ..... कला समय पत्रिका का ..... एक वर्ष : 300/- रूपये, दो वर्ष : 600/- रूपये, चार वर्ष : 1000/- रूपये, आजीवन : 10000/- रूपये का सदस्य बनना चाहता/चाहती हूँ। पत्रिका का शुल्क रूपये ..... ऑनलाइन/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर ..... दिनांक ..... संलग्न है।

नाम : .....

पता : .....

.....

पिन : ..... मो.: .....

**हस्ताक्षर**

**सदस्यता सहयोग राशि:**

| | | | |
|---|---|---|---|
| वार्षिक | : | 300 ( व्यक्तिगत ) | 350 ( संस्थागत ) |
| द्वैवार्षिक | : | 600 ( व्यक्तिगत ) | 700 ( संस्थागत ) |
| चार वर्ष | : | 1000 ( व्यक्तिगत ) | 1200 ( संस्थागत ) |
| आजीवन | : | 10,000 ( व्यक्तिगत ) | 12000 ( संस्थागत ) |

( 15 वर्ष के लिए )

( कृपया सदस्यता शुल्क- ऑनलाईन/ड्राफ्ट/मनीआर्डर द्वारा 'कला समय' के नाम पर उक्त पते पर भेजें )

विशेष : 'कला समय' की प्रतियाँ साधारण डाक/रजिस्टर्ड बुक-पोस्ट से भेजी जाती हैं यदि कोई महानुभाव रजिस्टर्ड पोस्ट से पत्रिका मंगवाना चाहते हैं तो कृपया वार्षिक डाक खर्च 120/- अतिरिक्त भेजने का कष्ट करें।

**कार्यालय सम्पर्क :**

**संपादकीय एवं सदस्यता सहयोग**

जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर,
अरेरा कॉलोनी, भोपाल (म.प्र.)- 462016
फोन : 0755-2562294, मो.-94256 78058
ई-मेल : kalasamaymagazine@gmail.com
वेबसाइट : **www.kalasamaymagazine.com**

**ऑनलाइन सदस्यता सहयोग सुविधा :**

**'कला समय' का बैंक खाता विवरण**

पंजाब नैशनल बैंक की शाखा अरेरा कॉलोनी भोपाल, म.प्र. **(IFSC : PUNB0093210)** के नाम देय, खाता संख्या **A/No. 09321011000775** में ऑनलाइन राशि जमा कराने के बाद रसीद की फोटोकॉपी अपने पूर्ण पते के साथ हमें भेज दें।

- कृपया सदस्यता शुल्क 'कला समय' के नाम भेजें।
- सदस्यता शुल्क प्राप्त होने के बाद अगले अंक से पत्रिका भेजना प्रारम्भ की जावेगी।
- सदस्यता शुल्क निम्न पते पर भेजे:- जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल (म.प्र.) 462016

-प्रबंध संपादक

संस्मरण

# स्वतंत्रता सेनानी सेठ मुरलीधर जी पोद्दार

डॉ. पुष्पारानी गर्ग

मेरे बाबूजी हाथरस के सेठ मुरलीधर जी पोद्दार का जन्म 24 अप्रैल सन् 1912 को दिल्ली के एक गांव मुहीउद्दीनपुर में लाला रामसरन दासजी अग्रवाल के यहाँ हुआ। वे तेरह वर्ष की आयु में हाथरस के सेठ टीकारामजी पोद्दार के यहाँ गोद आए थे । उस समय घर में टीकाराम जी की मृत्यु हो चुकी थी। घर में सिर्फ माँ और एक छोटी बहन थी।

बात उन दिनों की है जब असहयोग आंदोलन जोरों पर था। गाँधीजी के नेतृत्व में पूरे देश में आजादी के दीवाने अपना सब कुछ दाँव पर लगाकर गिरफ्तारी दे रहे थे। उसी समय हाथरस के सेठ मुरलीधर पोद्दार भी इस असहयोग आंदोलन में कई बार जेल जा चुके थे। वे खादी की धोती, कुर्ता तथा सदरी (जैकेट) पहनते थे। सिर पर सफेद गांधी टोपी लगाते थे। सेठ मुरलीधर पोद्दार भी 16-17 वर्ष की आयु से ही इस असहयोग आंदोलन में शरीक हो गए थे। सरकार इन आंदोलनकारियों को तरह-तरह से कष्ट देती, उन पर लाठियाँ बरसाती पर उनका जोश कम न होकर बढ़ता ही जाता। चारों ओर गूंजता था: ''अंग्रेजों भारत छोड़ो, स्वराज हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है।'' की गूँज सुनाई देती। सेठ मुरलीधर जी पोद्दार पर क्रांतिकारियों का भी बहुत प्रभाव था। वे अपने भाषणों में सरकार के विरोध में बोलते थे, वे अंग्रेज सरकार द्वारा किए गए अत्याचारों व जुल्मों का वर्णन करते। वे 'इन्कलाब जिंदाबाद', 'भारत माता की जय' हम आज़ादी लेकर रहेंगे, बहुत जोश के साथ नारा लगाते। उनकी आवाज सुनकर सभा में से भी यही जोशपूर्ण आवाज़ उठती और मुरलीधर जी गिरफ्तार कर लिए जाते उनके ऊपर सरकार की विशेष नजर रहती कि ये लड़का कोई क्रांतिकारी कदम तो नहीं उठा रहा। ऐसे में जेलर वगैरह भी बहुत चौंकन्ने रहते।

सेठ मुरलीधर जी पोद्दार छोटी उम्र में ही हाथरस कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष होते थे। वे बड़ी-बड़ी सभाओं में हाथरस में, हाथरस से बाहर अलीगढ़ में आगरा, मुरसान, सासनी में भाषण देते। हाथरस में एक 'बैनीराम का बगीचा है'। यह बगीचा मुरलीधर जी पोद्दार के बाबा साहब सेठ बैनीराम जी पोद्दार ने बनवाया है। इस बगीचे के एक गोल कमरे में बाबूजी राजनीतिक बैठकें करते। गुप्त मंत्रणाएँ होतीं, महत्वपूर्ण निर्णय लिए जाते, कार्यक्रमों की रूपरेखा बनती। देश के अनेक राजनेता श्री गोविंद बल्लभ पंत, मौलाना अब्दुल कलाम आजाद, श्री कैलाश चंद्र काटजू, श्री कृष्णदत्त पालीवाल, श्री जगजीवन राम, श्री एम.पी. सिंघल, आचार्य जुगल किशोर रावत, आचार्य कृपलानी आदि समय-समय पर आते। गोल कमरे में बैठकें करते जिनका बाहर किसी को पता नहीं लगता था। कार्यक्रम तय करके स्थान-स्थान पर सभाएँ करते, गिरफ्तार हो जाते। बाबूजी जब भी जेल जाते, हमारी माँ से कह जाते, अब मेरे लौटने की आशा मत करना। छह महीने, ग्यारह महीने, डेढ़ साल जेल में काट कर बाबूजी छूटकर घर आ जाते। बाबूजी जब भी घर आते, उनके साथी असली सुनहरी गोटे के हार पहनाकर उनका स्वागत करते। 'इन्कलाब जिंदाबाद', 'भारत माता की जय' के नारों से हाल गूंज उठता। उनके स्वागत का वह भव्य दृश्य आज भी मेरी आँखों में तैरता है।

बाबूजी वे हार पहने हुए मुस्कुराते हुए ऊपर के कमरे में तो हमें वे बहुत सुंदर लगते। मैं 4 वर्ष की रही होऊँगी लेकिन वह दृश्य तस्वीर जैसा मेरी आँखों में आज भी ताजा है। आज़ादी के दीवाने भोर अँधेरे में प्रभात फेरी निकालते, गीत गाते-झंडा ऊँचा रहे हमारा, विजयी विश्व तिरंगा प्यारा कुछ दिनों में बाबूजी फिर चले जाते। मैं बच्ची यह नहीं जानती थी कि बाबूजी जेल क्यों जाते हैं। लेकिन ये तब की स्मृतियाँ आज मुझे रोमांचित करती हैं और अनूठे जोश से भर देती है।

जेल में बाबूजी अपने साथ रहने वाले राजनैतिक कैदियों का बहुत ध्यान रखते और छोटे स्तर के राजनैतिक कैदियों की स्थिति पर पूरी नजर रखते थे। एक बार उन्हें पता चला कि इन कैदियों को गुजारे के लिए सरकार की तरफ से रोज चवन्नी मिलती

है, जब की बाबूजी को एक रूपया मिलता था। बाबूजी ने हाथरस के एक पचौरी साहब से बात की कि इन सभी कैदियों के साथ एक सा व्यवहार होना चाहिए। बाबू जी हाथरस के बहुत बड़े जमींदार थे इसलिए उन्हें बड़ा आदमी मानकर एक रूपया दिया जाता था। बाबूजी और पचौरी साहब ने मिलकर एक पत्र जेलर के नाम लिखा कि हमारे सभी कैदियों को भी खर्चे के लिए एक रूपया दिया जाना चाहिए। इस योजना को 'पौद्दार पचौरी योजना' नाम दिया गया। पत्र

जेलर को दिया गया। जेलर ने अधिकारियों से बात की। बाबूजी की योजना स्वीकृत नहीं हुई। तब बाबूजी ने भी खुद एक रूपया लेना अस्वीकार कर दिया। वे भी अन्य कैदियों की सब के समान चवन्नी ही लेने लगे। बाबूजी स्वयं शास्त्र के ज्ञाता और योग आयुर्वेदिक प्राकृतिक चिकित्सा के भी बहुत अच्छे जानकार थे। वे जेल में कैदियों को योग सिखाते तकलीफ होने पर प्राकृतिक चिकित्सा करते। यह सब लिखने का तात्पर्य है कि आजादी की लड़ाई में वे अपने साथियों का तरह-तरह से साथ देते थे। मुरलीधरजी पोद्दार स्वयं सत्याग्रही थे, लेकिन वे छिप-छिपकर क्रांतिकारियों की मदद भी करते थे। उनकी छोटी बहन सुरजो बाई भी कैदियों की व क्रांतिकारियों की छिप-छिप कर सहायता करती थी। वे भी खादी पहनती थी। हाथरस के पास एक गांव है मुरसान, यहाँ का राजा महेंद्र प्रताप सिंह बड़े क्रांतिकारी थे। वे बाबूजी के अच्छे मित्र थे। महेंद्र प्रताप सिंह के सूत्र सुभाषचंद्र बोस से जुड़े थे। बाबूजी की इच्छा थी कि सुभाष बाबू को हाथरस बुलाकर एक बड़ी सभा में उनका सम्मान किया जाए। राजा महेंद्र प्रताप सिंह ने उन्हें प्रयत्न करके हाथरस बुला लिया। बाबूजी उन्हें बेनीराम के बगीचे में ले गए। अपनी बग्गी (घोड़ा गाड़ी) में बिठाकर सभा स्थल पर लाए। सभा में बाबूजी ने उनके स्वागत में भाषण दिया। भीड़ ने सुभाष बाबू और बाबूजी के खूब जयकारे लगाए। सुभाष ने बड़ा जोशीला भाषण दिया। फिर वही मंच पर बाबूजी ने सुभाष चंद्र जी को उनका आदमकद चित्र भेंट किया जो उन्होंने पहले ही बनवा कर रखा था। सुभाष चंद्रजी ने हस्ताक्षर करके उस चित्र की नीलामी बोल दी। राजा महेन्द्र प्रतापसिंह ने तब वह चित्र पाँचसौ रूपये में खरीद लिया। वह चित्र आज भी उनके उत्तराधिकारियों के पास होगा।

पंडित दौलत राम जी शर्मा जो राज घाट सदा गंगा में नाव पर रहते थे उनसे बाबूजी एक दिन मिलने गए। उनसे मुलाकात के दौरान अपना परिचय दिया। नाम व परिचय सुनकर पंडित दौलतराम शर्मा जो उस समय 90 वर्ष के थे उनके आगे बैठ गए प्रणाम की मुद्रा में। बाबूजी ने उन्हें उठाया। फिर वे भी पंडित जी के आगे झुकने लगे तब पंडित जी ने उन्हें हृदय से लगा लिया और कहने लगे लल्ला तू सच्ची बहुत बड़ौ है। तू खूब उन्नति कर। अरे लल्ला मैं तो अपनी मुक्ति के लिए गंगा में रहूँ तू तो देश की आजादी के लिए जेल जावै। आखिर वह दिन आ ही गया 15 अगस्त 1947 आजादी का दिन। अंग्रेज सरकार ने भारत को आधी रात में आजाद करने की घोषणा की। तब पूरे देश में अभूतपूर्व उत्साह आनंद छा गया। उस आनंद ने मानो आकाश में एक शब्द लिखा आजादी। जोश, उमंग, उत्साह से भरे लोग घर पर आए बाबूजी को लेने। उन्हें बड़े सम्मान के साथ आगे करके अलीगढ़ सभा स्थल पर ले गए। बाबूजी ने उस दिन स्वयं देश के आजादी का प्रतीक तिरंगा झंडा प्रथम बार अलीगढ़ में फहराया । फिर उन्हें 21 तोपों की सलामी दी गई। इस महोत्सव में डी.एम. (डिस्ट्रिक्ट मजिस्ट्रेट) श्री गोविंद प्रसाद जी भी उपस्थित थे। यही डी.एम. कभी बाबूजी को हथकड़ी पहनाकर जेल में ले जाते थे और आज बाबू जी के सम्मान में खड़े थे ।

ऐसे भाग्यशाली भक्त स्वतन्त्रता सेनानी सेठ मुरलीधर पोद्दार 90 वर्ष तक जिए। सन् 2001 में 19 जुलाई को शरीर त्याग दिया। मेरे बाबूजी उनका अंतिम संस्कार वृंदावन में किया गया। उनकी अंतिम यात्रा में हाथरस से मजिस्ट्रेट मेयर आदि अपना लश्कर लेकर पहुँचे। बाबूजी को तिरंगा उढ़ाया। 21 गोले दागकर उन्हें अंतिम सम्मान प्रदान किया। फिर उनकी अंत्येष्टि की गई। इस प्रकार एक स्वतंत्रता सेनानी, एक ज्योतिषी, योगाचार्य, भगवतभक्त मेरे बाबूजी की जीवन गाथा को विराम लग गया।

– रो हाउस 45, संजना पार्क, बिचौली मर्दाना,
इन्दौर (म.प्र.)

■

# सीरियाई कवि, निबंधकार, अनुवादक और आलोचक अली अहमद सईद एस्बर की कविता

विश्व कविता में आज विख्यात आधुनिक सीरियाई कवि, निबंधकार, अनुवादक और आलोचक अली अहमद सईद एस्बर (जन्म1930) जिन्हें अदब की दुनिया में उनके उपनाम अदुनिस के नाम से भी जाना जाता है। प्रस्तुत है अदुनिस की दो महत्वपूर्ण कविताओं का छायानुवाद ।

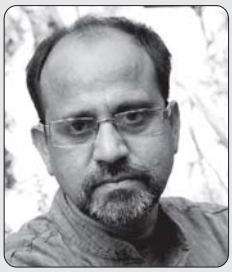

**अनुवाद : मणि मोहन**

प्रो. मणि मोहन अनुवाद के क्षेत्र में लंबे समय से सक्रिय हैं। अनुवाद के अलावा वे समकालीन हिंदी कविता के समर्थ कवि भी है। अनुवाद के माध्यम से वे हमें विश्व साहित्य की विरासत और हलचल से अवगत कराते रहते हैं।
सम्प्रतिः शा. स्नातकोत्तर महाविद्यालय गंज बासौदा में अंग्रेजी के प्राध्यापक। मो.- 09425150346

रेखांकन : मनोहर काजल

## बचपन का उत्सव मनाते हुए

यहाँ तक कि हवा भी
गाड़ी बनना चाहती है
जिसे तितलियां धका रही हों।

मुझे याद है पागलपन
जो टिका हुआ था ज़ेहन के तकिए पर
पहली बार।
मैं अपनी देह से बात कर रहा था तब
और मेरी देह एक विचार थी
जिसे मैंने लाल रंग से लिखा था।

लाल सूर्य का सबसे खूबसूरत सिंहासन है
और बाकी तमाम रंग
लाल कालीनों पर आराधना करते हैं।

रात एक दूसरी मोमबत्ती है।
हरेक शाख में, एक हाथ है,
हवा में एक संदेश जा रहा है
देह की साँसों से प्रतिध्वनित।

सूर्य कोहरे के कपड़े पहनने की ज़िद करता है
जब भी वह मुझसे मिलता है:
क्या उजाले के द्वारा मुझे डाँटा जा रहा है?

ओह,मेरे अतीत के दिन–
वे अपनी नींद में चला करते थे
और मैं उन पर झुका करता था।

प्रेम और सपने दो कोष्टक हैं।
इन दोनों के बीच मैं अपनी
देह को रखता हूँ
और इस दुनिया की खोज करता हूँ।

अनेक बार
मैंने हवा को घास के पैरों के साथ
उड़ते देखा था
और सड़क को हवा के
पैरों के साथ नृत्य करते।

मेरी इच्छाएं फूल हैं
जो मेरे दिनों को धुंधला कर रहे हैं

बहुत पहले मैं ज़ख्मी हुआ था
बहुत पहले मैंने जान लिया था

कि ज़ख्मों ने मुझे बनाया है।

मैं अभी भी उस बच्चे के पीछे चलता हूँ
जो अब भी मेरे भीतर चल रहा है।
अभी वह खड़ा है रोशनी से बनी सीढ़ियों पर
सुकून के लिए एक कोने को तलाश करता
और रात के चेहरे को फिर से पढ़ने की कोशिश करता।

यदि चाँद एक घर होता,
मेरे पैर उसकी देहरी को छूने से मना कर देते।

वे धूलधूसरित हैं
लिए जा रहे हैं मुझे हवा की ऋतुओं की तरफ।

मैं चलता हूँ,
एक हाथ हवा में,
दूसरे से बालों को सहलाता
जिसकी मैं कल्पना करता हूँ।

कोई सितारा भी तो
एक कंकड़ ही है अंतरिक्ष के मैदान में।

सिर्फ वही
जो जुड़ा है क्षितिज से
नई सड़कों का निर्माण कर सकता है।

यह चाँद, एक बूढ़ा आदमी,
उसकी कुर्सी रात है
और रोशनी उसकी सहारे की छड़ी है ।

मैं उस देह से क्या कहूँ जिसे छोड़ आया हूँ
उस मकान के मलबे में
जहां मैं पैदा हुआ था?
मेरे बचपन को कोई बयान नहीं कर सकता
सिवा उन सितारों के जो उस मकान के ऊपर झिलमिला रहे हैं
और शाम के रस्ते में छोड़ रहे हैं अपने पदचिह्न।

मेरा बचपन अभी भी
जन्म ले रहा है रोशनी की हथेलियों के बीच
जिसका नाम मुझे नहीं पता
और जो मुझे नाम से पुकारता है।

उसने नदी से एक आईना बनाया
और उससे अपने दुःख के बारे में पूछा।
उसने अपने दुःख से बारिश बनाई
और बादलों का अनुसरण किया।

तुम्हारा बचपन एक गाँव है।
तुम उसकी सीमाओं के बाहर कभी नहीं जा पाओगे
इससे फ़र्क नहीं पड़ता
कि तुम कितनी दूर निकल गए।

उसके दिन तालाब हैं
उसकी स्मृतियां तैरती देह हैं।

तुम जो नीचे उतर रहे हो
अतीत के पहाड़ों से,
वापिस कैसे चढ़ सकते हो उन पर,
और फिर जरूरत भी क्या है?

समय एक दरवाजा है
जिसे मैं खोल नहीं सकता।
घिस चुका है मेरा जादू,
सुप्त हो चुके हैं मेरे मंत्र।

मैं एक गाँव में पैदा हुआ था,
छोटा और रहस्यमय, कोख की तरह।
मैंने इसे कभी नहीं छोड़ा।
मुझे किनारों से नहीं समंदर से प्रेम है।

# डॉ. राधेश्याम बन्धु के नवगीत

**डॉ. राधेश्याम बन्धु**

जन्म – 10 जुलाई 1940

प्रकाशन – बरसो रे, जनपथ, नवगीत, एक और तथागत,

सम्मान – उ.प्र. निराला साहित्य परिषद। पुरस्कार : एक और तथागत के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री द्वारा जयशंकर प्रसाद पुरस्कार एवं हिन्दी अकादमी दिल्ली द्वारा साहित्यिक कृति सम्मान।संपर्क – बी–3 /163, यमुना विहार, दिल्ली–110053

मो.: 9868444666

## प्यार की टहनी झुलसती है

जेठ की तपती दुपहरी में,
प्यार की टहनी झुलसती है,
घूंट भर जल के लिए कब से,
प्यास नंगे पांव चलती है ?

गर्म लू आतंकवादी सी
बस्तियों के प्राण है हरती,
एक छोटी सी मजूरी में
भूख भी अब आग सी लगती,

चिलचिलाती धूप में फिर–फिर,
जिन्दगी नित बस पकड़ती है,

रेखांकन : मनोहर काजल

नदी नाले, घाट हैं प्यासे,
टोंटियां जलहीन हैं सोतीं,
कुर्सियां हैं नशे में खोयी
झुग्गियां पानी बिना रोतीं,
सूखती हैं रोज ही फसलें,
फाइलों में नहर बहती है,

रोज मुन्ना कह रहा पापा,
शहर से अब नीर ही ला दो,
गांव का जल हो गया गंदला
एक मीठा कूप खुदवा दो,
आज पानी भी बिकाऊ है,
अब न नदिया प्यास हरती है,

घूंट भर जल के लिए कबसे,
प्यास नंगे पांव चलती है।

## नदियां क्यों चुप हैं ?

जब सारा जल जहर
हो रहा, नदियों क्यों चुप हैं ?
जब यमुना का अर्थ
खो रहा, नदियां क्यों चुप हैं ?

चट्टानों से लड़लड़कर जो
बढ़ती रही नदी,
हर बंजर की प्यास बुझाती
बहती रही नदी,
जब प्यासा हर घाट
रो रहा, नदियां क्यों चुप हैं ?
ज्यों – ज्यों शहर अमीर हो रहे
नदियां हुई गरीब,
जायें कहां मछलियां प्यासी
फेंके जाल रकीब ?

जब गंगाजल गटर
ढो रहा, नदियां क्यों चुप हैं ?

कैसा जुल्म किया दादी सी
नदियां सूख गयीं,
बेटों की घातों से
गंगा मैया रूठ गयीं,

जब माझी ही रेत
बो रहा, नदियां क्यों चुप हैं ?

■

# नारायण श्रीवास्तव की कविताएँ

**नारायण श्रीवास्तव**

जन्म – 1 अगस्त 1952

जन्म स्थान –

कनवास, तहसील – गाडरवारा जिला – नरसिंहपुर ( म.प्र. )

प्रकाशन –

जिज्ञासा शेष नहीं, कविताएँ तुम्हारी जरूरत नहीं

संपर्क –

222, ''सृजन'' साकेत नगर, करेली ( म.प्र. ) 487221

मो.: 9425815933

## अब चिट्ठी नहीं लिखते

हमने बाँचे हैं
आदि मानव के लिखे पत्र
और जाँचे हैं
अपने होने न होने के अर्थ,
तब से आज तक
हम पढ़ते आए हैं।
किसी न किसी की
संकलित चिट्ठी
जो बोलती हैं सबसे
सुनती है सबकी।
मुझे याद आती हैं।
कठोर कारागार में लिखी गई
अपने पूर्वजों की वे चिट्ठियाँ
जिनमें लिखे होते
मुक्ति-यज्ञ के बीजमंत्र
तो उत्सवों के आयोजनों की
होती पुरजोर योजनाएँ ।

और यहाँ
तमाम रिश्ते परस्पर
खोजखबर पूछते लिखकर
एक–एक शब्द तौलकर
उतारते पत्र में
जो आज भी
प्यासे को पानी, भूखे को भोजन
थके को राहत
मरते को जीवन और अँधेरों में
प्रकाश पुंज लगते हैं।

वाह ! कितना भला होता है
चिट्ठियाँ लिखना, और सहेजना।

आज रिश्ते
अब चिट्ठी नहीं लिखते
कभी नहीं दिखते
भाव मग्न शब्दों में
बल्कि खोते जाते हैं
दिन प्रति दिन केवल
आधुनिक उपलब्धियों की
महामाया में ।

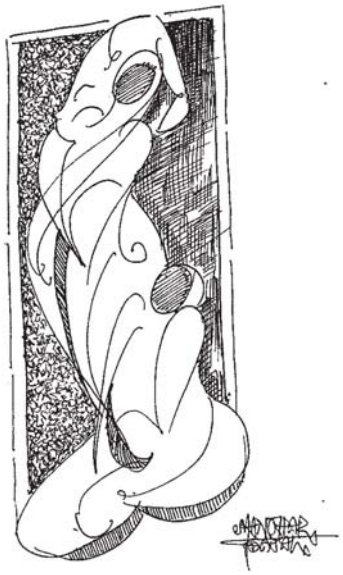

रेखांकन : मनोहर काजल

ऐसे में–
कौन समझायेगा कल ?
सूर्य की आँच,
वायु का स्वरूप,
झरने की कल–कल,
चिड़ियों का चहकना,
और रिश्तों की अमृतधार।

## तुमने कहा

तुमने कहा–
कोई जादूगर
बच्चों के बीच आए
उनका मन बहलाए।
इस बात पर
सहमति जताई सभी ने।
बच्चे भी सोचने लगे

कैसे सीखें
मीड़ की आँखों में
धूल झौंककर
एक सिक्का–दो करना

तुमने कहा–
कोई रुपहले पर्दे का कलाकार
बच्चों के बीच
अपने अनुभव सुनाए
सभी ने ध्वनिमत से
पारित किया प्रस्ताव
बच्चे भी सोचने लगे

कैसे सीखें
ढुशिम–दुशिम और
सुपर मेन की तरह
आकाश में तैरना

तुमने कहा–
बच्चों के बीच
राजपथ से कोई आए
अपनी विकास यात्रा सुनाए।

सभी ने तालियाँ बजाकर
स्वागत किया सुझाव का
बच्चे भी सोचने लगे

■

ग़ज़ल

# विज्ञान व्रत की ग़ज़लें

**विज्ञान व्रत**

जन्मतिथि - 17 अगस्त 1943
जन्मस्थान - तेड़ा मेरठ( उ.प्र. )
प्रकाशन - बाहर धूप खड़ी है, चुप की आवाज़, जैसे कोई लौटेगा, खिड़की भर आकाश, नेपथ्यों में कोलाहल, अक्कड़ - बक्कड़, इल्ली - गिल्ली
सम्मान - अन्तरराष्ट्रीय और राष्ट्रीय अनेक सम्मानों से सम्मानित।
पत्राचार संपर्क - एन.- 138, सैक्टर-25, नोयडा- 201301
मो. - 09810224571

## एक

वो सितमगर है तो है
अब मेरा सर है तो है

आप भी हैं मैं भी हूँ
अब जो बेहतर है तो है

जो हमारे दिल में था
अब ज़बाँ पर है तो है

दुश्मनों की राह में
है मेरा घर है तो है

एक सच है मौत भी
वो सिकन्दर है तो है

रेखांकन : मनोहर काजल

पूजता हूँ बस उसे
अब वो पत्थर है तो है

## दो

मुझ पर कर दो जादू - टोना
एक नज़र ऐसे देखो ना

इतने दिन में घर आये हो
घर जैसे कुछ देर रहो ना

बादल हो तुम या खुशबू हो
बरसो खुलकर या बिखरो ना

ढूँढ़ न पाया खुद को घर में
छान चुका हूँ कोना - कोना
तुमसे खुद को वापस क्या लूँ
रक्खो अब तुम ही रख लो ना

## तीन

आईना दिखलाना है क्या
उसको सब समझाना है क्या

वो जो इतना गुमसुम-सा है
कोई राज़ छिपाना है क्या

तुम जो इतना खुश दिखते हो
उनका आना-जाना है क्या

इतनी देर लगी आने में
रस्ते में मैख़ाना है क्या

पैकिंग इतना चमकीला है
भीतर माल पुराना है क्या

## चार

सब-कुछ एक-बराबर है
कितना झूठ सरासर है

फिर कोई तूफ़ान उठे
मुझमें ठहरा सागर है

जिसको केवल झुकना है
क्यों गर्दन पर वो सर है

खुद से छिपता फिरता हूँ
मुझको जाने क्या डर है

दर्पण क्या ईजाद हुआ
सबका जीना दूभर है

■

पुस्तक समीक्षा

# अशोक अंजुम की अनूठी मुक्तक-कृति 'ज़रा-सी बात पर'

-डॉ. रोहिताश्व अस्थाना

**पुस्तक विवरण -**

| | | |
|---|---|---|
| पुस्तक का नाम | : | जरा-सी बात पर (मुक्तक-संग्रह) |
| लेखक | : | अशोक अंजुम |
| मूल्य | : | 200.00 (दो सौ रूपये मात्र) |
| प्रकाशक | : | श्वेतवर्ण प्रकाशन, 232, बी1, लोक नायक पुरम, नई दिल्ली-110041 |

बहुमुखी प्रतिभा के धनी एवं सक्रिय लेखन-संपादन के धनी भाई अशोक 'अंजुम' को किसी परिचय की आवश्यकता नहीं है। अब तक हास्य-व्यंग्य कविताए ग़ज़ल, गीत, दोहा, नाटक, खंडकाव्य, मुक्तक आदि विधाओं पर लगभग उनकी 25 कृतियां प्रकाशित एवं चर्चित हो चुकी हैं। इसी प्रकार उनके संपादन में लगभग 40 कृतियां प्रकाशित हुई हैं। अभिनव प्रयास (त्रैमासिक) पत्रिका के वे सुधी संपादक हैं। वे एक सफल मंच-मर्मज्ञ कवि भी हैं। समीक्ष्य कृति में उनके विभिन्न विषयों पर आधारित 107 मुक्तक संकलित किए गए हैं। कविवर अशोक अंजुम जी ने शहीदों के सम्मान में प्रस्तुत एक मुक्तक से कृति का श्रीगणेश किया है, यथा-

**हर हाल में करिएगा सम्मान शहीदों का,**
**हर सांस से करिएगा गुणगान शहीदों का,**
**ये उत्सव ये मेले, त्यौहार ये जीवन के।**
**हर शय पर है यारो अहसान शहीदों का।**

इसी प्रकार जीवन में मां की दुआओं के जादू का प्रभाव हमें हर बला और विघ्न-बाधा से बचा लेता है। उदाहरणार्थ-

**बुरी से भी बुरी कातिल हवाएं लौट जाती हैं,**
**लिए तूफ़ान जो आतीं घटाएं लौट जाती हैं,**
**बड़ा जादू है उसके आंसुओं में, मुस्कुराहट में।**
**दुआ देती है जब मां तो बलाएं लौट जाती हैं।**

अपने एक अन्य मुक्तक में कवि ने धर्म और राष्ट्रभक्ति का संदेश देते हुए कहा है।

**राम के रहमान के होकर रहो,**
**दीन के ईमान के होकर रहो,**
**किंतु पहले ध्यान अंजुम ये रहे।**
**आप हिंदुस्तान के हो कर रहो।**

आज के असंवेदनशीलता एवं असहिष्णुता के परिवेश में ज़रा-सी बात पर दिलों में गांठ पड़ जाती है। अत: हमें किसी की भावनाओं से कभी खिलवाड़ नहीं करना चाहिए। इसी प्रसंग पर आधारित कृति का शीर्षक मुक्तक उद्धरणीय है।

**कभी कुछ चूक हो जाए तो तिल का ताड़ मत करना,**
**ज़रा-सी बात पर रिश्तों को तुम दो फाड़ मत करना,**
**दिलों में गांठ पड़ जाए तो फिर मुश्किल से खुलती है।**
**किसी की भावनाओं से कभी खिलवाड़ मत करना।**

भाई अशोक अंजुम जी ने मद्यपान के दुष्परिणामों की ओर सावधान करते हुए कहा है-

**नशे की लत जो लग जाए तो फिर क्या-क्या नहीं होता,**
**अंधेरे घेर लेते हैं कोई रस्ता नहीं होता**
**सदा ही दूर रहिएगा ये सब बर्बाद कर देगा।**
**भले कैसा भी हो यारो, नशा अच्छा नहीं होता।**

पक्षी और वृक्षों का अटूट संबंध होता है। यदि हमें पक्षियों के कलरव से प्रेम है, तो हमें उनके लिए दाना-पानी और प्राकृतिक

आवास का प्रबंध करना ही होगा। कवि के शब्दों में–

**चमन गुलजार होने दो कि चिड़िया चहचहाने दो,**
**रखो मुंडेर पर पानी, मिटे कुछ भूख, दाने दो,**
**उदासी बढ़ रही है रोज़, सन्नाटा पसरता है–**
**लगाओ नीम, पीपल, आम, बुलबुल को तराने दो।**

आज की दूषित राजनीति में महंगाई–बेरोजगारी जैसे वास्तविक मुद्दों से जनता का मन भटकाया जा रहा है, जिसके कारण लोकतंत्र लाचार होकर रह गया है। यथा–

**कल तक जिन से नफ़रत थी कुर्सी की खातिर प्यार दिखे, हर नेता को बस चुनाव में अपनी ही सरकार दिखे,**

सब विकास की बातें अंजुम थकी–थकी–सी लगती हैं। जाति–धर्म के हंगामे में लोकतंत्र लाचार दिखे।

इसी प्रकार चुनाव आते ही वोटों की जुगाड़ में तथाकथित नेतागण एड़ी–चोटी एक कर देने को विवश हो जाते हैं। ज़रा देखिए–

**गले सभी को लगा रहे हैं नेता जी,**
**प्यार सभी से जता रहे हैं नेता जी,**
**जहां–जहां भी मूछें ऊंची करते थे।**
**पूंछ वहां पर हिला रहे हैं नेता जी।**

भाई अशोक अंजुम जी ने अपने अनेक मुक्तकों में हास्य–व्यंग्य का तड़का भी क्या खूब लगाया है। उदाहरणार्थ उनका एक मुक्तक देखें–

**ज़िन्दगी जीने के हमने ढंग निराले कर लिए,**
**फेशियल मुंह पर कराया और उजाले कर लिए,**
**उसने अंकल जी कहा जिस रोज़, उस ही रोज़ से,**
**घर पहुंच कर हमने अपने बाल काले कर लिए।**

इसी प्रकार कोरोना–काल के दुष्परिणामों को रेखांकित करते हुए कवि ने कहा है–

**ऐ कोरोना, क्या कहें क्या–क्या बखेड़े हो गए,**
**सूरमा बनते थे उनके ग़र्क बेड़े हो गए,**
**खाना–पीना, फिल्म, लूडो, रात–दिन पसरे रहे–**
**इस कदर बिस्तर ने पकड़ा पांव टेड़े हो गए।**

समीक्ष्य कृति के अंत में भाई अशोक अंजुम जी का उपलब्धिपरक जीवन–परिचय संकलित है। इसके साथ ही कवर फ्लैप– दो एवं तीन पर कवि के बारे में श्रद्धेय नीरज, डॉ कुंअर बेचैन, सूर्यभानु गुप्त, डॉ. कुमार विश्वास, इब्राहिम अश्क, डॉ शिवओम अंबर, हस्तीमल हस्ती, डॉ विष्णु सक्सेना आदि की मूल्यांकनपरक सम्मतियां कृति के कलेवर में चार चांद लगाने वाली हैं। मुखपृष्ठ पर मुद्रित कवि के मनमोहक चित्र का तो कहना ही क्या! नये अंदाज़ एवं नयी भाव भंगिमाओं पर आधारित मुक्तकों की यह कृति पाठकों के दिलों में सदैव रची–बसी रहेगी। पुस्तक आकर्षक, पठनीय एवं संग्रहणीय है।

## प्रणाम

लताजी का महाप्रयाण कोकिल कंठ का महाप्रयाण कैसे कहें? बस भौतिक देह स्वर देह में शाश्वत रूप से परिणत हो गई है। वसंत में कोयल उड़ी लेकिन उन स्वरों को सौंपकर जिनसे हम अपने जीवन की लय रचते आए। उनके स्वरों के बिना हम अपने जीवन राग को कैसे सुनें? उनके स्वर हमारे जीने का अनुभव है और हम कभी इस अनुभव से अलग कैसे हो सकते हैं? कभी होंगे भी नहीं। देह के चले जाने भर से न तो उनके स्वर विलुप्त होंगे और न ही उन स्वरों की गंध के निर्झर थमेंगे। हमारी आस्था उनका सदैव अभिषेक कर उनकी अर्चना, आराधना करती रहेगी। मुझे इस अवसर पर स्वर्गीय नर्मदा प्रसाद खरे की इन पंक्तियों का स्मरण हो रहा है जो देवता के मौन को कुछ इस तरह शब्द अर्ध्य अर्पित करती हैं,

**भग्न मंदिर का भले ही देवता बोले न बोले।**
**शंख तो बजते रहेंगे अर्चना होती रहेगी।**
**मुकुट टूटा, मूर्ति टूटी भावना फिर भी न टूटी**
**गांव छूटा गली छूटी, स्नेह की थाती न छूटी**
**फूल झर भू चूम लेता, सुरभि सांसें बिखर जातीं**
**काल सब कुछ लूटता है, पर कभी क्या गंध लूटी?**
**प्राण पिक अब तो भले ही कंठ निज खोले न खोले**
**गीत के दीपक जलेंगे प्रार्थना होती रहेगी**
**शंख तो बजते रहेंगे, अर्चना होती रहेगी।**

**–नर्मदा प्रसाद उपाध्याय**

**लता मंगेश्कर जी को कला समय परिवार की ओर से विनम्र श्रृद्धांजलि।**

पुस्तक समीक्षा

# चिकित्सक का लोकधर्म 'सुषेण पर्व' काव्य-नाटक

- प्रो. पी. व्ही. कोटमे

**पुस्तक विवरण -**

| | | |
|---|---|---|
| पुस्तक का नाम | : | सुषेण पर्व |
| लेखक | : | डॉ. देवेन्द्र दीपक |
| मूल्य | : | 135.00 (एक सौ पैंतीस रूपये केवल) |
| पृष्ठ | : | 110 |
| प्रकाशक | : | इंद्रा पब्लीकेशन हाउस, भोपाल |

समूचे विश्व में जलवायु परिवर्तन और परमाणु युद्ध के खतरे खड़े हैं। अनेक प्रकार के अस्त्रों से लेश देश युद्ध की धमकी दे रहे हैं। युद्ध आज भी एक समस्या बनकर हमारे सामने है। वैसे मानव युद्ध से कभी अलग नहीं रहा दुनिया में युद्ध और शांति का द्वंद्व है। युद्ध की भयंकरता के बीच यह जीवन द्वंद्वों का न केवल समाहार है, बल्कि द्वंद्व मुक्ति की छटपटाहट भी है। यह समस्या सभी युगों की रही है। कई कारणों में से ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, जंगलों की कटाई और भूमंडलीकरण से आने वाले सालों में महामारिया बढ़ रही है। दूसरी ओर पिछले 20 वर्षों का इतिहास इस बात का साक्षी है कि महामारियों की नियमितता बढ़ रही है। सार्स, निपाह, बर्ड फ्लू, स्वाइन फ्लू, इबोला, डेंगू, चिकनगुनिया आदि बीमारीयां बार-बार दस्तक दे रही है। कोरोना महामारी ने यह दिखा दिया कि एक स्वास्थ्य संकट कैसे आर्थिक और सामाजिक संकट में बदल जाता है। लेकिन इसका सबक है कि स्वास्थ्य व्यवस्था में बहुत परिवर्तन लाने की, उसे सुलभ, सस्ता और सक्षम बनाने, महामारियों से निपटने के लिए जोर देने की जरुरत है। ग्लोबलाइजेशन ने विश्व की अर्थव्यवस्था को जोड़ा है, पर कोरोना ने साबित कर दिया कि यह एकता आपसी सहयोग की बुनियाद सिर्फ नाम की ही रह गयी है। इस महामारी में बहुत से देश अलग-थलग पड़ कर कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं।

**विश्व में स्वास्थ्य की समस्या-**

आज की तारीख में अपने देश ने अच्छी क्वालिटी की ऐसी दवाएं बनाने में महारत हासिल की है, जो पूरी दुनिया में निर्यात होती है। दुनिया भर में सप्लाई होने वाली जेनरिक दवाओं में से लगभग 20 प्रतिशत अभी भारत में ही बनती है। लेकिन देश में कोरोना की पहली लहर से अधिक दूसरी लहर सूनामी में बदल गई थी। इसमें सार्वजनिक स्वास्थ्य व्यवस्था की सांसे उखड़ गई। अनेक राज्यों और शहरों में आम लोग अस्पतालों में बेड, ऑक्सिजन, वेंटिलेटर और दवाइयों की कमी तथा कालाबाजारी से जूझते हुए दम तोड़ गए। हर ओर लाचारी, हताशा और घबराहट का माहौल था। इस दौरान डॉक्टर भी दबाव में रहे। आम नागरिक भारतीय अव्यवस्था, सरकारों की नाकामियां तथा नीतिगत भूलों की कीमत भुगत चुका है। वैद्यकीय जैसे गंभीर और जिम्मेदार पेशे को हल्के ढंग से लेने वाले लोगों की भी कमी नहीं रही। दवा के नाम पर सैम्पिल की दवाइयां, सुई के नाम पर घटिया इंजेक्शन और बेवजह पानी देने वाले डॉक्टर मरीजों का कितना हित करते हैं। आज बहुत सारे अस्पतालों में डिजिटल टूल्स उपलब्ध नहीं है। अगर सावर्जनिक क्षेत्र में डॉक्टरों, नर्सों और टेक्निकल कर्मचारियों को सभी प्रकार सामग्री मुहैया करा दे तो हेल्थकेअर के समय मरीजों की मौतें कम हो सकती है। इलाज में खर्च भी कम हो सकता है।

मार्के की बात यह कि कोरोना काल में आयुर्वेद की लोकप्रियता दिन-ब-दिन बढ़ती गई, परंतु यह शास्त्र विशाल मन के व्यक्ति के हाथ में स्थापित अथवा कार्यशील होना आवश्यक है। ऋषि-मुनियों ने हजारों वर्ष पूर्व दिखाई हुई पद्धति व औषधि आज भी किसी भी प्रकार के परिवर्तन बिना वैसी ही है, इसके विपरीत अलोपैथी अन्य आधुनिक शास्त्रों जैसी निरंतर परिवर्तनशील रही है। हमारे पूर्वजों के जमाने से पीढ़ी-दर-पीढ़ी चलती आ रही संपूर्ण औषधियों की वसीहत हम, खो रहे हैं। ऐसी परंपरागत वसीहते खोने से हमें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा, पर हम पूर्व आदर्श, नैतिक मूल्य से द्वंद्व से निर्द्वन्द्व हो जाए तो जरूर पुरुषार्थ में सार्थकता निभाएंगे। प्राचीन काल में पिता से पुत्र के पास आयुर्वेद की यह वसीहत हस्तांतरित होती रहती थी। किसी योग्य शिष्य के पास भी आयुर्वेद की यह पवित्र वसीहत चली आती थी, तब मूल्यों का ह्रास नहीं था।

वर्तमान में हम देखे तो कोरोना का इतना असर चीन में क्यों नहीं है। आयुर्वेद के संदर्भ में भारत में घनवंतरी की गणना 'एक अदभुत चिकित्सक के रूप में की जाती है और धनतेरस के दिन सभी वैद्य उसकी पूजा करते हैं, उसी तरह चीन में प्येन छवे को एक क्रांतिकारक चिकित्सक माना जाता है। चीनी समाज में प्येन छवे को कितना आदर और सम्मान प्राप्त है, इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि चीनी जनता आज भी एक अच्छे चिकित्सक को प्येन छवे कह कर पुकारती है। प्येन छवे रोगी के शरीर का रंग देख कर रोग जानने के अलावा नब्ज देख कर भी रोगी की वास्तविक स्थिति की जानकारी हासिल करने में कुशल थे। हमें आयुर्वेद से मनुष्य मात्र अथवा मानव मात्र की जीवन के बहुमूल्य मार्गदर्शक तत्व प्राप्त हुए हैं। जीने की कला, आरोग्य का विज्ञान और जीवन का तत्वज्ञान आुर्वेद से ही प्राप्त हुए हैं। आयुर्वेद की कल्पना और आयुर्वेद का यथार्थ दर्शन पिछले कुछ समय में भारतीय समाज के दैनिक आरोग्य साधनों का एक अविभाज्य अंग था।

**डॉ. देवेंद्र दीपक की विश्व दृष्टि-**

हिंदी के वरिष्ठ साहित्यकार डॉ. देवेंद्र दीपक जी की अनुपम कृति 'सुषेण पर्व' चिकित्सक के लोकधर्म को एक अलग अंदाज में प्रतिष्ठित करती है। काव्य-नाटककार का यह राजधर्म के स्थान पर लोकधर्म के शाश्वत जीवन-मूल्यों से भारतीय संस्कृति की पुनर्प्रतिष्ठा का प्रयास है। रचनाकार जब किसी विषय.वस्तु को एक निश्चित रूपात्मक ढांचे में अभिव्यक्त करता है, तभी उसकी जीवन-दृष्टि या विश्व-दृष्टि सामने आती है। दीपक जी ने कोरोना काल में चिकित्सा क्षेत्र के संरचनात्मक ढांचे की अच्छी तरह जांच-पड़ताल की है। जिसमें वे चिकित्सा व्यवस्था, मानवीय अस्तित्व आदि स्थितियों को उजागर करते हैं। प्रेरणा का स्रोत राम कथा में उपेक्षित पात्र है, लेकिन कवि का कौशल उस महत्वपूर्ण प्रेरणा को अपने जीवन-दर्शन के प्रभाव से विश्वव्यापी बनाने का प्रयास सराहनीय है। उन्होंने जन-जीवन के मानवीय आदर्श और युग-चेतना को अपनी संवेदना से चिरस्थायी महत्व प्रदान किया है। दीपक जी को अपेक्षित की उपेक्षा शूलती है। उनकी सृजनात्मक प्रेरणा का प्रस्थान बिंदु युद्ध होता है। मिथक हमें ऐसे द्वंदों के समाधान का रास्ता सुझा सकते हैं। वे संसार के क्रिया-कलापों से जुड़े होते हैं, घटनाओं के सिलसिले को गति देते हैं। दीपक जी ने राम कथा में अलक्षित पात्र सुषेण को 'सुषेण पर्व' द्वारा आयुर्वेद से संश्लिष्ट कर युगबोध और यथार्थ के स्वरूप का मार्मिक चित्र प्रस्तुत्त किया है। कारण 'सुषेण पर्व' का एक पक्ष आयुर्वेद की महत्ता का भी है। इसके चयन के लिए इतिहास, पुराण एवं समसामयिक जीवन के घटनाक्रमों को आधार बनाया है।

दीपक जी ने कोरोना काल में रामानंद सागर के रामायण की पुर्नप्रस्तुति देख, लक्ष्मण की मूर्च्छा टूटने पर राम जी हनुमान को तो गले लगाते हैं, लेकिन सुषेण, जो एक महान वैद्य होकर भी कैसे राम को उनकी याद नहीं आई। ऐसे सुषेण के प्रति कृतज्ञता तक व्यक्त न करें, यह बात दीपक जी को शालती है। फिर उपेक्षित पात्र सुषेण को केंद्र में रखकर 'सुषेण पर्व' का सृजन कर उपेक्षित के दायित्व को निभाते हैं। लेकिन प्रस्तुत रचना में लक्ष्मण की पत्नी उर्मिला का ज़िक्र नहीं है, हनुमान जी जब संजीवनी बूटी लाते समय अयोध्या होकर लौटे थे, तब जरूर उसे लक्ष्मण के घायल होने का समाचार मिला होगा। उसे कितनी यातना सहन करनी पड़ी होगी। राम कथा में वह भी उपेक्षित थी। दीपक जी ने इधर सुषेण को लेकर राम कथा के प्राचीन ग्रंथों का गहन अध्ययन किया कि लक्ष्मण मूर्च्छित होने पर राम विषादग्रस्त होते हैं, तब सुषेण ही का कथन है- 'आपके भाई शोभावर्धक लक्ष्मण मरेनहीं हैं, मुख प्रसन्न और कांतिमान दिखाई दे रहा है। इनका शरीर शिथिल होकर पृथ्वी पर पड़ा है। राम सेना के वैद्य की औषधि का कोई असर न होने पर, तब सुषेण ने चिकित्सा में औषधि को कूट पीस कर सुंधाने की प्रक्रिया अपनाई तो लक्ष्मण

स्वस्थ्य हो गए और इसके बाद भी सुषेण के अवदान की कोई चर्चा नहीं हुई। इसी के साथ संजीवनी बूटी द्रोणाचल पर्वत क्षेत्र से लाने का उल्लेख बड़े विस्तार से हुआ है। इन्हीं से दीपक जी को नाटक की संरचना के लिए आधार भूमि मिली है।

**काव्य-नाटक 'सुषेण पर्व' का प्रतिपाद्य-**

'सुषेण पर्व' राम कथा पर आधारित एक काव्य-नाटक है। प्रस्तुत काव्य-नाटक का मूल अभिप्रेत है, सुषेण के अंतर्मन में चल रहे द्वंद्व को उद्घाटित करना। वह लोकतांत्रिक मूल्यों की रक्षा करने के लिए तत्पर हो जाता है। राजवैद्य होने के कारण सुषेण का अपना द्वंद्व है। यह द्वंद्व और इस द्वंद्व से उसका मुक्त होना ही इस काव्य-नाटक का प्रमुख पक्ष है। 'सुषेण पर्व' को तार्किक रीति से सुलझाने के लिए भार्या के रूप में सूर्या एक कल्पित पात्र का निर्माण किया गया है।

काव्य-नाटक के आरंभ में नट-नटी के संवाद द्वारा घोर संघर्ष, गहन उत्तरदायित्व और अदम्य आशावादिता का संकेत है। हमारे जिस मानस ने राम जैसे पुरुष की कल्पना कर उसे भारतीय मन में स्थापित किया है -

**नट - ''द्वंद्व में निर्द्वंद्व होना पुरुषार्थ**
**ऐसे पुरुषार्थ से ही**
**सध पाता परमार्थ''**
**नटी - ''द्वंद्व मुक्त सुषेण का यह पर्व**
**सुषेण की उपलब्धि पर**
**धनवंतरि कुल को हो रहा गर्व!''**

प्रत्येक व्यक्ति के मन में अच्छाइयों और बुराइयों का वैचारिक द्वंद्व हमेशा चलता रहता है। इसलिए अंतर्मुखी होना सदा सुखी होने का परिचायक है।

**नट- ''द्वंद्व जीवन का सच**
**सनातन सच**
**सच की सनातनता के साथ''**
**नटी- ''द्वंद्व से मुक्त होना पुरुषार्थ**
**ऐसे पुरुषार्थ से**
**सध पाता परमार्थ''**

यहां नागरिकों द्वारा युद्ध की चर्चा और उसके परिणामों को दिखाया है। लेकिन अंतत: उसका दुष्परिणाम नारी को ही भुगतना पड़ता है, इस सच्चाई को उजागर करना दीपक जी का उद्देश्य है। रामायण और महाभारत के रचियताओं और रचनाओं को ऋषियों समान सम्मान दिया जाता है। भारतीय साहित्य की रचनाएं दर्शन, धर्म, सभ्यता-संस्कृति का मूर्त सार रूप है। इनमें अनुभवों, विचारों और दृष्टियों के कारण एक अर्थ में भारतीय मन, चेतना और जीवन के मूल्य है।

नाटक के प्रथम दृश्य में नट-नटी के संवाद के माध्यम से राम और रावण सेना के युद्ध बिंब को उपस्थित किया है। इसमें युद्ध के कारण को नट-नटी के संवाद के माध्यम से उद्घाटित कर हटवादिता और अहंकार से उपजे युद्ध को सबसे अधिक नारी को झेलना, सहना पड़ता है, इसे रेखांकित किया है। नारी में जो दया, करुणा और परिणाम या भविष्य की एक समझ होती है, उसे दीपक जी सुलोचना के माध्यम से दिखाते हैं-

**नागरिक - 5 ''सुना है**
**विदा करती**
**सुलोचना**
**रोते-सोते**
**मूर्च्छित हो गिर पड़ी।''**
**नागरिक - 4 ''युद्ध कहीं भी हो**
**कभी भी हो**
**नारी को ही खोना है**
**जीवन भर उसको ही रोना है**
**नारी पर ही गिरती गाज**
**अतीत होता उसका**
**सब सुख,**
**श्रृंगार, साज!!''**

यह व्यथा है नारी जीवन की। इस युद्ध परिणामों को आज के संदर्भ में देखे तो देश और दुनिया में जो अप्रत्यक्ष युद्ध जारी है, उसमें कितने सैनिकों की जाने चली गई। इसे दीपक जी इस तरह उजागर करते हैं-

**नागरिक- 2 ''पति को खोती है, नारी**
**पुत्र को खोती है, नारी**
**पिता को खोती है, नारी**
**भाई को खोती है, नारी''**

वर्तमान परिदृश्य में यह बात कितनी सटीक है। वैसे हमारे साहित्य और इतिहास में नारी कोरू सदैव दुर्लक्षित किया गया है। दीपक जी इस रचना के दूसरे दृश्य में मूर्च्छित लक्ष्मण को उठाकर अपने साथ ले जाने में असफल मेघनाद पर हनुमान जी के व्यंग्य

बाण है।

**''मेघनाद,**
**यह लक्ष्मण है**
**शेष का विशेष**
**विशेष का अशेष।''**

यह कहकर हनुमान जी लक्ष्मण को उठाकर ले जाते हैं। फिर राम सेना का चिकित्सा प्रमुख लक्ष्मण का परीक्षण करता है और अपनी असमर्थता प्रकट करने पर सुषेण को लाने का प्रस्ताव सामने आता है। इसी दृश्य में राम का संक्षिप्त विषाद भी दिखाया है।

तीसरे दृश्य में घायल लक्ष्मण को देख राम का संक्षिप्त विषाद तथा जामवंत की सलाह पर हनुमान सुषेण वैद्य को लाने के लिए प्रस्थान करते हैं। यहां दीपक जी ने जामवंत के संवाद के माध्यम से जीवन मूल्यों पर कटाक्ष किया है। इसीलिए राम के मुख से ''मेरे सब इष्ट पूर्ण करें आज सभी अभीष्ट'' के रूप में व्यक्त है।

चतुर्थ दृश्य में बैद्य सुषेण का आवास दिखलाया है। यहां सुषेण के साथ उसकी पत्नी सूर्या के संवाद बडे मार्मिक है और प्रारंभ में दी गयी स्थापना को चरितार्थ करते हैं। द्वंद्व और उसका निरसन इस दृश्य का मुख्य बिंदु है। सूर्या एक विदुषी और सुधमी पत्नी के रूप में चित्रित है। इसी बीच हनुमान का प्रवेश दिखलाया है। जो वैद्यराज सुषेण को लेने आए थे, पर सुषेण अपने राजधर्म पर अडिग थे, तब पत्नी सूर्या उसे राजधर्म से कर्मनिष्ठा की याद करा देती है।

**''राजवैद्य से पहले**
**एक वैद्य**
**आयुर्वेदाचार्य सुषेण!**
**वैद्य थे**
**तो राजवैद्य का पद मिला**
**आप अपने वैद्य**
**होने के सच को**
**झुठला सकते हैं कैसे ?''**

आगे पत्नी सूर्या पंच निष्ठा की याद करा देती है। 'अनुरोध स्वीकार, चिकित्सा के लिए सदा तत्पर, सुलभ सेवा, कोई भेद नहीं, अभय और निर्लोभ संधान और प्रयोग में रत।' यह सुषेण की अंगभूत दीक्षा है। लेकिन सुषेण में भावना और कर्तव्य का द्वंद्व चल रहा था। सूर्या यहां श्रेष्ठ भावना और कर्तव्य के पक्ष में खड़े होने का अनुरोध करती है। यह आज के चिकित्सा-जगत का यथार्थ है। अंतत: सुषेण अपना त्यागपत्र देता है। हनुमान जी सुषेण की पत्नी की रक्षा की जिम्मेदारी लेते हैं, तब सूर्या आश्वस्त करती है कि ''आपका क्षेम मेरा नेम!'' अर्थात पति कर्तव्य ही नारी सम्मान है। रचना में सामाजिक, मूल्यगत और नैतिक आदर्श के प्रति नारी की गरिमा को प्रतिष्ठापित और नारी के विकास को उद्घाटित किया है नारी, पुरुष की साधना में सहचर है, इन तथ्यों का निर्वाह कर सामाजिक न्याय पाने के लिये अपनी व्यक्तिगत रागात्मकता को दाव पर लगा देती है। सूर्या, पुरुष और नारी का पूरक बनकर युगीन यथार्थ को उद्घाटित करती है।

वर्तमान में स्त्री को शिक्षा और आर्थिक आत्मनिर्भरता से जो कुछ स्थान मिला है, उसी का प्रतीक सुषेण की पत्नी है। उसने अपनी सामाजिक पहचान और जूझने के प्रयत्न से सामाजिक सरोकार का परिचय दिया है। वह अपने व्यक्तिगत दुख से आगे निकल कर सामाजिक सुख-दुख का हिस्सा बन जाती है और दिए गए दायरे में स्त्रीयत्व की व्यापकता और सामाजिक छबि के साथ खड़ी होती है।

पांचवा दृश्य राम के विषाद से प्रारंभ होता है। यहाँ जामवंत का प्रबोधन बड़ा सांकेतिक है। ''डोर अभी टूटी नहीं है।'' इसमें सुषेण अपने सब अलंकरण और राजपद लंका में ही छोड़कर लक्ष्मण के माध्यम से मानव सेवा का धर्म निभाने के लिए आगमन, लक्ष्मण का परीक्षण कर राम से कहता है।

**''मैं करता हूं साधन**
**आप सब करें आराधन।''**

मन, वचन, कर्म के ऐक्य से सदैव्य परहित चिंतन में रत रहने वाले परोपकारी मनुष्यों की संख्या इस संसार में कम अवश्य है, लेकिन फिर भी बह बहुत महत्वपूर्ण है सुषेण, मूर्च्छा से मुक्ति का एक उपाय जो हिमालय के दीर्ष परिकक्षेत्र में संजीवनी बूटी का जिक्र और वनदेवी की वंदना तथा औषधि लाने से पूर्व सावधानियों को समझाता है। सुषेण, हनुमान को अलग ले जाकर बूटी आदि की जानकारी देता है, पर वह अपना फार्मूला गुप्त रखता है। कारण वन औषधियों का दुरुपयोग न हो, जो हमारे देश की महान संपत्ति है। इस औषधि का व्यावसायिक लाभ के उपयोग नहीं होगा, उसे वहीं पुन:स्थापित करना होगा। रात को वनस्पति न तोड़ने की बात आज भी हमारी ग्रामीण संस्कृति में निभाई जाती है।

अपनी संस्कृति चिरकाल से ही पर्यावरण रक्षण, मानवीय मूल्यों के संपोषण और अन्य के प्रति आत्मवत व्यवहार की पक्षघर रही है। सुषेण कहता है। ''खेती को पानी और रोगी को औषधि समय पर मिले तो लाभ।'' यहां दीपक जी कृषि को पानी और रोगी को समय पर औषधि प्रदान करने का महत्व रखते हैं। जिस तरह

फसल को समय पर पानी नहीं मिला तो वह सुख जाती है, उसी तरह बीमार को समय पर इलाज न मिलने पर उसका जीवन सुख जाता है। वैदिक साहित्य में औषधि को मातृरूपेण कहा है। यहां सुषेण पूरे विधि-विधान से चिकित्सा करता है।

छठे दृश्य में नट-नटी के माध्यम से रावण कालनेमि संवाद, कालनेमि का छल-

**''दर्शकों**
**नटी सही कहती है**
**कपट मुनियों को पहचानों।''**

हनुमान का मगरी हनन, कपटमुनि का वध, हनुमान का भरत से मिलन के साथ माता कौशल्या और सुमित्रा से संवाद के माध्यम से समकालीनता को लेकर हमारी सांस्कृतिक विरासत को बड़ी सजगता से उद्घाटित किया है।

सातवे दृश्य में राम का प्रलाप, दशरथ की आत्मा की आकाशवाणी, सुषेण द्वारा अपने औषधि ज्ञान के साथ ही साथ आराधन के रूप में महामृत्युंजय मंत्र का जाप, सुषेण की चिंता, राम की प्रार्थना, सूर्य आकाशवाणी, राम के जय घोष के साथ हनुमान का आगमन, सुषेण, हनुमान ने लाई हुई औषधि का प्रयोग लक्ष्मण पर करता है, लक्ष्मण धीरे-धीरे उठकर बैठते हैं। सुषेण के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन और सूर्योदय के साथ जय जयकार गूंज, यह एक प्रकार का रंगोत्सव ही था। यहां सुषेण की चिकित्सा हम कोरोना काल में कुछ डॉक्टरों के अथक प्रयासों को भी मान सकते हैं। राम, सुषेण को वैद्यराज की उपाधि देते हैं और एक वैद्य की मर्यादाओं की ओर संकेत करते हैं। यह चिकित्सा-सेवा में लगे पूरे समुदाय के लिए ये मर्यादाएं साध्य है, ये वैश्विक हैं। राम की पहचान सहकार की तथा रावण की पहचान अहंकार की इसे दिखाना भी अभिप्रेत है।

**राम कहते हैं- ''सुषेण**
**पहले तुम राजवैद्य थे**
**और आज से तुम वैद्यराज!**
**सुषेण!**
**चिकित्सा सेवा से**
**रोगी के मुख पर लौटी मुस्कान**
**वैद्य का सौंदर्यशास्त्र है!''**

मनुष्य सौंदर्य उपासक प्राणी है। उसे जो आंखों से पसंद आ जाए तथा जिसके बारे में भी अच्छा लगे वही सुंदर है। सत्य ही सुंदर और श्रेष्ठ है। एक सौंदर्य शुद्ध, पवित्र और निरपेक्ष होता है। अर्थात जिसे किसी वस्तु की आकांक्षा या चाह न हो। इस प्रकार दीपक जी सौंदर्य-दृष्टि मानव-जगत के दु:ख निवारण में देखते हैं। यहां वैद्य या डॉक्टर की धारणा को दिखलाया है। कहा जाता है कि गहन सोच से विचार बनते हैं, विचारों से धारणा का जन्म होता है और धारणा से मूल्यों का विकास होता है। इससे व्यक्ति के सौंदर्यानुभूति तथा सार्वकालिक जीवन उद्देश्यों की पुष्टि होती है। आदर्श मूल्यों में सात्विक, नैतिक मूल्यों को माना जाता है। सौंदर्य, सत्य, ज्ञान, स्वतंत्रता आदि साध्य मूल्य हैं। सेवा और सहकार के माध्यम से भावनाओं के सौंदर्य में बढोत्तरी होती है, कि इससे अहंकार गलता है। सौंदर्य वहीं सच्चा है जो कल्याणकारी हो। चिंतन एवं व्यवहार को उत्कृष्ट एवं परिष्कृत करके ही ऐसे दिव्य सौंदर्य का अनुभव लिया जा सकता है।

**''निर्लोभ,**
**निर्भय,**
**निस्संग होना**
**वैद्य का धर्मशास्त्र है!''**

इस कथन से दीपक जी ने भारतीय संस्कृति के शाश्वत जीवन-मूल्य परोपकार के सेवा भाव की महत्ता को स्थापित कर चिकित्सा-धर्म का सौंदर्यशास्त्र, धर्मशास्त्र और समाजशास्त्र को नई दृष्टि से चिकित्सक के वैश्विक मानवधर्म के माध्यम से प्रतिपादित किया है। आज डॉक्टरों से लेकर बड़ी-बड़ी फार्मा [औषधि] कंपनियों की भूमिकाओं पर चिंतन होने थी जरुरत है। आज हर सेवा का व्यावसायिकरण होकर धन को अधिक महत्व दिया जा रहा है। दीपक जी को विश्वास है कि हम अपने अतीत से प्रेरणा लेकर जीवन-मूल्यों को पुनर्स्थापित कर सकते हैं। जिससे सेवा भावों को अंगीकार कर समाज को अनुकरणीय दिशा दी जा सकती है। मानव समाज में हमेशा सेवा भाव होना अति आवश्यक है। इससे समाज के अंदर फैली कुरीतियां समाप्त होती है। सामान्य सेवा कार्यों को भी व्यक्ति यदि जीवन पर्यंत करता रहे, तो उसका अहं भाव पूरी तरह समाप्त होगा। एक-दूसरे के प्रति प्रेमभाव से सामाजिक एकता, परोपकार, शांति और भाईचारा बढ़ जाएगा।

कोरोना काल में डॉक्टरों और नर्सों ने अनेक अभावों के बीच अपना जीवन जोखिम में डाल कर लोगों के प्राण बचाए। देश में आप लोगों का व्यवहार उम्मीद पैदा करने वाला है। भुखमरी झेल रहे लोगों को राशन तथा भोजन पहुंचाने में स्थानीय स्तर के स्वयं:स्फूर्त प्रयास प्रेरणादायक है। वास्तव में यह सेवा भाव है, कर्म नहीं। नि:स्वार्थ भाव से सेवा करता मानव धर्म भी है। हमारे शास्त्रों में ऐसे अनेक प्रसंग है जो हमें सेवा, परोपकार की महत्ता बताते हैं।

**''भेद मुक्त हो**
**पूरे विश्व का आरोग्य**
**वैद्य का समाजशास्त्र है।''**

यह वर्तमान के चिकित्सा क्षेत्र में समाज को रोगमुक्त करने के लिए सुषेण जैसे चिकित्सक की त्याग-वृत्ति की ओर संकेत है। निष्ठा के बल पर इनका कर्म वन्दनीय है। दीपक जी प्रस्तुत काव्य-नाटक में युद्ध की विभीषिका के माध्यम से मानव-मूल्यों पर अपनी दृष्टि केंद्रित करते हैं। दूसती ओर मंदोदरी का जिक्र करके रावण ने एक प्रकार से स्त्री शक्ति का अपमान ही किया है। वे नवीन मूल्यों की खोज करके जीवन स्वास्थ्य के लिए नए समाजशास्त्र को व्याख्यायित कर जारी की करुणा, सहयोग भाव को मर्यादा पुरुषोत्तम राम के मुख से कहते हैं-

**''सुषेण धन्य हो तुम**
**धन्य है तुम्हारी भार्या**
**सत्परामर्श मिले समय पर**
**हित की पगडंडी पर चल पडता है साथी।**
**इस श्रेय में तुम्हारी सूर्या भी संज्ञेय।''**

प्रस्तुत रचना में मूल रूप से मानवीय संदर्भ, कर्मशीलता, धर्मनिरपेक्ष जीवन दृष्टि, नारी की महत्ता तथा विश्वकल्याण की परिकल्पना है। भारतीय साहित्य और सांस्कृतिक धरोहर हमारे वैदिक युग से लेकर आज तक मानवतावादी जीवन दृष्टि के साथ विश्वबंधुत्व और नारी की महत्ता को लेकर है। अंत में नट-नटी के माध्यम से उत्सव का वातावरण दिखलाया है। यह अंतिम चरण जब जयकार का है। सबके प्रति आभार प्रकट किया कर - 'संजीवनी ने किया कमाल आयुर्वेद का उन्नत भाल।' इसी प्रकार धरती माता की जय में एक कथित जय है। 'जय भारतीय उपचार की जड़ी-बूटी व्यवहार की।' राम जी के चरित्र में देव-भाव और मानव-भाव दोनों अनुस्यूत हैं। राम सुषेण के अवदान के प्रति आभार प्रकट करते हैं और उसे राजवैद्य की उपाधि से अलंकृत कर आदर्श वैद्य का संकेत कर चिकित्सा सेवा में यशस्वी होने का वरदान देते हैं। और विभीषण से प्राप्त गुप्त सूचना से पत्नी सूर्या के कुशलक्षेम का उल्लेख करते हैं। यह राम की मर्यादा के अनुरूप ही है।

**'सुषेण पर्व' काव्य-नाटक का शिल्प-पक्ष-**

काव्य-नाटक उसे कहा जाता है, जिसमें काव्य प्रधान होता है और नाट्य तत्व गौण। इसमें आवश्यकतानुसार अभिनय क्षमता अवश्य होती है। डॉ. प्रमिला सिंह के शब्दों में 'कविता में नाटक की यह शैली वर्णनात्मकन होकर कथोपकथनात्मक होती है। पात्रों के कथोपकथनों में जब कवि की अभिव्यंजना प्रवेश पा जाती है तब इसका स्वरूप काव्यात्मक हो जाता है, और यहीं नाटक के कथोपकथनों का एवं काव्य का सुंदर समन्वय हो 'नाट्य काव्य' अर्थात नाटक और काव्य के अद्भूत संगम का कारण बनता है'' जब कोई साहित्यकार किसी विधा का चयन करता है तो एक तरह से वह जीवन-जगत को देखने और व्यक्त करने की दृष्टि और पद्धति का भी चयन करता है। प्रस्तुत रचना में मौलिकता, रचनाकौशल, सत्यता तथा रोचकता कथानक के महत्वपूर्ण गुण है। पुराण, इतिहास और कल्पना के विनियोग से चरित्रों का उद्घाटन कर दीपक जी ने पात्रों के साथ पूरा न्याय किया है। राम कथा को युगीन संदर्भ में व्याख्यायित कर जनमानस के अंतर्विरोध, सत और असत संघर्ष, सामाजिक और व्यावसायिक परिवर्तन को युगीन सत्य के समानुरूप बनाकर लोकमत का ध्यान रखते हुए प्रासंगिक और ग्राह्य रूप में अभिव्यक्त कर युगीन सार्थकता प्रदान की है। इसमें उन मूल्यों का अन्वेषण किया गया है, जो संपूर्ण मानवता को आज के संदर्भ में सार्थक हो सके।

काव्य-नाटक के मुख्य तत्व अंतर्द्वन्द्व को अभिव्यक्ति देने के लिए कविता अधिक सशक्त माध्यम है। इसी से काव्य-नाटक सहजता से मानव-मन की आत्मीयता प्राप्त करने में सफल हो जाता है। इस विधा का आधार मानव के अंतर्मन में उठने वाले संघर्ष एवं द्वंद्व है, अत: इसकी विषय सामग्री मानव हृदय के तीव्र आवेग है। इन आवेगों की अभिव्यक्ति काव्यत्व के द्वारा होती है। इस प्रकार जीवन के भावात्मक क्षणों एवं उससे संबंधित घटनाओं पर इस विधा के कथानक का निर्माण होता है। यह कथानक वर्णनात्मक या घटना-प्रधान न होकर भावों के अलग सौंदर्य का परिचायक होता है। ऐसे भावों को रचनाकार जीवन के बीच से खोज निकलता है।

डॉ. देवेंद्र दीपक जी ने व्यक्ति के अंतर्मन का विश्लेषण ठीक चिकित्सक की भांति उसी की भाषा में किया है। इसका शिल्प-पक्ष विषय-वस्तु को बल प्रदान करता है। यह मंचन की दृष्टि सफल नाटक है। अर्थपूर्ण संवादों के माध्यम से समाज जागरण का संदेश दिया गया है। क्रिया-व्यापार और चरित्र की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विशेषताओं को संवादों द्वारा ही उद्घाटित किया है। कथाकथन शैली में संवाद सहज, स्वाभाविक, भावात्मक एवं चरित्र-चित्रण में गहनता और बारीकी लिए हुए हैं। इसमें प्रतीक योजनाए बिंब विधान और भाषा तथा शब्द चयन नए प्रकार से है। भाषा में सही शब्दों का चयन, साधारण शब्द से बड़ी बात कहना, प्रतीकों और बिम्बों में नयी यथार्थ भावनाओं को प्रकट किया गया है। अत: इसकी भाषा अनेक विशेषताओं से संपन्न है। ■

पुस्तक समीक्षा

# मानवतावाद की मशाल जलाने वाले जुझारू नवगीत

-पन्नालाल जायसवाल

**पुस्तक विवरण -**

| | | |
|---|---|---|
| पुस्तक का नाम | : | नवगीत का मानवतावाद |
| लेखक | : | डॉ. राधेश्याम बन्धु |
| मूल्य | : | 950.00 (नौ सौ पचास रूपये केवल) |
| पृष्ठ | : | 500 |
| प्रकाशक | : | कोणार्क प्रकाशन, दिल्ली-110053 |

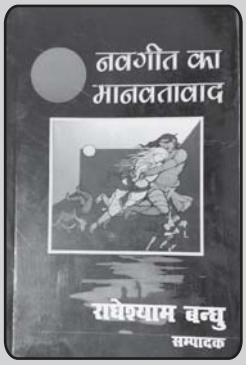


आज जब 'नवगीत का मानवतावाद' पुस्तक को मैं समीक्षा की दृष्टि से देख रहा हूं तो मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि डा. राधेश्याम बन्धु केवल कवि ही नहीं हैं बल्कि वे एक जागरूक सामाजिक और साहित्यिक विचारक भी हैं। वे जितने हिन्दी गीतकाव्य की अस्मिता के लिए चिन्तित हैं उतना ही

वे विश्व मानवता के लिए भी व्यग्र हैं। यही उनकी साहित्यिक साधना की व्यापकता और सार्थकता है। जब विश्व भूमण्डलीकरण और आधुनिकतावाद के कारण विनाश के कगार पर खड़ा है और विश्व की महाशक्तियां एक-दूसरे को चुनौती देने के नाम पर तृतीय एटॉमिक विश्वयुद्ध की तैयारियां कर रही हैं, तब सवाल उठता है कि ऐसे में मनुष्य और कविता की रक्षा कौन करेगा? मानवीय मूल्यों की रक्षा कौन करेगा? दो जून की रोटी जुटाने वाले गरीबों, मजदूरों, मजलूमों, महिलाओं, बच्चों की रक्षा कौन करेगा? अब तो हमारे पास महात्मा गांधी और मार्टिन लूथर जैसे शान्तिदूत भी नहीं हैं जो विश्व मानवता की रक्षा के लिए सदैव सत्य, अहिंसा और का प्रेम पाठ पढ़ाते थे। इसलिए ऐसी विषम स्थिति में कम से कम कवियों और साहित्यकारों को तो अपने दायित्व का निर्वाह जरूर करना चाहिए और अपनी दूरदर्शितापूर्ण रचनाशीलता से मानवता को इस भयानक संकट से उबारने का प्रयास करना चाहिए। कबीर, तुलसी, निराला इसी परम्परा के जागरूक कवि थे। इसी परम्परा के डॉ. राधेश्याम बन्धु भी एक जागरूक कवि, विचारक, और समीक्षक हैं, जो सिर्फकविता ही नहीं लिखते बल्कि वे अपनी वस्तुवादी आलोचना से हिन्दी गीतकाव्य को एक नया यथार्थवादी वैचारिक आयाम भी देने का प्रयास करते हैं जिसे हम नवगीत के नाम से जानते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि डॉ. बन्धु की पुस्तक 'नवगीत का मानवतावाद' की तरह ही नवगीत आलोचना यात्रा लगातार जारी है और इसके पहले भी इनकी चार पुस्तकें सम्पादित और प्रकाशित हो चुकी है। साथ ही इन पुस्तकों ने नवगीत की मानवतावादी रचनाशीलता के महत्व को विश्व कविता के मंच पर भी रखने का सराहनीय काम किया है और विचारपूर्ण आलेखों से विश्व मानवता की रक्षा के परिप्रेक्ष्य में कवियों और काव्यप्रेमियों को जगाने का भी प्रयास किया है। ये पुस्तक हैं (1) नवगीत जनमानस के आईने में - 1980 (2) नवगीत और उसका युगबोध-2004 (3) नवगीत के नये प्रतिमान - 2012 (4) नवगीत का लोकधर्मी सौन्दर्यबोध-2016। यह भी एक सच्चाई है कि इन पुस्तकों ने केवल आधुनिक हिन्दी गीतकाव्य की शैल्पिक नवीनताओं की चर्चा ही नहीं की है बल्कि उन्हें वैचारिकता की नयी ऊंचाई और ऊर्जा भी प्रदान की है।

साथ ही नवगीत की यथार्थवादी रचनाशीलता के माध्यम से निराला के समष्टिवादी यथार्थवाद की जमीन को भी पोख्ता किया है।

यहां यह भी एक उल्लेखनीय सत्य है कि डॉ. बन्धु ने हिन्दी गीतकाव्य नवगीत को पुनर्स्थापित करने में अपने जीवन के चालीस वर्ष लगा दिये और इस कालखण्ड में अपने नवगीत अभियान के अन्तर्गत नवगीत के नये प्रतिमानों की रचना भी की है जिसे एक ऐतिहासिक उपलब्धि के रूप में देखा जा रहा है। इस पुस्तक में इन मानकों की सोदाहरण व्याख्या करके हिन्दी गीतकाव्य को अनुशासित और मर्यादित करने का भी एक महत्वपूर्ण काम किया गया हैं।

रिचर्चा खण्ड के अन्तर्गत इन प्रतिमानों का समर्थन हिन्दी के विख्यात समीक्षक डॉ. विश्वनाथ त्रिपाठी, डॉ. मैंनेजर पाण्डेय, डॉ. जानकीप्रसाद शर्मा, डॉ. नन्दकिशोर नन्दन, डॉ. रामनिहाल गुंजन आदि ने भी अपनी परिचर्चाओं में किया है और इन्हें आवश्यक भी बताया है।

डॉ., बन्धु ने अपने 146 पृष्ठ के सम्पादकीय खण्ड में कुछ ऐसे मुद्दें भी उठायें हैं जो सांस्कृतिक सामाजिक, राष्ट्रीय, मानवीय चेतना की दृष्टि से कवि और साहित्यकार की सोच तथा उसकी रचनाशीलता को आकार देने के साथ दिशाबोध भी कराते हैं। वे आत्ममंथन के विषय हैं हिन्दीबेल्ट अनवरत विचारहीनता और विशाहीनता का शिकार क्यों? कविता में भारतीयता की खोज, वेदों के मानवतावाद को हमने क्यों भुला दिया? नवगीत में भारत की खोज, बौद्धधर्म का महत्व, भारत का अभिजनवादी समाज, अंग्रेजीराज का दुष्प्रभाव, भूमण्डलीकरण के कारण मानवता के लिए बढ़ती चुनौतियां, महाभारत मे कृष्ण की जनपक्षधरता आदि। डॉ. मैनेजर पाण्डेय ने अपनी परिचर्चा में कहा है ''नवगीत के प्रतिमान-6 की यह बात सही और जरूरी है कि नवगीत अपने नये रूप और नयी वस्तु के कारण ही लोकप्रिय है। इस बात से मैं पूरी तरह सहमत हूं कि जो नवगीतकार नयी भाषा और नये शिल्प में नवगीत लिखते हैं और

लोकभाषा और लोकछन्द का भी अपने गीतों में प्रयोग करते हैं तो उनके गीत काफी जनप्रिय और लोकप्रिय हो जाते हैं। जैसे रमेश रंजक के गीत भी इसी कारण काफी जनप्रिय हैं।'' (डॉ. मैनेजर पाण्डेय पृष्ठ 156)

इसके विरासत खण्ड में जहां हमें नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल, अज्ञेय, रमेश रंजक आदि के गीत पढ़ने को मिलते हैं वहीं 'नवगीत के सशक्त हस्ताक्षर खण्ड' के अन्तर्गत नये तेवर वाले जुझारू समकालीन नवगीत के काफी साक्ष्य भी दिये गयें हैं जैसे अश्वघोष, राधेश्याम शुक्ल, जीवन शुक्ल, डॉ. रामकृष्ण, शिवकुमार पराग, सुरेन्द्र बाजपेयी, रमेशचन्द्र पन्त, राजेन्द्र निशेश, कृष्ण बक्शी, डॉ. अजय पाठक आदि। सुरेंद्र बाजपेयी के एक नवगीत 'दहशत में जनमत' की कुछ पंक्तियां यहां दृष्टव्य हैं –

**कटे हुए पेड़ों सी जिन्दगी, कुछ टूटे पत्तों सी जिन्दगी,**
**नंगी कुछ डालों सी हो गई, आज भोजपत्रों सी जिन्दगी,**
**बरफीली घाटी मे और कितने दिन सिहरेंगे लोग ?**
**कितने भ्रम टूटेंगे और, कितने दिन ठहरेंगे लोग ?**

(सुरेंद्र बाजपेयी पृष्ठ 445)

यह यथार्थवादी नवगीत अपनी व्यंजनापरक शैली में 'दहशत में जनमत' के माध्यम से आज के प्रजातंत्र और सियासत के आतंकी चेहरे को बेनकाब करने का प्रयास भी करता है और यह अपना प्रतिरोध भी दर्ज कराता है कि आज निरीह जनता अपने ही देश में लावारिश कटे हुए पेड़ की तरह उत्पीड़न, दहशत,

गरीबी के साये में कब तक जियेगी? इसी बहस में शामिल होते हुए डॉ. बन्धु ने भी 'नवगीत का मानवतावाद' की भूमिका में नवगीत के उद्देश्य के सम्बन्ध में लिखा है ''नवगीत के रचनाकारों की यह चिन्ता है कि हमारे मानवीय जीवनमूल्य हमारे जीवन से, समाज से और देश से क्यों तिरोहित होते जा रहे हैं और आदमी, आदमी का दुश्मन क्यों होता जा रहा है? और समाज में अराजकता, विषमता, उत्पीड़न की घटनायें भी क्यों बढ़ती जा रही हैं? इन सवालों पर हमें गम्भीरता से विचार करने की जरूरत है।'' (डॉ. राधेश्याम बन्धु पृष्ठ 146) इस पुस्तक के माध्यम से जो भी सवाल उठाये गये हैं वे केवल नवगीत, साहित्य, की अस्मिता के लिए ही नहीं बल्कि मानवता की अस्मिता के लिये भी बहुत चिन्ताजनक और विचारणीय हैं। शायद 'नवगीत का मानवतावाद' पुस्तक की यही जागरूकता, जीवन्तता, जनप्रियता और जुझारूपन है और नवगीत की यही मानव की बेहतरी की चिन्ता भी है।

■

# प्रो. राजाराम के जन्मदिवस पर साहित्य व कला का अद्‌भुत संगम

कला गुरु श्रद्धेय राजाराम शर्मा जी के जन्मदिन पर आयोजित हुआ 'साहित्य एवं कला का अद्भुत संगम' डॉ. बिनय षडंगी राजाराम ने 22 फरवरी के दिन को एक यादगार दिन बना दिया। अवसर था कलागुरु श्रद्धेय राजाराम शर्मा जी के जन्मदिन का और इस अवसर पर 'सप्तवर्णी कला-साहित्य सृजन शोध पीठ' में एक समारोह आयोजित किया गया। राजाराम रूप-ध्वनि कला दीर्घा के आमों की मंजरियों पर झूमते भोरों, मोसंबी के बड़े-बड़े फूलों से लदे पेड़ों, विभिन्न फूलों से महकती लताओं, छोटे से जलाशय में कमल के गोलाकार पत्तों के बीच में तैरती मछलियाँ और आंवला, नींबू, अमरुद, केला, नारियल के साथ अनेक फलों-फूलों के खूबसूरत बगीचे में बैठकर जहाँ चित्रकारों ने बहुत खूबसूरत चित्र बनाये लेखिकाओं ने अपने भावों की अभिव्यक्ति कविताओं में रची। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि पद्मश्री आदरणीय रमेश चंद्र शाह एवं अध्यक्ष डॉ. देवेन्द्र दीपक जी के साथ प्रसिद्ध मूर्तिकार श्री रमेश जैन

जी ने सभी कलाकारों के बनाये चित्रों का अवलोकन किया। लेखिकाओं की लिखी हुई रचनाओं को पढ़ा और सराहा। समस्त चित्र राजाराम कला- दीर्घा में प्रदर्शित किये गए हैं। जो भी चाहे शाम को चार बजे से छह बजे के बीच उनका अवलोकन कर सकता है।

# लता मंगेशकर को ध्रुवपद धाम जयपुर द्वारा दी गई स्वरांजलि

सुरेश्वरी सुरसुंदरी माँ लता मंगेशकर जी ब्रह्मपुरी जयपुर स्थित इंटर्नेशनल ध्रुवपद धाम ट्रस्ट में सुरेश्वरी माँ लता मंगेशकर जी को नाद साधना द्वारा स्वरांजलि दी गयी। हाल ही में भारत सरकार द्वारा ध्रुवपद गुरु नामित हुई में स्वयं के निर्देशन में गुरु शिष्य परम्परा के अंतर्गत छात्रवृत्ति योजना में ध्रुवपद तालीम ले रहे विद्यार्थियों द्वारा डेढ़ घंटे गणेश वाद्य मृदंग पर भक्तिरस में भैरव राग में शिव स्तुति परक ध्रुवपद की नाद अवतरणा ऑनलाइन एवं ऑफलाइन की गयी। पखावज पर संगत की युवा पखावज वादक श्री ऐश्वर्य आर्य।

छायाकार–जगदीश कौशल

# समय की धरोहर

## कथक सम्राट पंडित बिरजू महाराज

**जन्म : 4 फरवरी 1938** **निधन : 17 जनवरी 2022**

कालका–बिन्दादीन घराना लखनऊ के कुलदीपक श्री बृजमोहन मिश्र उर्फ बिरजू महाराज ''कथक सम्राट'' तो हैं ही लेकिन नृत्य में भाव एवं लयमुद्रा प्रदर्शन की अद्‌भुत क्षमता के कारण उन्हें ''नाट्य सम्राट'' भी कहा जाता है। कथक नृत्य के अलावा आप तबला, पखावज वादन तथा ठुमरी, दादरा, भजन और ग़जल गायन में भी निपुण थे। नृत्य के क्षेत्र में एक सम्मानीय गुरु श्रेष्ठ नर्तक और प्रभावशाली नृत्य निर्देशक के रूप में बिरजू महाराज ने जो ख्याति अर्जित की है वह अतुलनीय है। आपने अनेक नृत्य नाटिकाओं की रचना करके कथक नृत्य की यश पताका को देश–विदेश में फहराने में महत्वपूर्ण योगदान किया है।

पंडित बिरजू महाराज को उनके उल्लेखनीय योगदान के लिए अनेक सम्मानों से सम्मानित किया गया है। भारत सरकार द्वारा ''पद्‌म विभूषण'', भारतीय–संगीत नाटक अकादमी पुरस्कार, मध्यप्रदेश का ''कालीदास पुरस्कार'' और सोवियत संघ द्वारा ''नेहरू फैलोशिप'' जैसे अनेक सम्मान शामिल हैं।

वर्ष 1968 में विन्ध्य संगीत समाज रीवा द्वारा आयोजित अखिल भारतीय संगीत समारोह में कथक नृत्य प्रस्तुत करते समय की पंडित बिरजू महाराज की यह कलात्मक फोटो सुविख्यात वरिष्ठ छायाकार श्री जगदीश कौशल द्वारा क्लिक किया गया है।

# शान्त घुंघरूओं की भावपूर्ण श्रृद्धांजलि

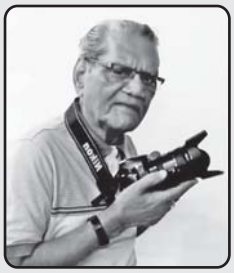

जगदीश कौशल

दिनांक 17.18 जनवरी 2022 की वह काली मध्य रात्रि जब भारतीय संगीत और कथक सम्राट रूपी सूर्य हमेशा हमेशा के लिए अस्त हो गया। विश्व विख्यात कथक नृत्य सम्राट पंडित बिरजू महाराज का निधन हो गया। यह दुखद समाचार सुनकर देश-विदेश का संगीत-नृत्य का सम्पूर्ण कलाजगत स्तब्ध रह गया। लखनऊ घराने की कथक नृत्य की ड्योडी सूनी हो गई, काल के कराल प्रकोप से अचानक ही उनके पैरों के घुंघरूओं की खनक और झंकार भी हमेशा के लिए शान्त हो गई

यह दुखद समाचार सुन मेरे हृदयपटल पर वर्ष 1968 के दिसम्बर माह में उनके साथ बिताए सुखद पलों की मधुर स्मृतियाँ चलचित्र की भाँति साकार रूप लेने लगी- अवसर था विन्ध्य संगीत समाज रीवा द्वारा आयोजित अखिल भारतीय संगीत समारोह मैं इस संस्था में प्रचार सचिव के पद पर था वाराणसी से सुविख्यात तबलावादक पंडित किशन महाराज और लखनऊ से सुप्रसिद्ध कथक नृतक पंडित बिरजू महाराज पधारे थे। उस समय पं0 बिरजू महाराज 30 वर्ष के प्रतिभाशाली युवा कथक नृतक थे। कृषि महाविद्यालय के रंगमंच पर इन दोनों महान कलाकारों द्वारा प्रस्तुत तबला और कथक नृत्य की जुगलबन्दी साकार रूप लेने लगी। जहाँ एक और तबला सम्राट पंडित किशन महाराज पूरी मस्ती में जिस गति, लय और ताल में तबला वादन करते तो दूसरी ओर उसी गति लय और ताल में बिरजू महाराज के पैरों की थपकी और घुघुरूओं की झन-झन झंकार के साथ हाथों की अंगुलियो की कलात्मक मुद्राओं नयनों की भावभंगिमाओं को देख सुनकर दर्शक दीर्घा से संगीत-नृत्य के अद्भुत संगम का आनंद लेते लोगों की करतल ध्वनि अद्भुत दृश्य था।

पंडित बिरजू महाराज के निधन से भारतीय कथक घराना मानो अनाथ हो गया है। आज ऐसा लग रहा है मानो वर्षों से उनके पाँवों की गति को उसी ताल-लय और रिदम में झंकृत करने वाले घुंघुरू भी हमेशा के लिए शान्त हो गए हैं और अपने आराध्यदेव को मौन श्रद्धांजलि दे रहें हैं। घुंघुरूओं के इस दारूण दुख में कला समय परिवार की सहभागी है। और कथक सम्राट पंडित बिरजू महाराज के श्री चरणों में सादर नमन करते हुए अपनी विनम्र श्रृद्धांजलि अर्पित करता है।

सम्पर्क : ई 3 / 320, अरेरा कालोनी, भोपाल

■

# मध्यप्रदेश की कला विभूतियों को पद्मश्री सम्मान

पद्मश्री सम्मान : श्री अर्जुन धुर्वे

पद्मश्री सम्मान : श्रीमती दुर्गा बाई व्याम

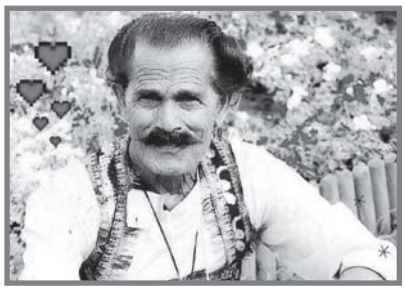

पद्मश्री सम्मान : श्री रामसहाय पांडेय

मध्यप्रदेश के कला जगत की तीन मौलिक विभूतियों को पद्मश्री सम्मान से अलंकृत किया गया है। बेड़िया समुदाय के राई नृत्य को विश्व स्तर पर ले जाने वाले एवं उसके संरक्षण के लिए आजीवन सक्रिय श्री राम सहाय पांडेय जी, वैगा जनजातीय नृत्य को ऊँचाई देने वाले श्री अर्जुन धुर्वे जी तथा गोंड पेंटिंग की प्रसिद्ध हस्ताक्षर श्रीमती दुर्गा बाई व्याम जी को सम्मानित किया गया।

# मध्यप्रदेश शासन के सम्मान

## राष्ट्रीय कबीर सम्मान से सम्मानित

2019 : डॉ. बिनय षडंगी राजाराम, भोपाल

2020 : मनोज श्रीवास्तव, भोपाल

## राष्ट्रीय शरद जोशी सम्मान से सम्मनित

2019 : कैलाश मण्डलेकर, खण्डवा

2020 : डॉ. विजय मनोहर तिवारी, भोपाल

# राज्य शिखर सम्मान से सम्मानित

2020 : पंडित सज्जनलान ब्रह्मभट्ट 'रसरंग', भोपाल

2020 : श्रीमती पूर्णिमा चतुर्वेदी, भोपाल

2019 : श्री देवीलाल पाटीदार, भोपाल

2019 : बाबूलाल भोला, सागर

2019 : श्रीमती अग्नेश केरकट्टा, जशपुर (छ.ग.)

2020 : के.जी. त्रिवेदी, भोपाल

2019 : श्री नईम कौसर, रायसेन

2020 : श्री मनीष पुष्कले, भोपाल

# संस्कृति पर्व - 5

## आजादी के अमृत महोत्सव का उत्सव

27 मार्च 2022 को कला समय संस्कृति, शिक्षा और समाज सेवा समिति और स्वराज संस्थान संचालनालय, मध्यप्रदेश शासन के सहयोग से दो सत्रों में संस्कृति पर्व-5 में वक्ताओं और श्रोताओं की खूब सहभागिता देखने को मिली। स्वतंत्रता संग्राम सेनानियो की चरण-रज प्रदर्शनी के दर्शन के लिए भारी तादाद में दर्शक आये। अपरान्ह 2.30 बजे से पहले सत्र में 'आज़ादी के आन्दोलन का कलाओं पर प्रभाव' विषय के अंतर्गत पंडित सज्जनलाल ब्रह्मभट्ट रसरंग, प्रो.लक्ष्मीनारायण भावसार, संजय मेहता, कैलाशचंद्र घनश्याम पाण्डेय जी ने संगीत, चित्रकारी, रंगमंच-फिल्म, अध्यात्म और साहित्य पर रोशनी डाली। अध्यक्षता अभिलाष खांडेकर, संचालन लक्ष्मीकांत जवणे, आभार ज्ञापन लक्ष्मीनारायण पयोधि ने किया। दूसरा सत्र 5.00 से संपन्न हुआ, मुख्य अतिथि मनोज श्रीवास्तव द्वारा 'कला समय पुराविद् शिखर सम्मान 2022' डॉ. नारायण व्यास, 'कला समय प्रतिबिम्ब शिखर सम्मान 2022' जगदीश कौशल, 'युवा स्वर-साधना कला समय सम्मान 2022' डॉ. दीप्ति गेड़ाम परमार विभूषित हुए। लक्ष्मीकांत जवणे की 'सोच का घनत्व', दीपक पंडित की 'मौन का संवाद', सुन्दरलाल प्रजापति की 'सुन्दरलाल प्रजापति की शायरी' लोकार्पित हुईं। डॉ.दीप्ति गेड़ाम परमार ने इन्हीं पुस्तकों की ग़ज़लों के सस्वर पाठ से समां बाँध दिया। आभार वक्तव्य भंवरलाल श्रीवास, संस्था कला समय सचिव ने दिया।

संस्कृति पर्व का विधिवत शुभारंभ

श्री मनोज श्रीवास्तव का स्वागत करते भँवरलाल श्रीवास

श्री कैलाश घनश्याम पाण्डेय का अध्यक्षीय उद्‌बोधन

श्री लक्ष्मीकान्त जवणे की प्रथम कृति 'सोच का घनत्व' का लोकार्पण

डॉ. दीप्ति गेड़ाम परमार द्वारा ग़ज़लों की संगीतमय प्रस्तुति

स्वराज सभागार में स्वतंत्रता आंदोलन में कलाओं पर राष्ट्रीय संगोष्ठी

श्री मनोज श्रीवास्तव जी को अपने छायाचित्रों की प्रदर्शनी का अवलोकन कराते श्री जगदीश कौशल

डॉ. नारायण व्यास द्वारा 75 स्वतंत्रता सौनानियों की जन्मस्थल चरण रज प्रदर्शनी का अवलोकन करते अभिलाष खांडे और संपादक भँवरलाल श्रीवास

डॉ. नारायण व्यास को कला समय पुराविद शिखर सम्मान प्रदान करते श्री मनोज श्रीवास्तव

श्री जगदीश कौशल को कला समय प्रतिबिंब शिखर सम्मान प्रदान करते श्री मनोज श्रीवास्तव

डॉ. दीप्ति गेड़ाम परमार को युवा स्वर साधना कला समय सम्मान प्रदान करते श्री मनोज श्रीवास्तव

राष्ट्रीय संगोष्ठी संस्कृति पर्व-5 के विद्वान अतिथि

आज़ादी का अमृत महोत्सव | मध्यप्रदेश शासन

नरेन्द्र मोदी, प्रधानमंत्री

# भारत सरकार की योजनाओं पर अमल में मध्यप्रदेश अग्रणी

शिवराज सिंह चौहान, मुख्यमंत्री

मध्यप्रदेश भारत सरकार की योजनाओं को साकार करने की दिशा में तेजी से कदम बढ़ा रहा है। खासतौर से पिछले डेढ़ दशक का अरसा इस बात का गवाह है, कि मध्यप्रदेश विकास के पथ पर अब आगे ही आगे है। सुविचारित सोच, सुचिंतित नीतियों, फैसलों और प्रेरणादायी नेतृत्व ने सरकार की नीति और नीयत के फर्क को मिटाकर सच्चे अर्थों में प्रदेश के विकास और लोगों की बेहतरी के कामों की तस्वीर में नये रंग भर दिये हैं। आज मध्यप्रदेश मुख्यमंत्री शिवराजसिंह चौहान के नेतृत्व में न केवल अपनी बल्कि भारत सरकार की भी लोक कल्याणकारी योजनाओं, कार्यक्रमों को कार्यान्वित करने की दिशा में अग्रणी बनकर उभरा है। मध्यप्रदेश की इन्हीं उपलब्धियों को देखकर प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने मध्यप्रदेश को भारत की अर्थ-व्यवस्था की ड्रायविंग फोर्स बनने की पूरी क्षमता वाला प्रदेश बताया है।

### दिव्यांगजन पहचान-पत्र

कुल **6 लाख 60 हजार** के लक्ष्य के विरूद्ध अब तक मध्यप्रदेश **6 लाख 63 हजार** कार्ड बना और जारी कर देश में दूसरे स्थान पर।

### प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना

योजना क्रियान्वयन में मध्यप्रदेश देश में प्रथम स्थान पर। अब तक **25 लाख 36 हजार 917** हितग्राहियों को लगभग 1 हजार 84 रुपए से अधिक की सहायता।

**आयुष्मान भारत योजना** — योजना के कार्ड जनरेशन में मध्यप्रदेश पूरे देश में प्रथम। अब तक बने **2 करोड़ 66 लाख 14 हजार** से अधिक कार्ड।

**प्रधानमंत्री स्व-निधि योजना** — भारत सरकार द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार **4 लाख 5 हजार** पथ-विक्रेताओं को शत-प्रतिशत ब्याजमुक्त ऋण देकर मध्यप्रदेश देश में अव्वल

## मनरेगा से रोजगार में मध्यप्रदेश देश में प्रथम

पिछले वित्त वर्ष में कोरोना काल में 1 करोड़ 6 लाख से अधिक जरूरतमंद लोगों को मनरेगा में रोज़गार दिलाकर मध्यप्रदेश, देश में अग्रणी रहा है। इस अवधि में मजदूरों के खातों में रिकॉर्ड 6 हजार करोड़ रुपए पहुँचाये गये। इस वित्त वर्ष में अभी तक 79 लाख 62 हजार श्रमिकों को रोजगार दिया जाकर 3 हजार 924 करोड़ रुपए से अधिक की राशि श्रमिकों के खातों में पहुँचाई गई है। इसके अलावा अनुसूचित जनजाति परिवारों को मनरेगा से रोज़गार दिलाने में भी मध्यप्रदेश, देश में पहले स्थान पर है। जनजातीय श्रमिकों द्वारा 6 करोड़ 89 लाख मानव दिवस सृजित किए जाकर उनके खातों में 1 हजार 203 करोड़ रूपए का भुगतान किया गया है। मनरेगा योजना में प्रारम्भ से अब तक 54 लाख 30 हजार स्थाई परिसंपतियों का सृजन कर मध्यप्रदेश, देश में चौथे स्थान पर है।

D-19614/21

## रामानुजाचार्य की 216 फीट ऊंची स्टैच्यू ऑफ इक्वालिटी, हैदराबाद

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक एवं स्वत्वाधिकारी भँवरलाल श्रीवास द्वारा गणेश ग्राफिक्स, 26 बी, देशबन्धु भवन, प्रेस कॉम्प्लेक्स, जोन-1, एम.पी. नगर, भोपाल, म.प्र. से मुद्रित एवं जे-191, मंगल भवन, ई-6, महावीर नगर, अरेरा कालोनी, भोपाल ( म.प्र. )- 462016 से प्रकाशित। संपादक - भँवरलाल श्रीवास